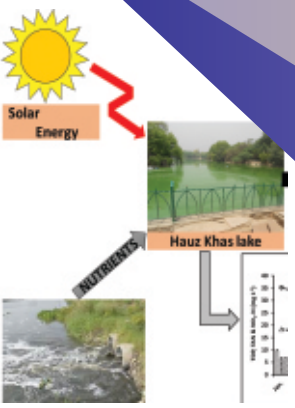
ISSN 2349-560X

अंक 35

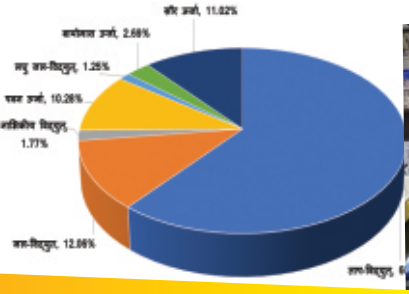
जिज्ञासा

वर्ष 2021

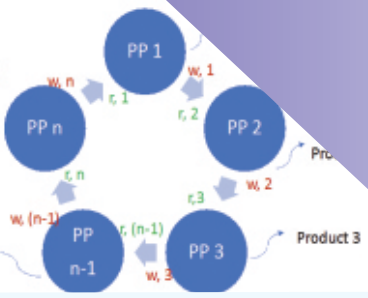












भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली

ISSN 2349-560X

जिज्ञासा

2021

विज्ञान पत्रिका

अंक 35

हिन्दी कक्ष

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली

ISSN 2349-560X

संरक्षक

प्रो. वी. रामगोपाल राव

निदेशक

एवं

अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति

संपादक

प्रो. संतोष सत्या एवं डॉ. नीरज चौरसिया

संपादन मंडल

प्रो. वीरेन्द्र कुमार विजय

श्री अभिजीत आनन्द
(शोध छात्र)

प्रो. संगीता कोहली

प्रो. सीमा शर्मा

अंक डिज़ाइन

श्रीमती इन्द्रमणि एवं श्री पी.डी. कुकरेती
(हिन्दी कक्ष, भा.प्रौ.सं. दिल्ली)

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली

ISSN 2349-560X

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली
INDIAN INSTITUTE OF TECHNOLOGY DELHI

हौज खास, नई दिल्ली–110 016
Hauz Khas, New Delhi - 110 016
Tel. : + 91-11-26582020, 26591701 (O)
Tel. : + 91-11-26582022, 26591801 (R)
Fax: +91-11-26582659 (O)
E-mail: director@admin.iitd.ac.in
rrao@iitd.ac.in

प्रो. वी. रामगोपाल राव, पीएच.डी.
निदेशक

Prof. V. Ramgopal Rao, Ph.D.
Fellow IEEE, FNAE, FASc, FNASc, FNA
Director



शुभकामना संदेश

'जिज्ञासा' विज्ञान पत्रिका (जर्नल) के 35वें अंक का अवलोकन करके एक सुखद अनुभूति हो रही है। मेरी ओर से इस वृहद् कार्य के लिये हार्दिक शुभकामनाऐं। संस्थान के विद्वत संकाय एवं शोधार्थियों और देश के अन्य वैज्ञानिक अपनी निपुणता के क्षेत्र में किये जा रहे अनुसंधान एवं विकास को हिन्दी भाषा के माध्यम से जन–साधारण तक पहुंचाकर राष्ट्र के विकास में अपना योगदान कर रहे हैं। मुझे अत्यंत प्रसन्नता है कि संस्थान का हिन्दी कक्ष अनवरत रूप से इसके 34 अंक प्रकाशित कर चुका है।

इस अंक में दो खण्ड़ों–'विज्ञान एवं तकनीकी' एवं 'ग्रामीण प्रौद्योगिकी' में प्रस्तुत शोध पत्र निश्चित रूप से उपयोगी रहेंगे, ऐसा विश्वास है। निःसंदेह इस प्रकार के शोधपत्र हिन्दी में लिखने के लिए लेखकगण को काफी परिश्रम करना पड़ा होगा, जो कि काफी प्रशंसनीय है। आशा है कि संस्थान द्वारा किया जा रहा यह कार्य उपर्युक्त दिशा में अधिक सार्थक कार्य होगा तथा विज्ञान व तकनीकी के क्षेत्र में राजभाषा हिंदी का गौरव बढ़ाने की दिशा में एक सशक्त कदम होगा।

सभी लेखक जिन्होंने इस अंक के प्रकाशन के लिए अपने शोध पत्र भेजे हैं वे सभी बधाई एवं प्रशंसा के पात्र हैं। मैं आशा करता हूँ कि यह सार्थक कार्य इस दिशा में गतिशीलता के साथ आगे बढ़ने का प्रेरणा स्रोत बनेगा।

रामगोपाल राव

(प्रो. वी. रामगोपाल राव)
निदेशक एवं संरक्षक

ISSN 2349-560X

नदी गीत

नदिया धीरे बहो...
कौन सुनेगा तेरी आह, नदिया धीरे बहो...
किसको है तेरी परवाह, नदिया धीरे बहो...।

सभ्यताएं जनमी तट तेरे, संस्कृतियां परवान चढ़ी
तेरे आंचल के साये में सारी दुनिया पली बढ़ी
आज किसे एहसास... हो ऽऽऽ
नदिया धीरे बहो...

इठलाने–बलखाने वाली अब बेबस हो बहती हो
कंचन काया वाली मईया काली–काली दिखती हो
बंध गये तेरी बांह... हो ऽऽऽ
नदिया धीरे बहो..

तेरे पूत, कपूत हो गये–भूल गये तेरा सम्मान
ढूंढ़न से भी कहां मिलेंगे, राजा भगीरथ, कान्हा, राम
किससे करोगी फरियाद... हो ऽऽऽ
नदिया धीरे बहो...

तेरा घुट–घुट ऐसे मरना रंग एक दिन लाएगा
पानी रहते हुए विश्व जब बेपानी हो जाएगा
देगा कौन पनाह.. हो ऽऽऽ
नदिया धीरे बहो...

–मुरारी शरण प्रसाद

ISSN 2349-560X



आभार

भाषा केवल सम्प्रेषण का माध्यम ही नहीं अपितु समाज का दर्पण है। जीवन शैली व संस्कृति की वाहक है। इसके लिए यह आवश्यक है कि राजभाषा हिन्दी को तकनीकी विषयों से जोड़ना होगा। जिज्ञासा विज्ञान पत्रिका (जर्नल) के 35वें अंक में दो खण्ड हैं–'विज्ञान एवं तकनीकी' तथा 'ग्रामीण प्रौद्योगिकी' जिसमें 18 शोध पत्र शामिल हैं। विज्ञान व प्रौद्योगिकी खण्ड में–Fe/HZSM उत्प्रेरक का उपयोग, बायोफ्यूल उत्पादन में ओलिएजिनस यीस्ट की भूमिका, सीमेंट कंक्रीट सड़कों के रखरखाव की उन्नत तकनीकें, कोविड संकट की पृष्ठभूमि में एक नए समन्वयकारी चिकित्सा पद्धति की खोज, भारत में ब्लैक फंगस पर प्रकाशित शोध पत्रों का विश्लेषण आदि है।

इस अंक के द्वितीय खण्ड–'ग्रामीण प्रौद्योगिकी' मे स्व. प्रो. ऋषिराज गौड़ एवं स्व. प्रो. राजेन्द्र प्रसाद जिनका कोरोना महामारी से असमय निधन हुआ, उनको समर्पित करते हुए, उनकी दूरदृष्टि (Vision) व विचारों को अभिव्यक्त किया है। यह कार्य प्रो. संतोष सत्या व CRDT के संकाय व शोधार्थियों के विशेष प्रयासों से ही संभव हो सका। इस खण्ड में प्रस्तुत शोध पत्र जैसे–विवेक सम्मत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी; नई शिक्षा नीति के अनुसार तकनीकी शिक्षा में बदलाव की आवश्यकता; सस्टेनिबिलिटी मॉडल की खोज में प्रयास तथा जजमानी व्यवस्था में सस्टेनिबिलिटी का स्वरूप; भारत की ऊर्जा सुरक्षा; अवायवीय सह–पाचन द्वारा रसोई के अपशिष्ट पदार्थों व सूक्ष्म शैवाल आधारित बायोगैस उत्पादन; कार्बोफूरान कीटनाशक का जैविक विघटन, जीवामृता से औषधीय पौधों की खेती आदि के लेखकगण आप दोनों महानुभावों के प्रति हृदय से आभारी हैं। जिज्ञासा के अगले अंक में एक खंड स्व. प्रो. के. सी. अय्यर एवं स्व. प्रो. दिनेश मोहन (कोरोना से असमय निधन) को समर्पित करने का मन में भाव है।

सभी लेखकगण (संकाय सदस्य, वैज्ञानिक/टैक्नोलोजिस्ट, शोधार्थी) ने अत्यंत मेहनत व सहयोगी भावना से कार्य करके इस कार्य को समय पर संपन्न कराया। उन सभी के प्रति मैं हृदय से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूं। हिन्दी कक्ष के सदस्यों का समर्पित भाव तथा अपार सहयोगी भावना से ही इस अंक का प्रकाशन सम्भव हो सका। प्रकाशन कार्य में श्री पी.डी. कुकरेती का विशेष योगदान, श्रीमती इन्द्रमणि, श्रीमती राजेश कुमारी व श्रीमती सुनीता जी का विभिन्न रूपों में भरपूर सहयोग मिला।

ऊर्जामय वातावरण में भरपूर प्रशासनिक सहयोग, संकाय व शोध विद्यार्थियों की भागीदारी से 'हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य' तैयार करने की गतिशीलता बनी रही। 'निंसदेह' विज्ञान जर्नल का यह अंक अपने संस्थान के साथ–साथ अन्य संस्थानों के शोध विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करके हिन्दी में लेखन को उभारने के लिये सहायक रहेगा। यह कार्य निश्चित रूप से संतुष्टिदायक है।

–डॉ. नीरज चौरसिया
अध्यक्ष, हिन्दी कक्ष

जन–जन की भाषा है हिंदी

जन–जन की भाषा है हिंदी
भारत की आशा है हिंदी
जिसने पूरे देश को जोड़े रखा है
वो मजबूत धागा हैं हिंदी .....

हिन्दुस्तान की गौरव गाथा है हिंदी
एकता की अनुपम परम्परा है हिंदी
जिसके बिना हिन्द थम जाए
ऐसी जीवनरेखा है हिंदी .....

जिसने काल को जीत लिया है
ऐसी कालजयी भाषा है हिंदी
सरल शब्दों में कहा जाए तो
जीवन की परिभाषा है हिंदी.....

–श्री अभिषेक मिश्र

ISSN 2349-560X

जिज्ञासा

2021

विज्ञान पत्रिका

अंक 35

क्र. सं.	लेख का शीर्षक	पृष्ठ सं.

खण्ड–I विज्ञान एवं तकनीकी

1. **Fe/HZSM–5 उत्प्रेरक का उपयोग करके Bottom-up विधि में Two-step क्रैकिंग रूट के माध्यम से अपशिष्ट प्लास्टिक से तरल ईंधन उत्पादन** 1–7
   – *उमा द्विवेदी, प्रो. एस.एन. नाइक, एवं प्रो. के.के. पंत*

2. **बायोफ्यूल उत्पादन में ओलिएजिनस यीस्ट की भूमिका** 8–12
   – *डॉ. शिवानी चतुर्वेदी, डॉ. प्रशांत कुमार राउत एवं प्रो. सुनील कुमार खरे*

3. **सीमेंट कंक्रीट सड़कों के रखरखाव की उन्नत तकनीकें** 13–18
   – *डॉ संगीता, डॉ. बी.आर.जी. रॉबर्ट एवं श्री अशोक कुमार*

4. **कृषि में क्रांति के लिए स्मार्ट पादप सुरक्षा तकनीकों की आवश्यकता** 19–22
   – *डॉ. मीनू गुप्ता, डॉ. अमित विक्रम, डॉ. अरूणेश कुमार, डॉ. शालिनी वर्मा एवं डॉ. मनीषा कौशल*

5. **कोविड संकट की पृष्ठभूमि में एक नए समन्वयकारी चिकित्सा पद्धति की खोज** 23–29
   – *श्री संजय चौधरी*

6. **दैनिक जीवन में कोड मिक्सिंग– एक समीक्षा (हिन्दी व अंग्रेजी भाषा की कोड मिक्सिंग)** 30–34
   – *सुश्री अरूणा घवाना*

7. **भारत में ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का विश्लेषण** 35–47
   – डॉ. नीरज चौरसिया

खण्ड-II ग्रामीण प्रौद्योगिकी

1. **विवेक सम्मत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अवधारणा** 55–58
   – *प्रो. सन्तोष सत्या एवं प्रो. ऋषिराज गौड़*

2. **नई शिक्षा नीति के अनुसार तकनीकी शिक्षा में बदलाव की आवश्यकता** 59–61
   – *प्रो. वीरेंद्र कुमार विजय, स्व. प्रो. राजेन्द्र प्रसाद, एवं मनीष कुमार*

3. **नई शिक्षा नीति के संदर्भ में राष्ट्र के पुनरुत्थान की नींव** 62–63
   (नई शिक्षा नीति के संबंध में)
   – *श्री अतुल कोठारी*

4. **सस्टेनिबिलिटी मॉडल की खोज में कुछ प्रयास (क्षेत्रीय एवं वैश्विक अध्ययन)** 64–69
   – *डॉ. गोपाल बाबू, डॉ. हर्ष सत्या, स्व. प्रो. ऋषिराज गौड़ एवं प्रो. सन्तोष सत्या*

5. **जजमानी व्यवस्था में सस्टेनिबिलिटी का स्वरूप** 70–73
– डॉ. हर्ष सत्या, डॉ. गोपाल बाबू, स्व. प्रो. नवज्योति सिंह एवं प्रो. राजीव सांगल

6. **भारत की ऊर्जा सुरक्षाः वर्तमान परिदृष्य, चुनौतियाँ और संभावनाएं (एक समीक्षा)** 74–85
– अभिजीत आनन्द एवं प्रो. प्रियंका कौशल

7. **अवायवीय सह–पाचन (Anaerobic digestion) के द्वारा मवेशियों के गोबर व तालाब के अपशिष्ट शैवाल से बायोगैस का उत्पादन** 86–92
– डॉ. पुष्पेन्द्र कुमार, डॉ. अर्घ्य भट्टाचार्य, डॉ. संजीव कुमार प्रजापति, प्रो. अनुश्री मलिक, एवं प्रो. वीरेन्द्र कुमार विजय

8. **रसोई के अपशिष्ट पदार्थों से पायलट स्केल पर बायोगैस उत्पादन की विधियों का विकास** 93–98
– आद्या ईशा, सुबोध कुमार, डॉ. भास्कर झा, प्रो. पी.एम.वी. सुब्बाराव, प्रो. राम चंद्र एवं प्रो. वीरेंद्र कुमार विजय

9. **ग्राम ऊर्जा स्वराज : स्थानीय ऊर्जा संसाधनों के माध्यम से गाँवो की ऊर्जा आवश्यकता की निर्बाध आपूर्ति का मॉडल** 99–102
– डॉ. वन्दित विजय, प्रो. रामचंद्र एवं प्रो. पी.एम.वी. सुब्बाराव

10. **कार्बोफुरान दूषित मिट्टी के उपचार के लिए संभावित उपकरण के रूप में राइजोस्फेरिक सूक्ष्मजीव–एक अवलोकन** 103–111
– मोहम्मद आमिर खान, डॉ. अभिषेक शर्मा एवं प्रो. सत्यवती शर्मा

11. **औषधीय पौधों (Centella asiatica) के उन्नत उत्पादन और खेत की मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार के लिए जीवामृता का अनुप्रयोगः (एक क्षेत्रीय अध्ययन)** 112–118
– दुराइवाडीवेल पी., भानी कोंगखम, प्रो. हरिप्रसाद पी. एवं प्रो. संतोष सत्या

खण्ड–I विज्ञान एवं तकनीकी

तन समर्पित, मन समर्पित

मन समर्पित, तन समर्पित और यह जीवन समर्पित
चाहता हूँ देश की धरती तुझे कुछ और भी दूं....

माँ तुम्हारा ऋण बहुत है, मैं अकिंचन
किन्तु इतना कर रहा फिर भी निवेदन
थाल में लाऊँ सजा कर भाल जब भी
कर दया स्वीकार लेना वह समर्पण
गान अर्पित, प्राण अर्पित
रक्त का कण कण समर्पित
चाहता हूँ देश की धरती तुझे कुछ और भी दूं....

मांज दो तलवार, लाओ न देरी
बाँध दो कस कर कमर पर ढाल मेरी
भाल पर मल दो चरण की धूल थोड़ी
शीश पर आशीष की छाया घनेरी
स्वप्न अर्पित, प्रश्न अर्पित
आयु का क्षण क्षण समर्पित
चाहता हूँ देश की धरती तुझे कुछ और भी दूं....

तोड़ता हूँ मोह का बन्धन, क्षमा दो
गांव मेरे, द्वारा, घर, आंगन क्षमा दो
आज सीधे हाथ में तलवार दे दो
और बायें हाथ में ध्वज को थमा दो
यह सुमन लो, यह चमन लो
नीड़ का ऋण ऋण समर्पित
चाहता हूँ देश की धरती तुझे कुछ और भी दूं....

—श्री रामअवतार त्यागी

Fe/HZSM–5 उत्प्रेरक का उपयोग करके Bottom-up विधि में Two-step क्रैकिंग रूट के माध्यम से अपशिष्ट प्लास्टिक से तरल ईंधन उत्पादन

उमा द्विवेदी[1*], प्रो. एस.एन. नायक[1] एवं प्रो. के.के. पंत[2]
[1]ग्रामीण विकास एवं प्रौद्योगिकी केन्द्र,
[2]रासायनिक इंजीनियरी विभाग,
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली, नई दिल्ली
*ई–मेलः umadwivedi2112@gmail.com

सारांश

वर्तमान अध्ययन में, अपशिष्ट प्लास्टिक से दो चरण bottom-up क्रैकिंग विधि के माध्यम से उच्च गुणवत्ता वाले तरल ईंधन का उत्पादन किया गया है। प्लास्टिक फीड अनुपात (1:30) के लिए न्यूनतम उत्प्रेरक के साथ अपेक्षाकृत कम तापमान (350ºC) पर किए गए थर्मल और उत्प्रेरक क्रैकिंग में प्राप्त तरल उत्पादों के तुलनात्मक विश्लेषण का अध्ययन किया गया है। Two-step bottom-up रूट के माध्यम से उत्प्रेरक क्रैकिंग, थर्मल क्रैकिंग की तुलना में ईंधन रेंज के हाइड्रोकार्बन का उच्च अंश प्रदान करता है। उत्प्रेरक क्रैकिंग में दो अलग–अलग उत्प्रेरकों का उपयोग किया जाता है। HZSM–5 और 5% Fe/HZSM-5 zeolite के द्वारा प्लास्टिक पदार्थ को ईंधन श्रेणी में परिवर्तित कर सकते हैं। प्राप्त परिणाम इस बात की पुष्टि करते हैं कि उत्प्रेरक क्रैकिंग के माध्यम से प्राप्त तरल उत्पाद में ईंधन श्रेणी के हाइड्रोकार्बन (C6-C20) का उच्च अंश होता है; 5% Fe/HZSM-5 के लिए 66% और HZSM-5 के लिए 47% जो कि थर्मल क्रैकिंग (27%) के माध्यम से प्राप्त तुलनात्मक रूप से अधिक है। उत्प्रेरक के भौतिक रासायनिक गुणों का अध्ययन XRD, BET, FE-SEM, HR-TEM और H2-TPR तकनीकों द्वारा किया जाता है, और प्रक्रिया परिणामों के साथ सहसंबद्ध किया जाता है।

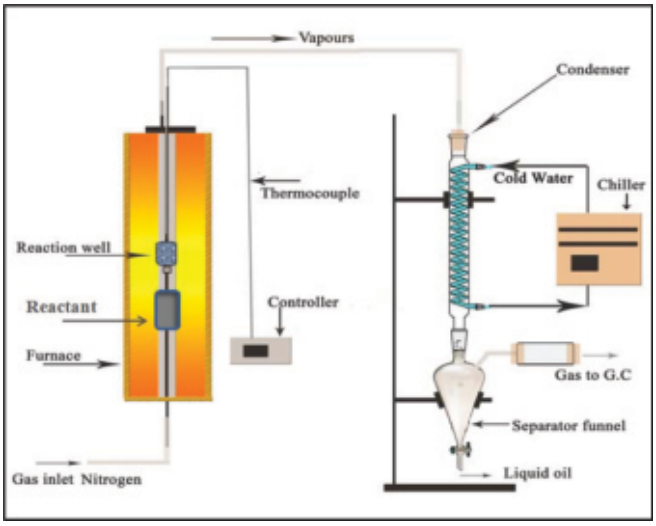
1. प्रस्तावना

विश्व स्तर पर, प्लास्टिक का उत्पादन 1950 से 2019 तक 2 मिलियन टन से बढ़कर 390 मिलियन टन हो गया है। [1] प्लास्टिक की मांग पिछले 20 वर्षों में 5% प्रति वर्ष की दर से बढ़ी है, जिससे प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन और इसके निपटान से संबंधित कई समस्याएं पैदा हुई हैं [2, 3] क्योंकि प्लास्टिक एक गैर–बायोडिग्रेडेबल पदार्थ है जो स्वाभाविक रूप से विघटित नहीं होता है [4, 5]। LDPE, LLDPE, HDPE, PP, PET, और PVC प्लास्टिक कचरे के प्रमुख घटक हैं जिनका व्यापक रूप से उपयोग कैरी–बैग, बोतलें, पाइपिंग, फिल्म और इंसुलेशन जैसे विभिन्न प्रकार के सामान्य उत्पादों के निर्माण में किया जाता है [6, 7, 8,]। हालांकि, प्लास्टिक हाइड्रोकार्बन का एक प्रभावी स्रोत है और विभिन्न उपचारों और पुनर्चक्रण मार्गों के माध्यम से कमोडिटी रसायनों के साथ–साथ ऊर्जा उत्पादन के लिए एक संभावित कच्चे माल के रूप में काम कर सकता है [4, 9, 10, 11]।

अपशिष्ट प्लास्टिक का भस्मीकरण भी एक अन्य प्रभावी मार्ग है जिसके परिणामस्वरूप प्लास्टिक कचरे से उच्च कैलोरी मान वाले गैसीय हाइड्रोकार्बन उत्पाद प्राप्त होते हैं [12, 13]। इन प्रक्रियाओं के अलावा, प्लास्टिक का द्रवीकरण प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन के लिए एक कुशल मार्ग के रूप में कार्य करता है और महंगे ईंधन संसाधनों की भरपाई करके ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उत्तरदायी है [4]। पायरोलिसिस या थर्मल क्रैकिंग के द्वारा प्लास्टिक कचरे को सीधे उच्च तापमान रेंज (> 400 ºC) पर मूल्य वर्धित हाइड्रोकार्बन में परिवर्तित किया जाता है [14]। मुख्य रूप से, प्लास्टिक के थर्मल क्रैकिंग से ठोस मोम, तरल और गैसीय हाइड्रोकार्बन का मिश्रण प्राप्त होता है। थर्मल क्रैकिंग में उत्पाद वितरण को उपयुक्त उत्प्रेरक पदार्थ मिलाकर नियंत्रित किया जाता है जिसके परिणामस्वरूप

सारांश

वर्तमान अध्ययन में, अपशिष्ट प्लास्टिक से दो चरण bottom-up क्रैकिंग विधि के माध्यम से उच्च गुणवत्ता वाले तरल ईंधन का उत्पादन किया गया है। प्लास्टिक फीड अनुपात (1:30) के लिए न्यूनतम उत्प्रेरक के साथ अपेक्षाकृत



चित्र–1: प्लास्टिक क्रैकिंग के लिए प्रायोगिक सेट–अप

2. सामग्री और विधियाँ

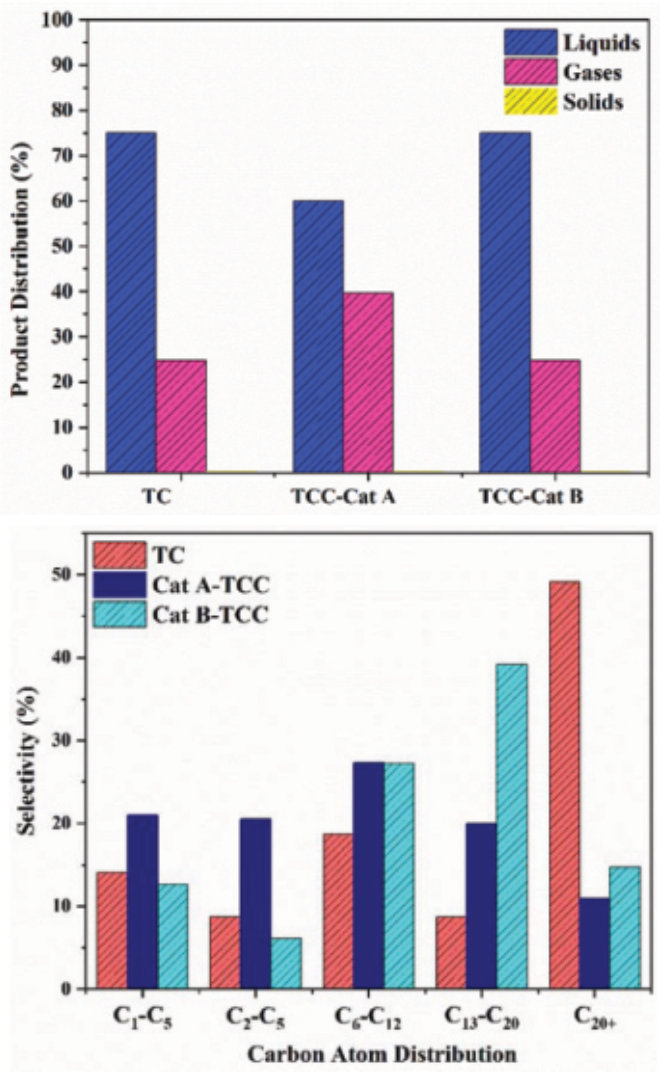
2.1 सामग्री

LDPE, HDPE और PP जो नगरपालिका प्लास्टिक कचरे के प्रमुख घटक हैं, स्थानीय बाजारों, नई दिल्ली, से खरीदे गए हैं। पॉलिमर में 5 mm आकार और MFI (Melt flow index) के कण 1–7 g/10 min–1 रेंज में 0.93–0.95 g/cc के बीच बड़ा घनत्व (bulk density) के साथ शामिल थे। Zeolite पदार्थ HZSM-5 जिसमें SiO2/Al2O3 (SAR)=30 है, को सूड–कि.मी. लिमिटेड, भारत से खरीदा गया है। Fe2(NO3)2-9H2O (Merck, ≥ 99%) का उपयोग 5% Fe/HZSM-5 उत्प्रेरक तैयार करने के लिए Fe स्रोत के रूप में किया गया है।

3. परिणाम और चर्चा

3.1. प्रक्रिया परीक्षण और उत्पाद विश्लेषण

प्लास्टिक क्रैकिंग के लिए उत्प्रेरक प्रक्रिया परीक्षण two–step रिएक्टर सेट–अप में किया गया है जैसा कि चित्र–1 में दिखाया गया है। तुलनात्मक अध्ययन के लिए उत्प्रेरक की अनुपस्थिति में प्लास्टिक फीड की थर्मल क्रैकिंग की जाती है। 350°C पर थर्मल और थर्मो–उत्प्रेरक मार्ग के माध्यम से प्लास्टिक क्रैकिंग के बाद प्राप्त गैस–तरल उत्पाद वितरण और संबंधित कार्बन संख्या चयनात्मकता क्रमशः चित्र 2 (a), (b) में दिखाई गई है।



चित्र–2(a) उत्पाद वितरण और (b) TC, Cat A-TCC और Cat B-TCC में प्राप्त कार्बन परमाणु वितरण

चित्र–2(a) में, यह ध्यान देने योग्य है कि प्लास्टिक फीड (LDPE, HDPE और PP) का गैस–तरल उत्पाद में 100% रूपांतरण दोनों क्रैकिंग तरीकों में नगण्य ठोस अवशेषों (0-20%) के साथ हासिल किया गया है। गैस–तरल उत्पाद विश्लेषण से, यह देखा गया है कि प्लास्टिक फीड के थर्मल क्रैकिंग के परिणामस्वरूप 75% तरल और 25% गैसीय अंश होता है जबकि थर्मो–उत्प्रेरक क्रैकिंग में Cat A और Cat B के अनुरूप गैस और तरल अंश में मामूली भिन्नता दिखाई देती है, जैसा कि चित्र 2(a) में दिखाया गया है। थर्मो–उत्प्रेरक क्रैकिंग (TCC) में, 40% गैसीय और 60% तरल अंश Cat A (HZSM-5) के साथ प्राप्त किया जाता है, जबकि 24% गैसीय और 76% तरल अंश Cat B (5%Fe) के साथ प्राप्त किया जाता है। प्लास्टिक फीड के थर्मल क्रैकिंग के परिणामस्वरूप हाइड्रोकार्बन की C20 रेंज के प्रति उच्च चयनात्मकता (45%) होती है जैसा कि चित्र–2(b) में देखा जा सकता है। चित्र 2(b) में, यह भी ध्यान देने योग्य है कि पैराफिनिक (C1-C5) और ओलेफिनिक (C2-C5) कार्बन परमाणुओं की चयनात्मकता Cat A के साथ तुलनात्मक रूप से अधिक है जो चित्र 2 में दिखाए गए गैस–तरल उत्पाद वितरण का समर्थन करती है। परिणामों में, Cat B और C13-C20 कार्बन परमाणुओं के प्रति उच्च चयनात्मकता प्रदान करता है जो वाणिज्यिक डीजल ईंधन की हाइड्रोकार्बन रेंज से मेल खाती है। [15, 16]

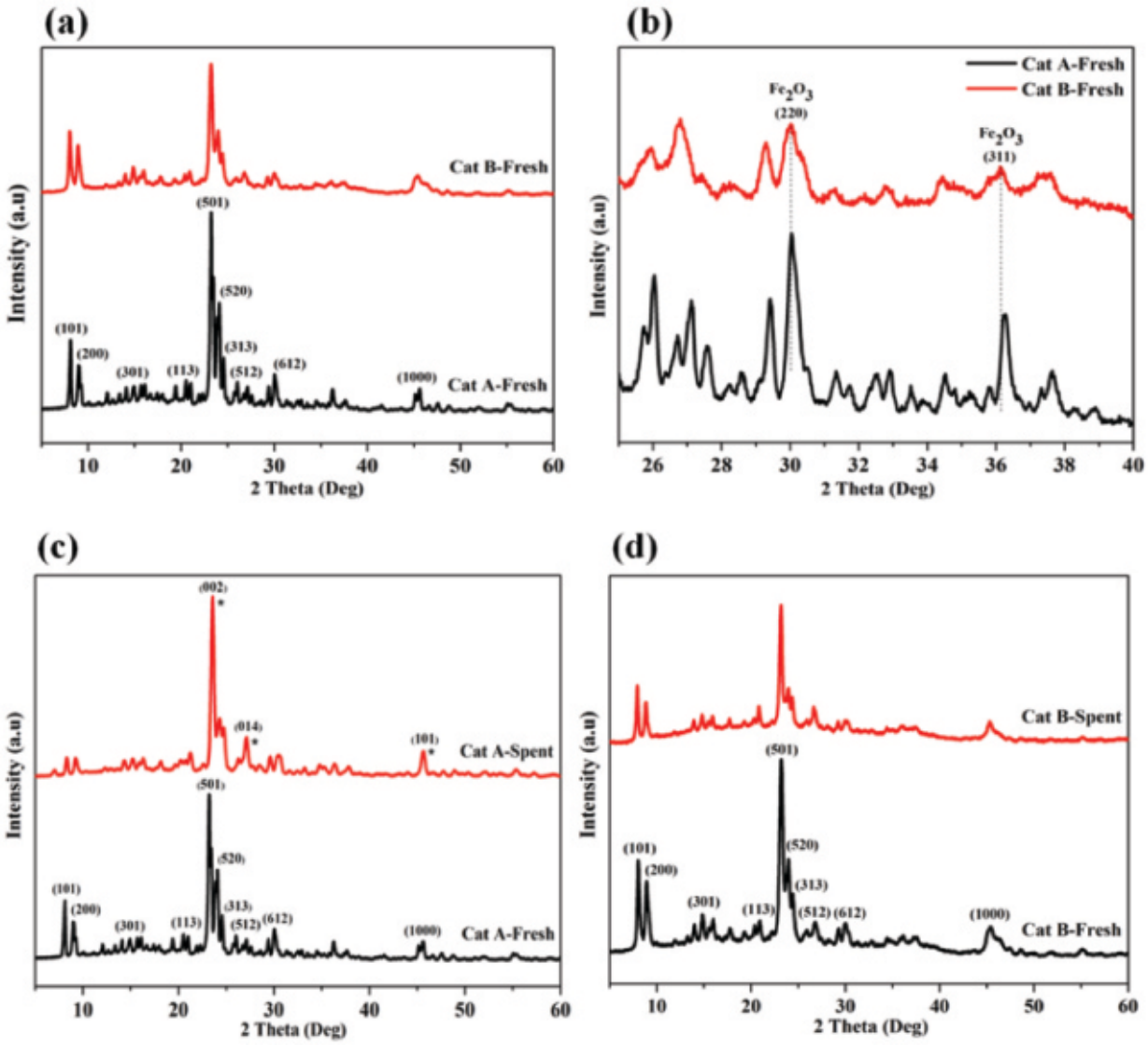
तरल उत्पाद में कार्बन पदार्थ वाणिज्यिक डीजल ईंधन के समान (80–85%) पाया गया है। तालिका–1 में, यह देखा जा सकता है कि थर्मो–उत्प्रेरक क्रैकिंग (Cat A के लिए 5–80 और Cat B के लिए 5–95) के माध्यम से प्राप्त तरल उत्पादों का सी/एच अनुपात वाणिज्यिक डीजल ईंधन (5–79) के C/H अनुपात के साथ तुलनीय है। यह TCC में प्राप्त तरल उत्पादों की ईंधन विशेषताओं की पुष्टि करता है [16]। ईंधन रेंज हाइड्रोकार्बन की जलने की क्षमता के आधार पर TCC–तरल उत्पादों का ताप मूल्य 44–11 और 45–18 MJ/kg पाया जाता है जो तालिका–1 में सूचीबद्ध वाणिज्यिक ईंधन (डीजल–45-50 MJ/kg) के कैलोरी मान के समान है और इस प्रकार प्राप्त तरल उत्पादों के ईंधन गुणों का दृढ़ता से समर्थन करता है [15]।

3.2 उत्प्रेरक लक्षण

Reaction से पहले और उपभोग किए गए उत्प्रेरक के क्रिस्टलीय चरण की जांच करने के लिए, Cat A और Cat B के XRD पैटर्न दर्ज किए गए हैं और चित्र–3 में दिखाए गए हैं। चित्र–3 में, यह देखा जा सकता है कि HZSM-5(Cat A) की special peak-unreacted कैलक्लाइंड Fe/HZSM-5 (Cat B-Fresh) के विवर्तन पैटर्न में मौजूद हैं जो इंगित करता है कि Fe/HZSM-5 की रूपरेखा संरचना को प्रभावित नहीं करता है और इसकी अखंडता को बरकरार रखता है।

तालिका–1: TC, Cat A-TCC, Cat B-TCC और वाणिज्यिक डीजल में प्राप्त तरल उत्पादों का मौलिक विश्लेषण और ताप मूल्य

Products	C [%]	H [%]	N [%]	C/H ratio	Calorific value (MJ/kg)
Liquid (TC)	84.36	13.02	0.01	6.47	43.96
Liquid (Cat A-TCC)	82.23	14.17	0.28	5.80	44.11
Liquid (Cat B-TCC)	82.24	13.81	0.02	5.95	45.18
Commercial Diesel Fuel	82.65	14.27	0.15	5.79	45.50



चित्र–3 : XRD पैटर्न (a) Fresh Cat A और Cat B, (b) 2 थीटा 25-40° के लिए (a) विस्तारित दृश्य, (ब) Fresh और spent Cat A और (क) Fresh और spent Cat B

आयरन ऑक्साइड चरण HZSM-5 सतहों पर फैले Fe2O3 (220) और Fe2O3 (311) को HZSM-5 के जटिल विवर्तन पैटर्न के कारण पहचाना जाना मुश्किल है।

चित्र–3(b) में, Fe2O3 (220) के विवर्तन शिखर ~ 30-02° और Fe2O3 (311) ~ 36-13° पर क्रमशः ~ 30-2° और ~ 36-4° पर HZSM-5 की विवर्तन चोटियों के साथ ओवरलैप होते हैं। इसके अलावा, Cat B-Fresh के XRD पैटर्न में शिखर संगत Fe2O3 चरण की अनुपस्थिति HZSM-5 क्रिस्टल पर आयरन ऑक्साइड कण के प्रभावी फैलाव की पुष्टि करती है। चित्र–3 (c), (d) Fresh और Spent किए गए उत्प्रेरक के XRD पैटर्न के बीच तुलना दिखाता है कि दोनों उत्प्रेरक प्रक्रिया परीक्षण के बाद अपनी संरचनात्मक अखंडता बनाए रखते हैं और इस प्रकार अगले चक्र के लिए किसी भी उपचार के बिना पुनः उपयोग किया जा सकता है। चित्र–3 (c) में, XDR planes (002), (014) और (101) 2 थीटा मानों के 23-61° 27-08° और 45-63° पर Cat

A&Spent के XRD पैटर्न में जमा कार्बनयुक्त प्रजातियों के अनुरूप हैं [12]।

MP-AES तकनीक का उपयोग करके Fresh और Spent किए गए Cat B में Fe मात्रा का विश्लेषण किया गया है और तालिका–2 में दिखाया गया है। MP-AES परिणाम पुष्टि करते हैं कि 5 wt-% Fe की मात्रा बिना किसी नुकसान के अंतिम कैलक्लाइंड उत्प्रेरक में लगभग समान है। बीटा सतह क्षेत्र और उत्प्रेरकों की छिद्र मात्रा का भी विश्लेषण किया गया है। जिओलाइट उत्प्रेरक की सतह क्षेत्र और छिद्र मात्रा बहुलक क्रैकिंग क्रियाओं [4] में हाइड्रोकार्बन संरचना को महत्वपूर्ण रूप से नियंत्रित करती है। BET सतह क्षेत्र (SBET), माइक्रोपोर सतह क्षेत्र (Smicro), बाहरी सतह क्षेत्र (Sext) और माइक्रोपोर वॉल्यूम (Vmicro) को सभी Fresh और Spent किए गए उत्प्रेरकों के लिए तालिका–2 में सूचीबद्ध किया गया है।

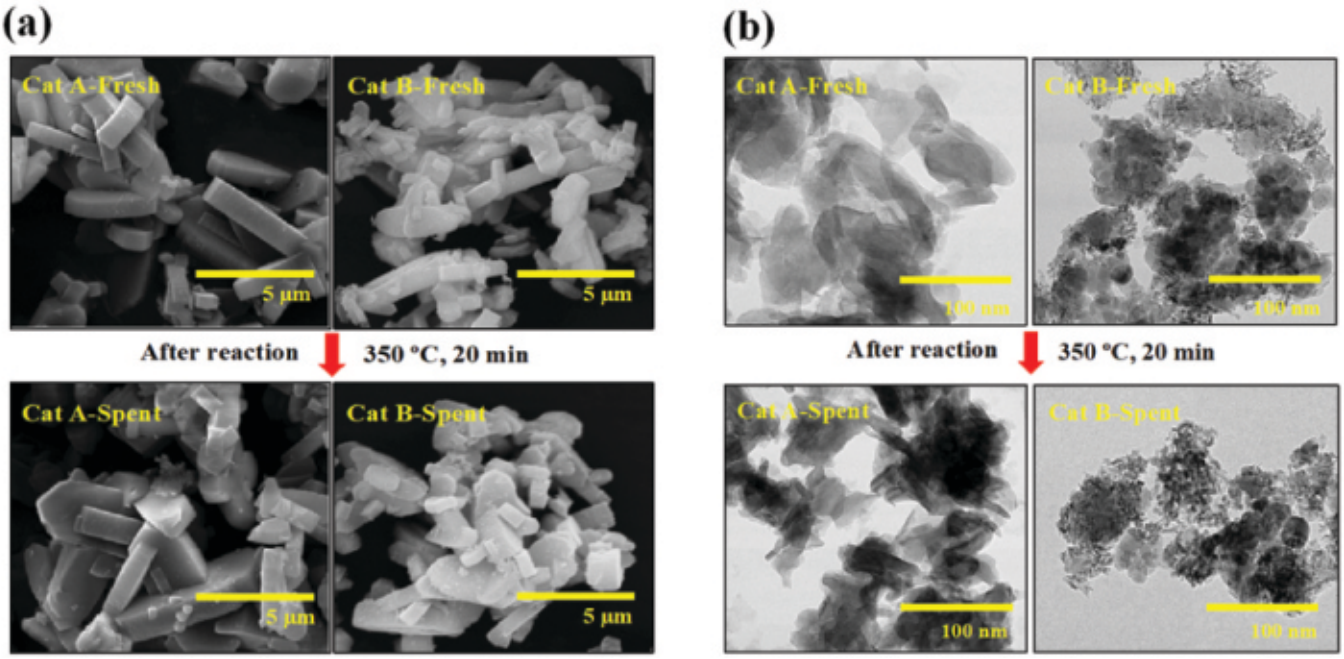
तलिका–2 में, यह देखा गया है कि Cat A (HZSM-5) की तुलना में Cat B, SBET और Vmicro में कमी दर्शाता है जो कि HZSM-5 पर 5 wt-% Fe लोड होने के कारण है [12]। Cat B (तालिका–2) के स्माइक्रो की तुलना में बाहरी सतह क्षेत्र (Sext) को Fe जोड़ पर दृढ़ता से प्रभावित देखा गया है जो इंगित करता है कि अधिकांश Fe Species Cat A (चित्र–4 (a), (b)) की तुलना में Cat B की उच्च प्रक्रिया के रूप में बाहरी सतह पर और आसानी से क्रैकिंग क्रियाओं पर बने रहते हैं। तालिका–2 में यह ध्यान देने योग्य है कि Cat A का परिणाम SBET (365 से 101 m2/g) और Vmicro (0-17 से 0-06 cm3/g) मे a SBET (290 से 151 m2/g) और Vmicro (0–12 से 0–08 cm3/g) की तुलना में अधिक भिन्नता है। इन परिणामों से पता चलता है कि Cat A, Cat B की तुलना में उच्च कोक सामग्री दिखाता है जो बनावट गुणों और इसलिए उत्प्रेरक प्रक्रिया को प्रभावित करता है।

Cat A और Cat B की सतह आकारिकी की जांच FE-SEM विश्लेषण का उपयोग करके की जाती है और देखी गई छवियों को चित्र–4 (a) में दिखाया गया है। चित्र–4 (a) से, यह देखा गया है कि Cat A के कण एक समान आकार (5 m) के छोटे हेक्सागोनल क्रिस्टल से बने होते हैं और एक सजातीय संरचना की पुष्टि करते हैं चित्र–4 (a) में, यह देखा जा सकता है कि ताजा Cat B की सतह आंशिक रूप से छोटे FeOx कणों से ढकी हुई है जो बरकरार क्रिस्टलीय चरण के साथ समान फैलाव दिखाती है [14]।

Fresh Cat B पर FeOx कणों के वितरण का भी HR-TEM विश्लेषण का उपयोग करके अध्ययन किया जाता है। Fresh और spent किए गए उत्प्रेरक के देखे गए टीईएम चित्र, चित्र–4 (b) में दिखाए गए हैं। 4-5 (चित्र–4(a)) के आयाम के साथ Cat A और Cat B की समेकित आकृति विज्ञान हेक्सागोनल शीट से बना है जैसा कि टीईएम माइक्रोग्राफ (चित्र–4 (b)) में दिखाया गया है [16]। यह देखा गया है कि

तलिका–2 : Fresh और Spent किए गए उत्प्रेरक (CAT A और CAT B) के भौतिक रासायनिक गुण

Catalysts	S_{BET} (m^2/g)	S_{micro} (m^2/g)	S_{ext} (m^2/g)	V_{micro} (cm^3/g)	Fe content (wt.%)
Cat A (Fresh)	365	240	125	0.17	-
Cat B (Fresh)	290	265	24	0.12	4.8
Cat A (Spent)	101	82	19	0.06	-
Cat B (Spent)	151	112	39	0.08	4.6



चित्र–4: (a) FE-SEM और (b) HR-TEM छवियां Fresh और Spent (Cat A और Cat B)

FeOx के कण सुई के आकार के आयरन ऑक्साइड प्रजातियों के रूप में HZSM-5 क्रिस्टल (Cat A) पर अत्यधिक बिखरे हुए हैं [15] पहले के अध्ययनों में इसी तरह के निष्कर्ष बताए गए हैं [16]।

निष्कर्ष

अपशिष्ट प्लास्टिक (LDPE, HDPE और PP का मिश्रण) के two– step उत्प्रेरक क्रैकिंग के परिणामस्वरूप अपेक्षाकृत कम तापमान (350°C) पर प्लास्टिक फीड अनुपात (1:30) के लिए न्यूनतम उत्प्रेरक के साथ उच्च गुणवत्ता वाले तरल हाइड्रोकार्बन होते हैं। अध्ययन में, दो अलग–अलग उत्प्रेरक (Cat A और Cat B) का परीक्षण अलग–अलग तरल उत्पादन देने वाले पॉलिमर क्रैकिंग के लिए किया गया है। Cat A के लिए 60 wt.% और Cat B के लिए 76 wt.% के साथ उच्च तरल उत्पादन और ईंधन हाइड्रोकार्बन के बढ़े हुए अंश को संशोधित सतह अम्लता, ट्यून किए गए बनावट गुणों और Fe2O3 प्रजातियों के कारण डिहाइड्रोजनीकरण/हाइड्रोजनीकरण प्रक्रिया के संदर्भ में इसके प्रभावी भौतिक रासायनिक गुणों के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है जो बहुलक विघटन को बढ़ावा देता है और उच्च गुणवत्ता वाले तरल ईंधन के रूप में प्राप्त होता है। कुल मिलाकर, two-step उत्प्रेरक क्रैकिंग का वर्तमान अध्ययन पॉलीमर डिग्रेडेशन पर ईंधन रेंज हाइड्रोकार्बन का उत्पादन करने वाला एक दक्ष तरीका ईजाद करता है जो अपशिष्ट प्लास्टिक प्रबंधन के लिए अनुकूल है।

आभार

लेखकगण जीवन विज्ञान अनुसंधान बोर्ड (LSRB), रक्षा अनुसंधान (DRDO) से प्राप्त वित्तीय सहायता के लिए आभारी हैं।

संदर्भ

1. Ghorbannezhad, P., Park, S., Onwudili, J.A., 2020. Waste Manag. 102, 909–918.
2. Akpanudoh, N.S., Gobin, K., Manos, G., 2005. J. Mol. Catal. A Chem. 235, 67–73.
3. Lebreton, L., Andrady, A., 2019. Palgrave Commun. 5, 1–11.

4. Serrano, D.P., Aguado, J., Escola, J.M., 2012. ACS Catal. 2, 1924–1941.

5. Patnaik, S., Kumar, S., Panda, A.K., 2020. Environ. Sci. Pollut. Res. 27, 14991–15000.

6. Chaianansutcharit, S., Katsutath, R., Chaisuwan, A., Bhaskar, T., Nigo, A., Muto, A., Sakata, Y., 2007. J. Anal. Appl. Pyrolysis 80, 360–368.

7. Aguado, J., Serrano, D.P., Escola, J.M., Peral, A., 2009. J. Anal. Appl. Pyrolysis 85, 352–358.

8. Jia, X., Qin, C., Friedberger, T., Guan, Z., Huang, Z., 2016. Sci. Adv. 2, 1–8.

9. Ali, S., Garforth, A.A., Harris, D.H., Rawlence, D.J., Uemichi, Y., 2002. Catal. Today 75, 247–255

10. Zhou, Q., Lan, W., Du, A., Wang, Y., Yang, J., Wu, Y., Yang, K., Wang, X., 2008. Appl. Catal. B Environ. 80, 141–146.

11. Yao, D., Zhang, Y., Williams, P.T., Yang, H., Chen, H., 2018. Appl. Catal. B Environ. 221, 584–597.

12. Chen, P., Moos, R., Simon, U., 2016. J. Phys. Chem. C 120, 25361–25370.

13. Mangesh, V.L., Padmanabhan, S., Tamizhdurai, P., Ramesh, A., 2020a J. Clean. Prod. 246.

14. Kostyniuk, A., Key, D., Mdleleni, M., 2019. J. Saudi Chem. Soc. 23, 612–626.

15. Budsaereechai, S., Hunt, A.J., Ngernyen, Y., 2019. RSC Adv. 9, 5844–5857.

16. Wang, Z., Burra, K.G., Lei, T., Gupta, A.K., 2021. Prog. Energy Combust. Sci. 84, 100899.

देश को किसी संपर्क भाषा की आवश्यकता होती है और वह केवल हिन्दी ही हो सकती है।

—श्रीमती इंदिरा गांधी

जिस देश को अपनी भाषा और साहित्य का गौरव का अनुभव नहीं है, वह उन्नत नहीं हो सकता।

—डॉ. राजेंद्र प्रसाद

बायोफ्यूल उत्पादन में ओलिएजिनस यीस्ट की भूमिका

डॉ. शिवानी चतुर्वेदी[1], डॉ. प्रशांत कुमार राउत[2], प्रो. सुनील कुमार खरे[1]

[1]रसायन विज्ञान विभाग, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली

[2]सेंट्रल इंस्टिट्यूट ऑफ मेडिसिनल एंड एरोमेटिक प्लांट्स, लखनऊ

*ई–मेलः shivani.d123@gmail.com

सारांश

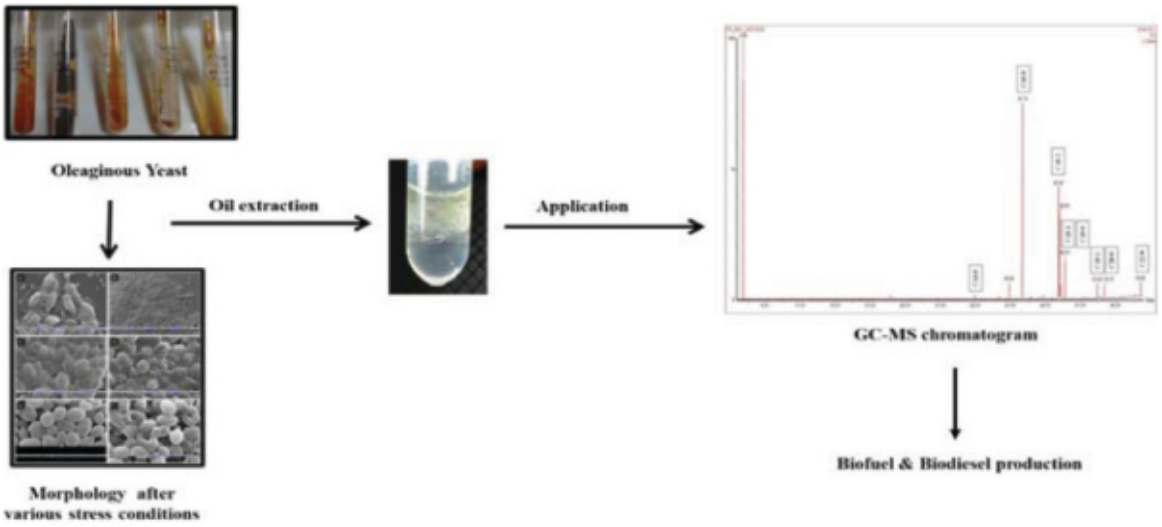
विगत वर्षों में वैश्विक स्तर पर जहाँ वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों पर मानव जाति का ध्यान केन्द्रित हुआ है। वहीं भारत देश जैसे विकासशील देश की योजनाओं का रुझान बेहतर पर्यावरण, मानव जीवन, स्वास्थ्य बिन्दुओं पर बढ़ा है। ओलिएजिनस यीस्ट द्वारा उत्पादित वसा का उपयोग बायो डीजल के लिए किया जा रहा है, न सिर्फ सरकारी योजनाओं अपितु शोध कार्यों में भी यह महत्त्व पा रहा है। इनका उत्पादन अपशिष्ट पदार्थों से होने पर यह किफायती भी सिद्ध हो रहा है। इनमें अच्छे फैटी एसिड्स उत्पादित हो रहे हैं। जो कि GC तथा GC-MS द्वारा प्रदर्शित हुए। भविष्य के लिए इनका उपयोग पर्यावरण एवम् स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त साबित होगा।

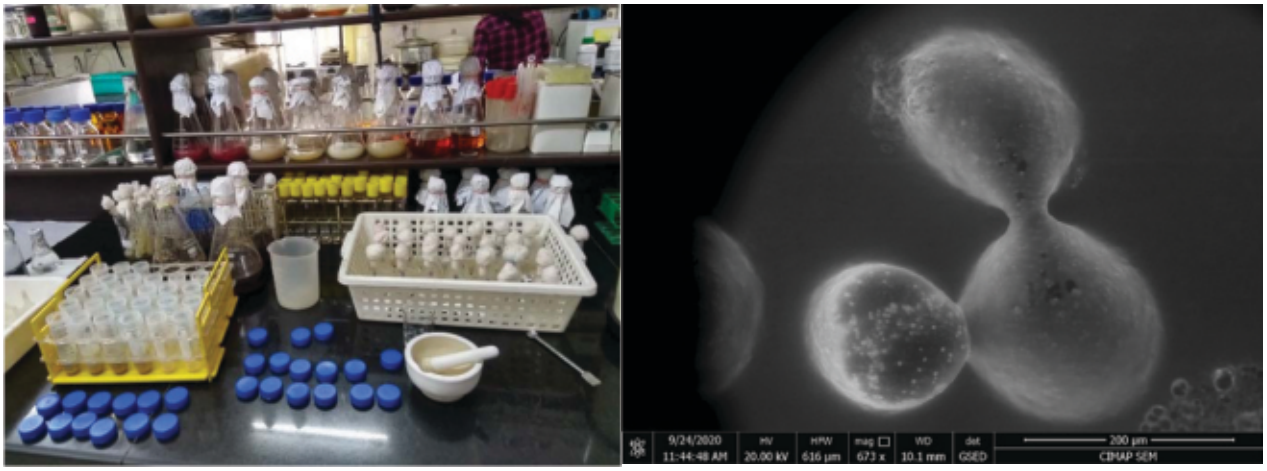
1. प्रस्तावना

विश्व स्तर पर जीवाश्म ईंधन की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए भारत देश में वर्ष 2009 में जैव ईंधन हेतु राष्ट्रीय नीति का गठन हुआ। इसके बाद वर्ष 2018 में "राष्ट्रीय जैव ईंधन नीति 2018" को सहमति मिली। देश में आवश्यक उत्पादन क्षमता को बढ़ाने की जरूरत है क्योंकि हमारी स्वयं की आपूर्ति मात्र 23% ही है शेष आवश्यकता बाहर से आयात करके ही पूर्ति की जाती रही है। "जैव ईंधन नीति 2018" की उपयोगिता सरकार की वर्तमान नीति के सापेक्ष में भी है जिसमें "मेक इन इंडिया" "स्वच्छ भारत अभियान" "किसानों की आय दुगनी" "कौशल विकास" "रोजगार सृजन" "कचरे से ईंधन" "तेल आयात कम करने" जैसे प्रमुख हैं। इस नीति के तहत 2017 तक 20 फीसदी जैव ईंधन मिलाना शामिल है, इससे पर्यावरणीय सुरक्षा व आर्थिक रूप से उपयुक्त स्थिति पैदा करने में सहायता होगी। बायोडीजल व बायोइथॉनॉल इसमें अहम् भूमिका निभायेंगे।

बायोडीजल, बायोइथॉनॉल, बायोजेट व बायो सी. एन. जी. ईंधनों का इस्तेमाल सामान्य रूप से अधिक किये जाने पर जोर दिया जा रहा है। पहली पीढ़ी में स्टार्च युक्त फसलों, शक्कर व वनस्पति या जानवरों की वसा द्वारा प्राप्त होते हैं। तीसरी पीढ़ी में शैवाल या सूक्ष्म जीवों से उत्पादित होता है। चतुर्थ पीढ़ी में प्री ट्रीटमेंट द्वारा बायोमास के विघटन से उर्जा प्राप्त होती है। इसमें एलेक्ट्रोफुएल, कार्बन न्यूट्रल और फोटो बायोलॉजिकल सौर ईंधन को सम्मिलित किया गया है। बायोमास द्वारा प्राप्त ईंधन भी तीन श्रेणी में विभाजित किया जा सकता है वुडफ्यूल, एग्रोफ्यूल, और मुनिस्पल बाई प्रोडक्ट मुख्य है। ओलिएजिनस यीस्ट बायो डीजल बनाने में बेहद महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। वसा उत्पादन करने वाली ये यीस्ट ऑक्सीजन युक्त व > 30 C/N अनुपात में ही 20% से अधिक अपने बायोमास के सापेक्ष ट्राई ग्लिसराईडस का उत्पादन करने की क्षमता रखती हैं इसमें यदि नाइट्रोजन की मात्रा को सीमित किया जाए तो यह प्रतिशत बढ़ कर 70% तक भी प्राप्त किया जा सकता है।

2. प्रयोगात्मक विधि





3. विवेचन

वसा उत्पादन करने वाली इन यीस्ट से प्राप्त वसाओं में C16 से C18 फैटी एसिड ट्राई ग्लिसरोल रूप में पाए जाते है जो कि वनस्पति तेल से उत्पादित बायो डीजल से काफी समरूपता रखते हैं। सूक्ष्म जीव जैसे यीस्ट इत्यादि से उत्पन्न वसा की कीमत अन्य बायोडीजल स्रोतों से अधिक पड़ती है, जिसको कम करने की बहुत आवश्यकता है। इस विषय में अपशिष्ट बायोमास का इस्तेमाल कार्बन स्रोत या सब्स्त्रेत (substrate) की भांति करना काफी अच्छी पहल माना गया है। भांति–भांति के अपशिष्ट बायोमास केले, आलू, कसावा, आदि के छिलके, चावल, गेहूं, जौ, आदि के अपशिष्ट पदार्थों को कार्बन स्रोत की तरह इस्तेमाल करके ओलिएजिनस यीस्ट (Rodotorula glutinis, Cryptococcus curvatus, Trichosporan cutaneous Saccharomyces starkey इत्यादि) द्वारा वसा उत्पादन करना पूर्व में कई शोधों में प्रमाणित हो चुके है। यह विवरण तालिका में दिया गया है।

इन अवशेषों व छिलकों में प्रचुर मात्रा में खनिज लवण व स्टार्च पाए जाते हैं जिनको विभिन्न एंजाइम, जो यीस्ट कोशिका में स्रावित होते हैं जैसे एमैलेसे, इनुलिनस इत्यादि द्वारा विघटित किया जा सकता है और तदुपरान्त उन्हें उपयोगी पदार्थों में परिवर्तित कर लिया जाता है।

तालिकाः— बायोफ्यूल उत्पादन के लिये सूक्ष्म जीवो की उपयोगिता

Organism	Days	Carbon source	Lipid content (% of dry biomass	Reference
Rhodotorula glutinis	6	Food waste leachates	47-49	Johnravindar et al., 2017
Rhodosporidium toruloides ATCC 10788	7	Crude glycerol	53.28	Uprety et al., 2017
Rhodosporidium toruloides NRRLY 27012	8	Crude glycerol	40	Tchakouteu et al., 2015
Rhodotorula glutinis Tr29	7	Molasses of sugar beet or sugar cane	64.8	Taskin et al., 2016
Rhodotorula sp.C7	5	Rice residue	24.26	Srisuwan et al., 2016
Rhodotorula glutinis CCT 2182		Brazilian molasses	36	Vieira et al., 2014
Rhodotorula glutinis		Pentose & hexose		Patel et al., 2016
Rhodotorula toruloides 21167		Cassava starch	64.9	Gen et al., 2014
Rhodotorula glutinis	8	Starchy waste of cassava	53.1	Present study
Cryptococcus terricola JCM 2452		Starch	61.96	Tanimura et al., 2014
Cryptococcus curvatus ATCC 20509		Crude glycerol	26	Leiva-Candia et al., 2015
Cryptococcus curvatus	6	Food waste leachates	30	Johnravindar et al., 2017
Cystobasidium oligophagum Jr1		Starch	41.54	Vyas & Chhabra, 2017
Cryptococcus curvatus DSM 70022	8	Starchy waste of cassava	17.8	Present study
Trichosporon cutaneum AS 2.571	8	Starchy waste of rice	4.4	Present study
Lypomyces starkeyi DSM 70296		Crude glycerol	16	Leiva-Candia et al., 2015
Lypomyces starkeyi DSM 70296		Brazilian molasses	32	Vieira et al., 2014
*Lypomyces starkeyi*CBC 1807	8	Starchy waste of rice	20.1	Present study

तालिका में वर्णित विभिन्न यीस्ट द्वारा उत्पादित वसा का ट्रांस एस्त्रिफिकैशन पर प्राप्त मिथाइल एस्टर का GC व GC-MS द्वारा विश्लेषण में Octadecanoate (C20H402), hexadecanoate (C18H3602), oleic acid (C18H3402), Lenoleic acid (C18H3202), Stearic acid (C18H3602) व Palmitic acid (C16H3202) जैसे बेहद उपयोगी व महत्वपूर्ण फैटी एसिड्स का निर्माण होता है। इन सिंगल सेल फैक्टरी में न सिर्फ कोशिका के भीतर अपितु कोशिका के बाहर एक्स्ट्रासेलुलर वसा का भी उत्पादन देखा गया है। एक ओर अवशेष पदार्थों द्वारा उत्पादन और साथ ही साथ एक्स्ट्रासेलुलर वसा का उत्पादन मिलकर इस कुल प्रक्रिया को काफी किफायती व पर्यावरण के लिए सुरक्षित बनाते है इस प्रक्रिया में न सिर्फ खेतिहर भूमि व मौसम पर निर्भरता गौण हो जाती है बल्कि साथ ही सीमित संसाधनों में ही अधिकतम उत्पादन क्षमता सम्भव है।

4. उपसंहार

वर्तमान सन्दर्भ में एक ओर जहाँ व्यवसायिकता व भौतिकता के फलस्वरूप पर्यावरण के संसाधनों का दोहन अपने चरम पर है, वहीं दूसरी ओर मानव जाति में पर्यावरण के प्रति जागरूकता में तेजी से इजाफा भी हुआ है। कार्बन क्रेडिट के प्रति विकसित देशों में ही नहीं अपितु विकासशील देशों की सजगता व सहभागिता बहुत बढ़ी है। सभी देश अपनी–अपनी ऊर्जा नीतियों में बदलाव भी ला रहे हैं साथ में उनका कार्यान्वयन भी सख्ती से करवा रहे हैं। वास्तव में ये आवश्यक भी है और जीवित रहने के लिए सारगर्भित मार्ग भी है। अतिरिक्त उर्जा स्रोतों में न सिर्फ अवशेष बायोमास पर शोध जरुरी है बल्कि माइक्रोबियल फ्यूल का पर्याप्त उत्पादन व उपयोग भी आवश्यक है।

संदर्भ

1. Chaturvedi, S. Bhatacharya, A. Nain, L. Prasanna, R. Khare, S.K. 2019. Valorization of agro□starchy wastes as substrates for oleaginous microbes, Biomass Bioenergy. 127, 105294.

2. Chaturvedi, S. Kumari, A. Nain, L. Khare, S.K. 2018. Bioprospecting microbes for single-cell oil production from starchy wastes, Preparative Biochemistry and Biotechnology. https://doi.org/10.1080/10826068. 2018. 1431783

3. Fischer, C.R. Klein-Marcuschamer, D. Stephanopoulos, G. 2008. Selection and Optimization of Microbial Hosts for Biofuels Production. Metabolic Engineering 10, 295–304. DOI: 10.1016/j. ymben.2008.06.009.

4. Johnravindar, D. Karthikeyan, O.P. Selvam, A. Murugesan, K. 2018. Lipid accumulation potential of oleaginous yeasts: a comparative evaluation using food waste leachate as a substrate, Bioresours Technology 248, 221–228.

5. Khot, M. Ghosh, D. 2017. Lipids of *Rhodotorula mucilaginosa* IIPL32 with biodiesel potential: oil yield, fatty acid profile, fuel properties, Journal of Basic Microbiology 57, 345–352.

6. Kricka, W. Fitzpatrick, J. Bond, U. 2014. Metabolic Engineering of Yeasts by Heterologous Enzyme Production for Degradation of Cellulose and Hemicellulose from Biomass: A Perspective. Frontiers in Microbiology 5, 174. DOI: 10.3389/fmicb.2014.00174.

7. Leiva-Candia, D.E. Tsakona, S. Kopsahelis, N. García, I.L. Papanikolaou, S. Dorado, M.P. Koutinas, A.A. 2015. Biorefining of by-product streams from sunflower based biodiesel production plants for integrated synthesis of microbial oil and value-added co-products, Bioresours Technology 190, 57–65.

8. Ma, Y. Gao, Z. Wang, Q. Liu, Y. 2019. Biodiesels from microbial oils: opportunity and challenges. Bioresours Technology 263, 631□41.

9. Papanikolaou, S. Aggelis, G. 2011. Lipids of Oleaginous Yeasts. Part II: Technology and Potential Applications. European Journal of Lipid Science and Technology 113, 1052–1073. DOI: 10.1002/ejlt.201100015.

10. Patel, A. Arora, N. Sartaj, K. Pruthi, V. Pruthi, P.A. 2016. Sustainable biodiesel production from oleaginous yeasts utilizing hydrolysates of various non-edible lignocellulosic biomasses, Renewable and Sustainable Energy Reviews 62, 836–855.

11. Sharma, Y.C. Singh, B. 2008. Development of Biodiesel: Current Scenario, Renewable Sustainable Energy Reviews 13, 1646–1651. DOI: 10.1016/ j.rser.2008.08.009.

12. Sirsuwan, W. Techapun, C. Seesuriyachan, P. Watanabe, M. Chaiyaso, T. 2016. Screening of oleaginous yeast of lipid production using rice residue from food waste as a carbon source, K. K. U. Research Journal 22, 116–126.

13. Tanimura, A. Takashima, M. Sugita, T. Endoh, R. Kikukawa, M. Yamaguchi, S. Sakuradani, E. Ogawa, J. Ohkuma, M. Shima, J. 2014. *Cryptococcus terricola* is a promising oleaginous yeast for biodiesel production from starch through consolidated bioprocessing, Scientific Reports 4, 4776.

14. Taskin, M. Ortucu, S. Aydogan, M.N. Arslan, N.P. 2016. Lipid production from sugar beet molasses under non-aseptic culture conditions using the oleaginous yeast *Rhodotorula glutinis* TR29, Renewable Energy 99, 198–204.

15. Tchakouteu, S.S. Kalantzi, O. Gardeli, C. Koutinas, A.A. Aggelis, G. Papanikolaou, S. 2015. Lipid production by yeasts growing on biodiesel-derived crude glycerol: strain selection and impact of substrate concentration on the fermentation efficiency, Journal of Applied Microbiology 118, 911–927.

16. Uprety, B.K. Dalli, S.S. Rakshit, S.K. 2017. Bioconversion of crude glycerol to microbial lipid using a robust oleaginous yeast *Rhodosporidium toruloides* ATCC 10788 capable of growing in the presence of impurities, Energy Conversion and Management 135, 117–128.

17. Vieira, J.P.F. Ienczak, J.L. Rossell, C.E.V. Pradella, J.G.C. Franco, T.T. 2014. Microbial lipid production: screening with yeasts grown on Brazilian molasses, Biotechnological Letters 36, 2433-244.

18. Vyas, S. Chhabra, M. 2017. Isolation, identification and characterization of *Cystobasidium oligophagum* JRC1: a cellulase and lipase producing oleaginous yeast, Bioresours Technology 223, 250–258.

19. Zuccaro, G. del Mondo, A. Pinto, G. Pollio, A. De Natale, A. 2021. Biorefinery-Based Approach to Exploit Mixed Cultures of *Lipomyces Starkeyi* and *Chloroidium Saccharophilum* for Single Cell Oil Production. Energies 14, 1340.

ब्रह्मज्ञानी को स्वर्ग तृण है, शूर को जीवन तृण है, जिसने इंद्रियों को वश में किया उसको स्त्री तृण–तुल्य जान पड़ती है, निस्पृह को जगत तृण है।

–चाणक्य

सीमेंट कंक्रीट सड़कों के रखरखाव की उन्नत तकनीकें

डॉ संगीता[1], डॉ. बी.आर.जी. रॉबर्ट[2] एवं श्री अशोक कुमार[3]

[1]पूर्व विभाग अध्यक्ष, फ्लेक्सिबल पेवमेन्ट विभाग
केंद्रीय सड़क अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

[2]सहायक प्रोफेसर,
सिविल इंजीनियरी विभाग,
दिल्ली तकनीकी विश्वविद्यालय, बवाना, दिल्ली

[3]सिविल इंजीनियर, पूर्व रिसर्च इन्टर्न,
सी.आर.आर.आई., नई दिल्ली

1. प्रस्तावना

देश की राजधानी दिल्ली में नांगलोई से नजफगढ़ लगभग 5.5 किमी लंबाई और 30 मीटर चौड़ी सीमेंट कंक्रीट (सीसी) सड़क है। निलोठी मोड़ से वायु सेना बानी कैंप , 30 मीटर चौड़ी सड़क के केन्द्र में सीवर लाइन सड़क विभाजक के रूप में कार्य करती है। इस सड़क के दोनों ओर ड्रेनेज की व्यवस्था की गई है। इस सड़क का निर्माण 2012 के आसपास किया गया था। सड़क निर्माण एजेंसी, दिल्ली जल बोर्ड (डीजेबी), इंद्रप्रस्थ गैस लिमिटेड (आईजीएल) और बीएसईएस के बीच समन्वय और योजना की कमी के कारण, पहले से ही निर्मित सीसी सड़क को पानी, बिजली और गैस पाइपलाइन विभागों द्वारा समय–समय पर काट कर सुविधाएं प्रदान की गई। सीवर लाइन सड़क के बायीं एवं दायीं ओर के कैरिजवे के मध्य में स्थित है। समय–समय पर मरम्मत कार्य के लिए यह सड़क खोदी जाती रही है। बक्करवाला से रणहोला गांव तक एक मीटर व्यास की जलापूर्ति पाइप लाइन बिछाई गई। सीमेंट कंक्रीट सड़क निर्माण के बाद इन गतिविधियों के परिणामस्वरूप सीसी स्लैब / पैनल कमजोर हो गए और आड़ी और लम्बवत दरारें, जोड़ों के खुलने, अंतर निपटान और मैनहोल के आसपास सड़क के भाग के धंस जाने के कारण आने–जाने वालों को परेशानी हुई। सड़क का कुछ भाग बिना डिवाइडर के केवल 9 मीटर चौड़ा है।

2. अध्ययन का कार्य क्षेत्र

उपरोक्त सड़क की स्थिति का अवलोकन एवं सड़क निर्माण सामग्री को टेस्ट करने के पश्चात् इसके सुदृढीकरण के उपाय बताने के लिए निम्नलिखित अध्ययन किये गये :

(i) साइट फोटो ग्राफ लिये गये (ii) द्वितीय ट्रैफिक डेटा का संग्रह (iii) गड्ढे काटना (iv) साइट से मिट्टी के नमूनों का संग्रह (v) मिट्टी के नमूनों का प्रयोगशाला मूल्यांकन (vi) प्रयोगशाला परीक्षा परिणामों का विश्लेषण (vii) सड़क खंडों को भरने (overlay) की आवश्यकता (viii) सुधारात्मक उपायों के लिए सिफारिशें।

3. जांच कार्य

सम्पूर्ण जांच कार्य दो भागों में किये गये (i) क्षेत्र की जांच और मिट्टी के नमूनों का प्रयोगशाला मूल्यांकन (ii) यातायात की मात्रा। इस प्रकार प्राप्त आंकड़ों का उपयोग सड़क की राइडिंग गुणवत्ता में सुधार और सड़क के सुदृढ़ीकरण के लिए उपयुक्त उपचारात्मक उपायों की सिफारिश करने के लिए किया गया।

3.1 सड़क की सतह की स्थिति का दृश्य आंकलन

मौजूदा सड़क की सतह की स्थिति के आंकलन के लिए सर्वे

टीम द्वारा विभिन्न प्रकार के सतही दोष के फोटो लिये गये एवं गढ्ढों, दरारों, पैच कार्यों का आंकलन किया गया। अधिकांश सड़क 60 से 70 प्रतिशत तक खराब पायी गयी। सी.सी. सतह पर लम्बवत और आड़ी दरारें, गड्ढे, सतह के उखड़ने, लम्बवत और आड़ी जोड़ों का खुला होना, स्लैब में कटौती, खराब राइडिंग गुणवत्ता के अलावा अत्यधिक खुरदरी सतह देखी गई, जो इन सड़कों के तत्काल पुनरुत्थान की आवश्यकता को दर्शाता है।

उपरोक्त दोष एवं कुछ चयनित स्थानों पर सड़क की सतह की स्थिति को चित्र 01 से 04 में दिखाया गया है।



चित्र–1: गड्ढों, दरारों, पर पैच



चित्र–2: खराब राइडिंग गुणवत्ता



चित्र–3: सतह का उखड़ना



चित्र–4: लम्बवत और आड़ी जोड़ों का खुला होना

दृश्य अवलोकन और तस्वीरों के आधार पर, इस चार लेन सड़क पर पाई गई प्रमुख समस्याएं इस प्रकार हैं:

i) जोड़ (आड़ी और लम्बवत) खुले होते हैं

ii) कई जगह पैच वर्क

iii) कई जगहों पर चौड़ी दरारें

iv) संरचनात्मक स्थिरता का नुकसान (सड़क के स्लैब के काटने से स्लैब की कार्रवाई पूरी तरह से बाधित है)

v) सड़क की ऊपरी सतह पूरी तरह से खराब हो चुकी है और सतह खुरदरी हो गई है।

vi) बिटुमिनस कंक्रीट मिक्स के साथ पैच वर्क करने के पश्चात भी सीमेंट कंक्रीट की दरारें बिटुमिनस कंक्रीट की सतह तक दिखाई (reflect) देने लगी हैं।

vii) अधिक व्यावसायिक (commercial) यातायात इस सड़क से गुजरता है

viii) सड़क को चौड़ा करने की कोई गुंजाइश नहीं

मिट्टी की सतह का घनत्व निर्धारण और सड़क की मोटाई (crust) का विवरण एवं मिट्टी के नमूने एकत्र करने के लिये दोनों ओर की सड़क से चार फिट होल काटे गये। गड्ढे के छेद का आकार 1m x 1m है। गड्ढे के छेद को मैन्युअल रूप से काटा गया और सड़क की परतों की मोटाई का अवलोकन सटीक रूप से किया गया। उप–ग्रेड परत का क्षेत्र घनत्व कोर कटर विधि द्वारा किया गया है। प्रत्येक गड्ढे

के छेद से मिट्टी के नमूने प्रयोगशाला जांच के लिए एकत्र किए गये। प्रयोगशाला टेस्ट में फील्ड (साइट) से लिये गये मिट्टी के नमूनों में नमी की मात्रा 4% से 11% के और घनत्व 1.84 से 1.87 gm/cc पाया गया। सड़क की औसत मोटाई 300 मि.मी. सीमेंट कंक्रीट स्लैब और 350 मि.मी. जीएसबी और अन्य तरह के पदार्थ की है। सड़क क्रस्ट (मोटाई) दिखाने वाले गड्ढों को चित्र 5 और 6 में दर्शाया गया।



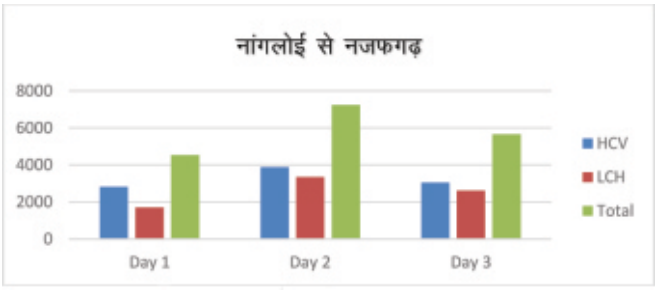
चित्र–5: सड़क की (Crust)मोटाई का दृश्य



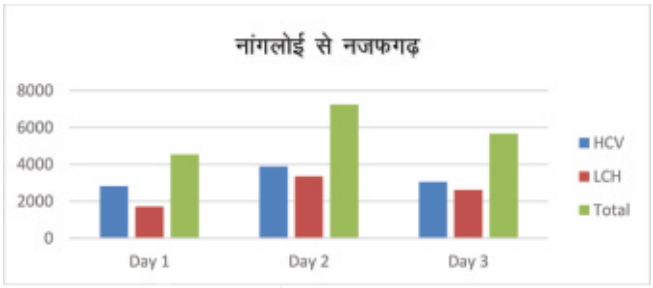
चित्र–6: गड्ढे को काटना

3.1.1 ट्रैफिक वॉल्यूम सर्वे

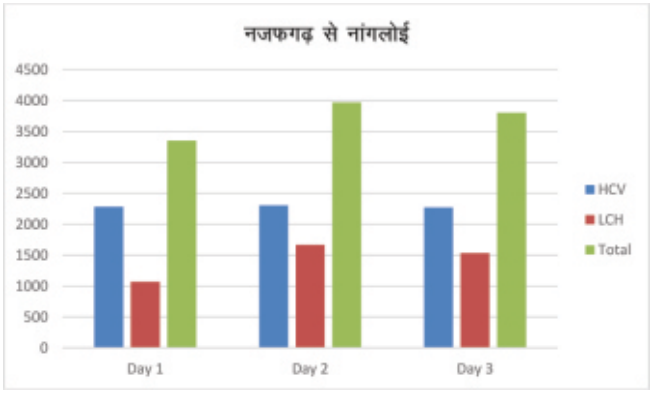
यातायात सर्वेक्षण प्रगणकों द्वारा मैनुअल गिनती करके किया गया। यह सर्वे लगातार तीन दिन (24 घंटे) किया गया। भारी और हल्के वाणिज्यिक वाहनों की मैनुअल रूप में गिनती की गई। कुल वाणिज्यिक वाहन (भारी और हल्के) दोनों दिशाओं के लिए अलग–अलग गिने गये। यानि नजफगढ़ से नांगलोई और नांगलोई से नजफगढ़ दिशा में और तालिका–1 में संक्षेपित यातायात गणना डेटा घंण्टे के आधार पर दर्ज किया जाता है। इसमें पाया गया कि नजफगढ़ से नांगलोई की दिशा में प्रतिदिन कुल 3709 वाणिज्यिक वाहन चल रहे हैं, जिनमें से प्रतिदिन भारी वाणिज्यिक वाहन 2287 हैं। वहीं नांगलोई से नजफगढ़ की दिशा में कुल 5812 व्यावसायिक वाहन प्रतिदिन चल रहे हैं जिनमें प्रतिदिन 3253 भारी व्यावसायिक वाहन चल रहे हैं। बार चार्ट (ग्राफ 1–4) में इस सड़क पर वर्तमान यातायात परिदृश्य को दर्शाया गया है ।



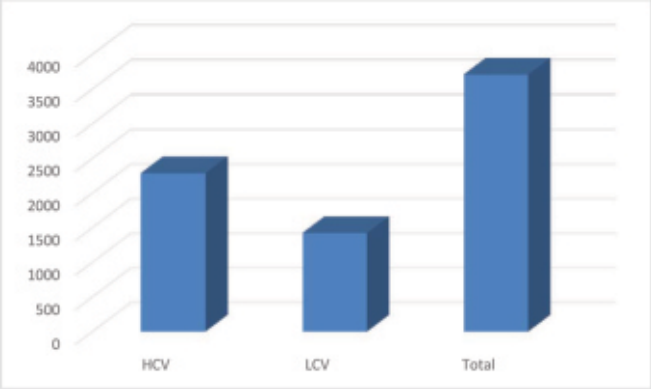
ग्राफ–1: नांगलोई से नजफगढ़ दिशा में दिनवार यातायात परिदृश्य



ग्राफ–2: प्रतिदिन चलने वाले वाणिज्यिक वाहन (नांगलोई से नजफगढ़)



ग्राफ–3: नजफगढ़ से नांगलोई दिशा में दिनवार यातायात परिदृश्य



ग्राफ–4 प्रतिदिन सड़क पर चलने वाले वाणिज्यिक वाहन (नजफगढ़ से नांगलोई)

3.1.2 संचयी मानक धुरी (axis) की गणना

सड़क की आवश्यक मोटाई को डिजाइन करने के लिए, डिजाइन काल के दौरान सड़क पर चलने के लिए अपेक्षित मानक धुरी की संचयी संख्या की आवश्यकता होती है। वाणिज्यिक वाहनों के लिए प्रति वर्ष 7.5% की यातायात वृद्धि दर मानकर, 5 वर्षों के डिजाइन जीवन के लिए मानक धुरी की संचयी संख्या के संदर्भ में डिजाइन ट्रैफिक लोडिंग पर विचार किया गया है। व्हीकल डैमेज फैक्टर (VDF) को 4.5 के रूप में लिया गया है। आईआरसी– 81 (1997) में दिए गए निम्नलिखित सूत्र का उपयोग करके एक विशेष डिजाइन काल के लिए मानकधुरी की संचयी संख्या की गणना की जाती है।

$$Ns = \frac{365 \times [(+r)x - 1]}{r} \times F$$

एनएस = डिजाइन जीवन के लिए तैयार किए जाने वाले मानक धुरी की संचयी संख्या

(Ns= Cumulative number of standard axles to be catered for the design life)

ए = प्रारंभिक यातायात, (निर्माण के पूरा होने के वर्ष में), के संदर्भ में प्रतिदिन वाणिज्यिक वाहनों की संख्या

(A= Initial traffic, in the year of completion of construction, in terms of the number of commercial vehicles per day)

r = भारी वाणिज्यिक वाहनों की वार्षिक वृद्धि दर (r = Annual growth rate of heavy commercial vehicles)

x = डिजाइन जीवन (वर्षों में) (x =Design life in years)

F = वाहन क्षति कारक (वीडीएफ) (F = Vehicle damage factor (VDF)

5 साल के डिजाइन जीवन के लिए मानक धुरी की संचयी संख्या की गणना की गई है और मान नीचे दिए गए हैं।

तालिका–1: जांच के तहत् सड़क पर प्रतिदिन चलने वाले वाणिज्यिक वाहन का विवरण

वणिज्यिक यातायात वाहन (Commercial Traffic Vehicles)						
	नांगलोई से नजफगढ़			नजफगढ़ से नांगलोई		
	HCV	**LCV**	**Total**	**HCV**	**LCV**	**Total**
Day 1	2825	1705	4530	2283	1071	3354
Day 2	3884	3355	7239	2305	1665	3970
Day 3	3049	2618	5667	2272	1531	3803
Average	**3253**	**2559**	**5812**	**2287**	**1422**	**3709**

दिशा	CVPD की कुल संख्या	CVPD डिजाइन	
नांगलोई से नजफगढ़	5812	4359	**41.6 MSA**
नजफगढ़ से नांगलोई	3709	2782	**26.5 MSA**

3.2 प्रयोगशाला जांच

साइट से एकत्र किए गए मिट्टी के नमूनों का मूल्यांकन प्रयोगशाला में साइट की नमी, एटरबर्ग सीमा और सीबीआर जैसे गुणों के टेस्ट के लिए किया गया । साइट की मिट्टी में नमी की मात्रा 4% से 11% पाई गई और मिट्टी के टेस्ट से रेतीले गाद जैसी मिट्टी होने का संकेत मिला। वार्षिक वर्षा 1300 मि.मी. से कम रही। क्षेत्र (साईट) और प्रयोगशाला परिणामों का विवरण तालिका–2 में दिया गया है।

4. परीक्षण परिणामों का विश्लेषण और चर्चा

सतह की 70–80 प्रतिशत भाग क्रैकिंग और जोड़ों के खुलने के रूप में खराब होने के कारण और लम्बवत चौड़ी दरारें होने से उपरोक्त सड़क की सतह की राइडिंग गुणवत्ता बहुत खराब पाई गई।

4.1 सीसी रोड पर अनुशंसित ओवरले (overlay) मोटाई।

मौजूदा संकटग्रस्त सीमेंट कंक्रीट फुटपाथ से बिटुमिनस ओवरले में प्रतिबिंब दरारों को रोकने के लिए और यातायात प्रवाह की तीव्रता, सड़क की स्थिति की प्रकृति और लागत अर्थशास्त्र के आधार पर निम्नलिखित दो तरीकों से कंक्रीट की सतह का सुदृढ़ीकरण किया जाना चाहिए।

अ) वॉटरप्रूफिंग मेम्ब्रेन बिछाकर

i) बिटुमेन रिमूवर मशीन का उपयोग करके मौजूदा क्षतिग्रस्त सतह/बिटुमेन टॉपिंग (यदि कोई हो)/ डामर कोट (यदि कोई हो) को हटाएं।

ii) प्रोफाइल सुधार के लिए (DBM) डी.बी.एम. का प्रयोग करें।

iii) 4 मि.मी. मोटाई के एपीपी संशोधित वॉटरप्रूफिंग टार्चान झिल्ली को प्रोफाइल सुधार और बिटुमिनस ओवरले के नीचे अनुशंसित किया गया। इन झिल्ली को आमतौर पर बिटुमेन मैस्टिक लेयर के स्थान पर पिछले कई वर्षों से ब्रिज डेक पर लगाया जाता है।

iv) एमओआरटीएच (MoRT&H)''सड़क और पुल कार्य के लिए विशिष्टता'' के खंड 505 के अनुसार एपीपी मेम्ब्रेन पर बाइंडर कोर्स के रूप में 50 मि.मी. मोटी बिटुमिनस मैकडैम (टाइप 2) (वीजी 30 बिटुमेन) के बाद 40 मि.मी. बीसी की सिफारिश की जाती है।

तालिका –2: मिट्टी के नमूनों के परीक्षण के परिणाम

गड्ढे संख्या (Pit No.)	नमी (Moisture) (%)	धनत्व (ग्राम/सीसी) Density(gm/cc)	एलएल (LL) (%)	पीएल (PL) (%)	सीबीआर (CBR)	Type of soil
1	4.75	1.84	17	Non Plastic	7.8	Sandy Silt
2	8.58	1.86	18	Non Plastic	8.5	Sandy Silt
3	10.86	1.83	20	Non Plastic	9.3	Sandy Silt
4	9.32	1.87	19	Non Plastic	6.5	Sandy Silt

ब) ग्रिड के एक तरफ चिपकने के साथ बिटुमिनस लेपित ग्लास फाइबर जियोग्रिड रखना

i) बिटुमेन रिमूवर मशीन का उपयोग करके मौजूदा क्षतिग्रस्त सड़क/बिटुमेन टॉपिंग (यदि कोई हो)/ डामर कोट (यदि कोई हो) को हटाएं।

ii) एमओआरटीएच ''सड़क और पुल कार्य के लिए विशिष्टता'', पांचवें संशोधन के खंड 505 के अनुसार वीजी –30 बाइंडर का उपयोग करके पहनने के पाठ्यक्रम के रूप में 50 मि.मी. मोटी बिटुमिनस मैकडैम परत (टाइप –2) ओवरले की सिफारिश की जाती है।

iii) मौजूदा सीसी सड़क से बिटुमिनस ओवरले में परावर्तन दरार को रोकने के लिए ग्रिड के एक तरफ चिपकने के साथ बिटुमिनस लेपित ग्लास फाइबर ग्रिड को एमओआरटीएच के खंड 708 के अनुसार बाइंडर कोर्स के शीर्ष पर सुदृढीकरण के लिए इंटरलेयर के रूप में अनुशंसित किया जाता है ''सड़क के लिए विशिष्टता और ब्रिज वर्क'', पांचवां संशोधन।

iv) एमओआरटीएच ''सड़क और पुल कार्य के लिए विशिष्टता'', पांचवें संशोधन के खंड 507 के अनुसार डीबीएम परत के शीर्ष पर वीजी –40 बाइंडर का उपयोग करके पहनने के पाठ्यक्रम के रूप में 50 मिमी मोटी बिटुमिनस कंक्रीट परत (टाइप –1) ओवरले की सिफारिश की जाती है।

5. सामान्य अवलोकन और अनुशंसा

क्षेत्र और प्रयोगशाला मूल्यांकन से प्राप्त परिणाम इंगित करता है कि सड़क की स्थिति संरचनात्मक और कार्यात्मक पैरामीटर पर अपेक्षित स्तर से काफी कम है। सड़क में खुले जोड़ों की दरारों से पानी का प्रवेश कैरिजवे पर गड्ढों, open texture वाली सतह और पैच आदि के माध्यम से संभव है कि परिणामी जल प्रवेश उप–ग्रेड सतह को काफी हद तक कमजोर करता है। मौजूदा सड़क की संरचनात्मक और सतह की स्थिति, यातायात भार और हानिकारक कारकों को ध्यान में रखते हुए, उपरोक्त तकनीकी सुधार और पुनर्वास उपायों को अनुशंसित किया जाता है।

आभार

उपरोक्त सड़क के अध्ययन को देने के लिये हम PWD, Delhi का आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ

1. एमओआरटीएच (MoRTH) ''सड़क और पुल कार्य के लिए विशिष्टता'', पांचवां संशोधन (5th Revision), 2013
2. IRC 81 : Guidelines for Strengthening of Flexible Road Pavement using Benkelman Beam Deflection Technique, First Revision ,1997

कृषि में क्रांति के लिए स्मार्ट पादप सुरक्षा तकनीकों की आवश्यकता

डॉ. मीनू गुप्ता[1], डॉ. अमित विक्रम[1], डॉ. अरूणेश कुमार[2], डॉ. शालिनी वर्मा[2] एवं डॉ. मनीषा कौशल[3]

[1]सब्जी विज्ञान विभाग,
[2]पादप रोग विज्ञान विभाग,
[3]खाद्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग,
डॉ यशवंत सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय,
नौणी, सोलन
ई–मेल: meenugupta1@gmail.com

सारांश

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में भारत में गेहूँ और चावल की अधिक उपज देने वाली किस्मों के कारण हरित क्रांति का आगमन हुआ। परन्तु इसके बाद फसलों की उत्पादकता में लगातार कमी होती गई। इसके साथ ही मिट्टी की उर्वरा क्षमता में कमी, खाद्यान्नों में कीटनाशकों के अवशेष तथा वातावरण का प्रदूषण आदि समस्याएँ भी पैदा होने लगी। स्मार्ट कृषि के प्रयोग से अन्न उत्पादन को 40 वर्षो में दुगना किया जा सकता है। स्मार्ट कृषि में सूचना तथा संचार तकनीकों को मशीनों, यंत्रों तथा सेंसरों द्वारा कृषि उत्पादन प्रणाली में प्रयोग किया जाता है। नई तकनीकों जैसेकि 'इंटरनेट ऑफ थींग्स' और 'क्लाउड कम्प्यूटिंग' द्वारा इस विकास को बढ़ाने की उम्मीद है जिसके साथ ही रोबोट तथा कृत्रिम बुद्धिमत्ता का खेती में अधिक प्रयोग किया जा सकेगा। रोगों व कीटों की सही पहचान इसके नियंत्रण के लिए सबसे आवश्यक है तथा इसमें तकनीक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

की–वर्ड्स: स्मार्ट कृषि, स्मार्ट पादप सुरक्षा तकनीक, पौध संरक्षण

1. प्रस्तावना

नवीन रचनाओं तथा नई तकनीकों से कृषि में हमेशा ही लाभ प्राप्त हुआ है। भारत ने बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हरित क्रांति का गेहूँ और चावल की अधिक उपज देने वाली किस्मों का सिंचित भूमि में रासायनिक खादों तथा कीटनाशकों के प्रयोग के कारण स्वागत किया है। हरित क्रांति के कारण होने वाली वृद्धि 3–4 दशकों तक बढ़ती रही परन्तु इसके बाद फसलों की उत्पादकता में लगातार कमी होती गई। इसके साथ ही मिट्टी की उर्वरा क्षमता में कमी, खाद्यान्नों में कीटनाशकों के अवशेष तथा वातावरण का प्रदूषण आदि समस्याएँ भी पैदा होने लगी। स्मार्ट कृषि के प्रयोग से वातावरण परिवर्तन पर कम प्रभाव के साथ ही अन्न उत्पादन को 40 वर्षो में दुगुना किया जा सकता है। कृषि में निर्णय लेने को रोबोट, सेन्सर या ड्रोन की सहायता से अंकीकृत किया जा रहा है। उभरती हुई अंकीय तकनीकें जैसे कि वैश्विक नेटवर्क, बढ़ती हुई संगठन क्षमता, भौगोलिक सूचना तंत्र, संवेदनशील ऑप्टिकल सेंसर प्रणाली तथा रोबोटिक और प्रवर्तक प्रौद्योगिकी आदि किसानों को खेतों से नियंत्रण कक्ष तथा मशीनों के पास ला रहे हैं । स्मार्ट कृषि में सूचना तथा संचार तकनीकों को मशीनों, यंत्रों तथा सेंसरों द्वारा कृषि उत्पादन प्रणाली में प्रयोग किया जाता है। नई तकनीकों जैसे कि 'इंटरनेट ऑफ थींग्स' और 'क्लाउड कम्प्यूटिंग' द्वारा इस विकास को बढ़ाने की उम्मीद है जिसके साथ ही रोबोट तथा कृत्रिम बुद्धिमत्ता का खेती में अधिक प्रयोग किया जा सकेगा ।

2. कृषि में स्मार्ट पादप सुरक्षा तकनीकों का प्रयोग

उपज में रोगों तथा कीटों के कारण 25–35 प्रतिशत तक हानि होती है। अतः पादप सुरक्षा में भी नई, उन्नत तथा स्मार्ट तकनीकों की आवश्यकता है जिससे कि आने वाली चुनौतियों का अधिक सूक्ष्मता से निवारण किया जा सके। रोग की सही पहचान इसके नियंत्रण के लिए सबसे आवश्यक है तथा इसमें तकनीक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। रिमोट सेंसर द्वारा पौधों में वास्तविक समय में खेत में होने वाले रोगों का पता प्रत्यक्ष लक्षणों के दिखाई देने

से पहले ही लगा सकते हैं क्योंकि प्रकाश की परावर्तकता एक स्वस्थ पत्ते की अपेक्षा बीमार पत्ते में अलग होती है। इससे किसान समय पर नियोजित सुरक्षा पद्धतियों का प्रयोग कर सकता है। थर्मोग्राफी और क्लोरोफिल फ्लोरिसेंस सेंसर क्रमशः पत्ते की सतह के तापमान तथा क्लोरोफिल क्रियाओं में परिवर्तन को नापते हैं। ये सेंसर प्रारम्भिक तनाव को पहचानने में सक्षम होते हैं, परन्तु ये विभिन्न रोगकारकों में भेद करने में असक्षम होते हैं।

मशीनों की परिकल्पना में तकनीकी सुधार, वैश्विक स्थिति प्रणाली, लेजर तकनीक, प्रवर्तक और मैकाट्रोनिक्स (अंतःस्थापित कम्प्यूटर, माइक्रोसेंसर, विद्युतीय मोटर आदि) से रोगों की सही पहचान तथा कीटनाशकों का सही स्थान पर प्रयोग करने की क्षमता में बढ़ोतरी हो सकती है। हाइपरस्पेक्ट्रल सेंसर और इमेजिंग तकनीकें पौधे व रोगकारक की परस्पर क्रियाओं को दिखाने तथा पोधों के रोगों को पहचानने का अत्यधिक सामर्थ्य रखते हैं। विभिन्न ऑप्टिकल सेंसर जैसे कि लाल, हरा और नीला तरंग दल, तीन आयामी इमेजिंग, क्लोरोफिल फ्लोरिसेंस इमेजिंग, थर्मोग्राफी तथा मल्टीस्पेक्ट्रल और हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग को रोगों की पहचान के लिए जाँचा गया है। विजिबल स्पेक्ट्रम इमेज प्रोसेसिंग पर आधारित एक विधि द्वारा सिटरस ग्रीनिंग के लक्षणों को बहुत गहनता से पहचाना जा सका। सिटरस केंकर द्वारा पत्तों पर उत्पन्न लक्षणों को सामान्य निरीक्षण की अपेक्षा इमेज विश्लेषण द्वारा पहचानना अधिक सही पाया गया।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता तकनीक पौधों में रोगों, कीटों तथा खेतों में कम पोषक तत्त्वों को पहचानने में सहायक है। यह तकनीक एक रोग को 98 प्रतिशत सत्यता से पहचान सकती है। मशीन लर्निंग एक अन्य सम्भावित क्षेत्र है जो पौध सुरक्षा के क्षेत्र में कुशलता तथा शुद्धता प्रदान कर सकता है। इस तकनीक का उपयोग मुख्यतः जीन नियत्रंक नेटवर्क, रोग प्रतिरोधकता के लिए जीन का चयन तथा रोगाणुओं की प्रोटीन की भविष्यवाणी में किया जा सकता है। यह तकनीक अन्य तकनीकों जैसे कि हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग आदि के साथ भी प्रयोग की जा सकती है। इसे फफूंद व जीवाणुओं के प्रभावकों को पहचानने के लिए भी प्रयोग कर सकते हैं। बर्लिन के एक कृषि आधारित तकनीकी स्टार्ट–अप ने एक बहुभाषी पादप रोग तथा कीट पहचान एप बनाया है जो कि पौधे की विभिन्न चित्रों को प्रयोग कर रोग संबंधी जानकारी देता है। 'प्लेनटिक्स' अपने सॉफ्टवेयर में मशीन लर्निंग तकनीकों का प्रयोग करके मिट्टी के विकार तथा पौधों के रोगों संबंधित जानकारी देता है। किसान इस जानकारी को अपने मोबाइल फोन से देख कर उचित तकनीक तथा समाधान का प्रयोग कर सकते हैं। इस प्रकार कृत्रिम बुद्धिमत्ता तथा मशीन लर्निंग का प्रयोग पौधों के रोगों में किया जा सकता है। लगभग 70 लाख किसानों ने इस एप को डाउनलोड किया है और इस एप ने विभिन्न फसलों की 385 से अधिक रोगों को पहचानने में मदद की है।

गूगल कृत्रिम बुधिमत्ता को 5000 पौधों तथा जानवरों की विभिन्न प्रजातियों को पहचानने का प्रशिक्षण दे रहा है जिससे कि ड्रोन की सहायता से कीटों, रोगों व पौधों की हानि का पता लगाया जा सके। कृत्रिम बुद्धिमत्ता वाले सेंसर खरपतवारों को पहचान कर उचित खरपतवार नाशक का उस क्षेत्र में चयन भी कर सकेगें। बहुत सी तकनीकी कम्पनियों ने रोबोट विकसित किए हैं जो कम्प्यूटर विज़न व कृत्रिम बुद्धिमत्ता का प्रयोग कर के खरपतवारों पर छिड़काव भी कर सकेगें। ये रोबोट आम तौर पर फसलों पर छिड़के जाने वाली दवाइयों के प्रयोग को 80 प्रतिशत कम कर के खरपतवार नाशकों पर होने वाले खर्च को 90 प्रतिशत कम कर सकेगें। ये रोबोट कुछ समय पहले ही 'जोन डीरे' ने प्राप्त किए हैं जो कि कृषि रसायनों के प्रयोग को 90 प्रतिशत तक कम कर सकते हैं। 'ब्लू रिवर टेक्नोलोजी' कम्पनी स्वचालित यंत्रों व रोबोट का प्रयोग फसलों को खरपतवारों से बचाने के लिए उचित तरीकों की खोज में कर रही है। इस कम्पनी ने 'सी एंड स्प्रे' रोबोट विकसित किया है जो कम्प्यूटर विजन की सहायता से कपास के पौधों का निरीक्षण करता है तथा विधि पूर्वक छिड़काव करता है। ठीक प्रकार से छिड़काव करने से खरपतवार की प्रतिरोधकता भी उत्पन्न नहीं होती। एक अन्य 'ड्रोनफ्लाई' नामक कम्पनी ने अनुमान लगाया है कि ड्रोन रासायनिक खादों को हाथों की अपेक्षा 40–60 गुणा जल्दी छिड़काव कर सकते हैं। चीन में कपास

के खेतों में कीटनाशकों के छिड़काव के लिए ड्रोन का प्रयोग हो रहा है। ये एक बार में लगभग 1544 वर्ग मील क्षेत्र में छिड़काव कर सकते हैं।

बैंगलुरू के 'टारटन सैंस' छोटे कृषि क्षेत्रों के लिए रोबोट डिजाइन करते हैं जिसमें वे कम्प्यूटर विजन और रोबोटिक्स का प्रयोग उचित छिड़काव के लिए करते हैं। ये रोबोट खरपतवार और रोगग्रस्त पौधों को पहचान सकते हैं और उन पर छिड़काव कर सकते हैं। इस कम्पनी के पहले उत्पाद, 'बृज बोट' के पास एक खरपतवार पर छिड़काव करने वाला रोबोट है जो कपास के छोटे किसानों के लिए उत्तम है तथा यह खरपतवार नियंत्रण की लागत को 70 प्रतिशत तक कम कर देता है। इसी प्रकार बैंगलुरू में 'क्रॉपइन' नामक स्टार्ट–अप है जो कि कृषि क्षेत्र के प्रबंधन के लिए सास (Saas) यंत्र, कृत्रिम बुद्धिमत्ता तथा अन्य समाधान प्रदान करता है। यह बिग डाटा, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, सेटेलाइट से निरीक्षण आदि पर आधारित तकनीकों का प्रयोग करता है। ये सेवाएँ किसानों को अपने कृषि क्षेत्रों के डाटा का निरीक्षण व विश्लेषण करने की सुविधा प्रदान करता है और वर्तमान समय में फसल के स्वास्थ्य के बारे में जानकारी प्रदान करता है। इस स्टार्ट अप को विश्व बैंक ने तकनीकी भागीदार के रूप में भारत सरकार व विश्व बैंक की एक परियोजना में चयनित किया है जिससे कि मध्यप्रदेश व बिहार में कृषि क्रियाओं में तकनीकी परिवर्तन ला सकता है। साथ ही किसानों को जलवायु परिवर्तन और उसके बाद अप्रत्याशित मौसम से तालमेल करने में भी सहायता करेगा।

कम्प्यूटर विजन तकनीक, जमीन पर 'इंटरनेट ऑफ थिंग्स' तथा खेती की हुई भूमि के ऊपर उड़ने वाले ड्रोन से डाटा को इकट्ठा करके ज्यादा अच्छे समाधान प्राप्त किये जा सकते हैं। ड्रोन के अधिक क्षमता वाले कैमरे खेतों से अधिक अच्छी प्रकार इमेज प्राप्त कर सकते हैं जिसे एक उदासीन नेटवर्क को भेज कर खरपतवार, बीमारी या पौधे के अन्य तनावों को पौधों की वृद्धि की विभिन्न अवस्थाओं में पहचान लेता है। अल्गोरिदम से हम पहले ही 14 फसलों में 26 बीमारियों को 99 प्रतिशत सत्यता से पहचान सकते हैं। यदि पौधे संक्रमित पाये जाते हैं तो ड्रोन समाधान भी प्रदान कर सकता है।

3. उपसंहार

स्मार्ट कृषि में सूचना तथा संचार तकनीकों को मशीनों, यंत्रों तथा सेंसरों द्वारा कृषि उत्पादन प्रणाली में प्रयोग किया जाता है। नई तकनीकों जैसे कि 'इंटरनेट ऑफ थींग्स' और क्लाउड कम्प्यूटिंग द्वारा इस विकास को बढ़ाने की उम्मीद है जिसके साथ ही रोबोट तथा कृत्रिम बुद्धिमत्ता का खेती में अधिक प्रयोग किया जा सकेगा । रिमोट सेंसर पौधों में वास्तविक समय में खेत में होने वाले रोगों का पता प्रत्यक्ष लक्षणों के दिखाई देने से पहले ही लगा सकते हैं क्योंकि प्रकाश की परावर्तकता एक स्वस्थ पत्ते की अपेक्षा बीमार पत्ते से अलग होती है। मशीनों में तकनीकी सुधार, वैश्विक स्थिति प्रणाली, लेजर तकनीक, प्रवर्तक और मैकाट्रोनिक्स (अंतःस्थापित कम्प्यूटर, माइक्रोसेंसर, विद्युतीय मोटर आदि) से रोगों की सही पहचान तथा कीटनाशकों का सही स्थान पर प्रयोग करने की क्षमता में बढ़ोतरी हो सकती है। हाइपरस्पेक्ट्रल सेंसर और इमेजिंग तकनीकों ने पौधे व रोगकारक की परस्पर क्रियाओं को दिखाने तथा पौधों के रोगों को पहचानने की अत्यधिक सामर्थ्य रखते हैं। कृत्रिम बुधिमत्ता तकनीक पौधों में रोगों, कीटों तथा खेतों में कम पोषक तत्त्वों को पहचानने में सहायक है।

संदर्भ

1. Prathibha SR, Hongal A and Jyothi MP. 2017. IOT based monitoring system in smart agriculture. In: International Conference on Recent Advances in Electronics and Communication Technology (ICRAECT), Bangalore, 2017, pp. 81-84, doi: 10.1109/ICRAECT.2017.52.

2. Gondchawar N and Kawitkar RS. 2016. IoT based smart agriculture. *International Journal of Advanced Research in Computer and Communication Engineering* 5(6): 838-842.

3. Mahlein AK, Kuska MT, Behmann J, Polder G and Walter A. 2018. Hyperspectral sensors and imaging technologies in phytopathoogy: state of the art. *Annual Review of Phytopathology* 56: 535-558.

4. Sarker MNI, Islam MS, Ali MA, Islam MS, Salam MA and Mahmud SMH. 2019. Promoting digital agriculture through big data for sustainable farm management. *International Journal of Innovation and Applied Studies* 25(4): 1235-1240.

5. Coble KH, Mishra AK, Ferrell S and Griffin T. 2018. Big data in agriculture: A challenge for the future. *Applied Economic Perspectives and Policy* 40(1): 79–96.

6. Alejandro PDL and Diego R. 2009. Nanotechnology for parasitic p*lant* control. Pest Management Science 65(5): 540-545.

7. Ahmed N, De D and Hussain I. 2018. Internet of things (IoT) for smart precision agriculture and farming in rural areas. *IEEE Internet of Things Journal* 5(6): 4890-4899.

8. Antony AP, Leith K, Jolley C, Lu J and Sweeney DJ. 2020. A review of practice and implementation of the internet of things (IoT) for smallholder agriculture. *Sustainability* 12(9): 1-19.

9. Hardaker JB, Lien G, Anderson JR and Huirne RB.2015. Coping with Risk in Agriculture: Applied Decision Analysis. CABI, Wallingford.

चल सको तो चलो

सफ़र में धूप तो होगी जो चल सको तो चलो
सभी हैं भीड़ में तुम भी निकल सको तो चलो

इधर उधर कई मंज़िल हैं चल सको तो चलो
बने बनाये हैं साँचे जो ढल सको तो चलो

किसी के वास्ते राहें कहाँ बदलती हैं
तुम अपने आप को ख़ुद ही बदल सको तो चलो

यहाँ किसी को कोई रास्ता नहीं देता
मुझे गिराके अगर तु सम्भल सको तो चलो

यही है ज़िन्दगी कुछ ख़्वाब चन्द उम्मीदें
इन्हीं खिलौनों से तुम भी बहल सको तो चलो

हर इक सफ़र को महफ़ूस रास्तों की तलाश
हिफ़ाज़तों की रिवायत बदल सकों तो चलो

कहीं नहीं कोई सूरज, धुआँ धुआँ है फ़िज़ा
ख़ुद अपने आप से बाहर निकल सको तो चलो

—निदा फ़ाजली

कोविड संकट की पृष्ठभूमि में एक नए समन्वयकारी चिकित्सा पद्धति की खोज

श्री संजय चौधरी
केन्द्रीय सड़क अनुसंधान संस्थान, दिल्ली
ई–मेल- sanjayc1965@gmail.com

सारांश

आज विश्व में बीमारियों का प्रकोप लगातार बढ़ रहा है और इसने स्वास्थ्य विशेषज्ञों की चिंता में भी वृद्धि कर दी है । पिछले कुछ वर्षों के दौरान विभिन्न मंचों पर स्वास्थ्य संबंधी इस चिंता की अभिव्यक्ति और इस समस्या पर चर्चा–परिचर्चा का दौर तेज हुआ है । स्वास्थ्य विशेषज्ञों एवं चिकित्सा कर्मियों की यह चिंता बेवजह नहीं है क्योंकि कोविड–19 वायरस ने पिछले लगभग डेढ़–दो वर्षों के दौरान एक ऐसा संकट उपस्थित कर दिया है जिसका निकट भविष्य में कोई अंत नजर नहीं आ रहा है। कोविड–19 महामारी के मारक प्रभाव से कोई भी देश अछूता नहीं बचा है। दुनिया ने देख लिया है कि वायरसों के खिलाफ जितनी अधिक दवाओं की खोज की जाती है, ये वायरस और भी मजबूत होकर नए रूप में प्रकट हो जाते हैं।

हालांकि आज विश्व में अंग्रेजी चिकित्सा या एलोपैथिक उपचार पद्धति का बोलबाला है लेकिन कोविड–19 के प्रकोप के कारण पूरे विश्व में विभिन्न पारंपरिक एवं पुरातन आरोग्यवर्द्धक पद्धतियों की ओर रुझान बढ़ता जा रहा है। आयुर्वेद, यूनानी, होम्योपैथी, प्राकृतिक चिकित्सा, सिद्ध, सोवा रिग्पा, रेकी आदि अधिकांश उपचार पद्धतियां बहुत प्राचीन पद्धतियां हैं और भारत की परंपरागत चिकित्सा पद्धतियों में इन्हें सम्मिलित किया जाता है। पारंपरिक और वैकल्पिक की श्रेणी में रखी जाने वाली ऐसी विभिन्न प्रचलित चिकित्सा पद्धतियों की प्रभावोत्पादकता को देखते हुए आज स्वास्थ्य सेवा को अधिक नैसर्गिक बनाने की कवायद जोर पकड़ रही है। स्वास्थ्य विशेषज्ञों के अनुसार एक ऐसी वैश्विक लहर का आगाज हुआ है जिसका लक्ष्य आम आदमी को बेहतर जीवन देना, चिकित्सक और मरीजों के बीच बेहतर रिश्ते की बुनियाद रखना और कम खर्च में अच्छा इलाज मुहैया कराना है। दुनिया भर के स्वास्थ्य विशेषज्ञ भी दबे स्वर में इस बात को स्वीकार करने लगे हैं कि कोविड–19 जैसे खतरनाक वायरसों से निपटने के लिए विभिन्न मानव समुदायों में सदियों से प्रचलित रहे अन्य चिकित्सा पद्धतियों की संभावनाओं की तलाश के प्रयासों को तेजी दी जानी चाहिए । स्वास्थ्य के क्षेत्र में चुनौतियां बढ़ती जा रही हैं और इस पृष्ठभूमि में स्वास्थ्य–सेवा के क्षेत्र को नई ऊर्जा की आवश्यकता है । समन्वयकारी चिकित्सा पद्धति के विकास के आधार पर स्वास्थ्य व्यवस्था को अधिक सुव्यवस्थित और जनहितकारी स्वरूप प्रदान किया जा सकता है ।

की–वर्ड्सः कोविड 19 वायरस (Covid-19 Virus), पारंपरिक चिकित्सा (Traditional Therapy), पूरक चिकित्सा (Complimentary Therapy), वैकल्पिक चिकित्सा। (Alternative Therapy), वेलनेस चिकित्सा (Wellness Therapy), समन्वयकारी चिकित्सा (Co-ordinative Therapy)

1. आधुनिक स्वास्थ्य सेवा और कोविड संकट

आज विश्व में बढ़ते प्रदूषण तथा जीवनशैली के परिवर्तन ने स्वास्थ्य के क्षेत्र में अनेक नई समस्याएं और विकट चुनौतियां उपस्थित कर दी हैं । वैश्विक परिदृश्य में बीमारियों के स्वरूप, इनके प्रकार और इनकी गंभीरता में वृद्धि की एक नई प्रवृत्ति दिखाई दे रही है जो लगातार चिंताजनक ऊँचाई को छू रही है । वर्तमान संदर्भ में कोविड–19 वायरस आज भारत समेत दुनिया भर में मानव के स्वास्थ्य और जीवन के लिये गंभीर चुनौती बनकर खड़ा है । हमने देखा है कि जब तक इस वायरस की वैक्सीन की खोज होती है, तब तक यह अपने एक नए रूप में अवतरित हो जाता है ।

इस पृष्ठभूमि में आधुनिक युगीन स्वास्थ्य के सामान्य परिदृश्य और कोविड के इलाज के लिए उपलब्ध चिकित्सा व्यवस्था पर चर्चा करना आवश्यक हो जाता है । यह सत्य है कि बीमारियों और महामारियों में एलोपैथिक चिकित्सा की अपनी सीमाएं हैं । लेकिन जिस प्रकार, कोविड मरीजों के लिए दवाओं, ऑक्सीजन सिलेंडर और यहां तक कि बेड की कमी भी देखी गई, उसने आम लोगों के मन में इस धारणा को बल दिया कि एलोपैथिक उपचार पद्धति को भी स्वास्थ्य की दृष्टि से अंतिम सत्य नहीं माना जा सकता ।

कोरोना की इस बीमारी के उपचार के लिए जब तक टीके की खोज नहीं की गई थी, तब तक हाइड्रोक्सीक्लोरोक्वीन और एजिथ्रोमाइसिन जैसी पुरानी दवाइयों एवं गंभीर मामलों में स्टीरॉयड के प्रयोग की खबरें आती रहीं। इस क्रम में प्लाजमा थेरेपी का उपयोग भी किया गया और बाद में बड़े स्तर पर 'हर्ड इम्यूनिटी' की भी चर्चा हुई । लेकिन अभी तक कोविड–19 वायरस का प्रकोप शांत नहीं हुआ है । विशेषज्ञों ने अगले कुछ महीनों के दौरान दिल्ली–एनसीआर समेत देशभर में कोरोना वायरस संक्रमण की तीसरी लहर की आशंका जताई है ।

2. उपचार की विभिन्न चिकित्सा पद्धतियां

मानव समाज में लोकप्रिय विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों के संबंध में एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि स्वास्थ्य लाभ के लिए प्रचलित अंग्रेजी चिकित्सा या एलोपैथिक उपचार पद्धति अपेक्षाकृत एक नई उपचार पद्धति मानी जाती है जबकि पूरे विश्व में अनेक आरोग्यवर्द्धक पद्धतियां पहले से प्रचलन में रही हैं । अक्सर एलोपैथिक पद्धति के अलावा प्रचलित अन्य चिकित्सा पद्धतियों को पारंपरिक चिकित्सा पद्धति के नाम से ही जाना जाता है। यहां सबसे पहले यह समझना आवश्यक है कि पारंपरिक चिकित्सा पद्धति से वास्तव में हमारा क्या तात्पर्य है?

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार पारंपरिक चिकित्सा या लोक चिकित्सा कई मानव पीढ़ियों के द्वारा विकसित वे ज्ञान प्रणालियाँ होती हैं जिनके प्रयोग से आधुनिक चिकित्सा प्रणाली से भिन्न तरीके से शारीरिक व मानसिक रोगों की पहचान, रोकथाम, निवारण और इलाज किया जाता है। स्वास्थ्य को बनाए रखने और शारीरिक व मानसिक बीमारियों की रोकथाम करने, उसे समझने और इलाज की अलग–अलग देशी संस्कृतियों से जुड़े जिन सिद्धांतों, विधियों और अनुभव का इस्तेमाल होता है उसे ही सामान्य तौर पर पारंपरिक चिकित्सा कहा जाता है।

पारंपरिक चिकित्सा के संबंध में ऐसा माना गया है कि स्वास्थ्य संबंधी ऐसी बहुत सारी परंपराएं हैं जो देश की अपनी पारंपरिक चिकित्सा का हिस्सा नहीं है और प्रचलित स्वास्थ्य सेवा प्रणाली में पूरी तरह से समाहित नहीं की गई हैं। कुछ देशों में 'पारंपरिक चिकित्सा' शब्द के बदले 'पूरक चिकित्सा' और 'वैकल्पिक चिकित्सा' का भी प्रयोग किया जाता है । साथ ही, इसके लिए एक साथ 'पूरक और वैकल्पिक चिकित्सा' जैसे शब्द भी प्रचलित हैं। यह जानना रोचक होगा कि उपचार की 'पारंपरिक चिकित्सा' पद्धति आखिरकार आधुनिक चिकित्सा से कैसे भिन्न है। चिकित्सा के कुछ मूलभूत मापदंडों के आधार पर इस अंतर को समझा जा सकता है (तालिका–1)।

तालिका–1: पारंपरिक चिकित्सा पद्धति और आधुनिक चिकित्सा पद्धति के मूलभूत अंतर

क्र.	मापदंड	पारंपरिक चिकित्सा	आधुनिक चिकित्सा
1.	ज्ञान का संरक्षण	खुली पहुंच	बंद, पेटेंट संरक्षित
2.	सूत्रीकरण (फॉरमुलेशन)	रोगी के परामर्श के दौरान तदर्थ तैयार करना	पूर्व–निर्धारित और एक बार नैदानिक परीक्षणों में जांच किए जाने के बाद पुनः परीक्षण किए जाने तक परिवर्तित नहीं किया जा सकता है

क्र.	मापदंड	पारंपरिक चिकित्सा	आधुनिक चिकित्सा
3.	विनियमन	वस्तुतः कोई नहीं, हालांकि कुछ देश नियम और मानकीकरण लागू करने की कोशिश कर रहे हैं	बेहद कठोर, इस हद तक कि दवाओं को बाजार में लाने में अब अरबों डॉलर का खर्च आता है
4.	परीक्षण	कोई औपचारिक परीक्षण नहीं, पीढ़ियों के माध्यम से ज्ञान का अंतरण हो रहा है।	विभिन्न चरणों में होने वाले कठोर परीक्षण, पहले सुरक्षा और फिर प्रभावोत्पादकता के लिए
5.	खुराक	अनिधार्रित : दी गई दवा की मात्रा लगभग समान हो सकती है, लेकिन सक्रिय संघटक (जो वास्तव में खुराक हैं) बहुत भिन्न हो सकता है।	निश्चित खुराक जो उम्र या वजन, या बीमारियों की गंभीरता के साथ केवल थोड़ी भिन्न होती है।
6.	परामर्श	लंबा है, और रोगी से केवल उनके लक्षणों के बारे में ही नहीं बल्कि, कई संबंधित प्रश्न पूछे जाते हैं	प्राथमिक और माध्यमिक देखभाल, दोनों में परामर्श संक्षिप्त और केंद्रित होता है। खासकर जब राष्ट्रीय स्वास्थ्य प्रणाली पर दबाव होता है।
7.	प्रशिक्षण	चिकित्सा की दोनों प्रणालियों में कई वर्षों तक लंबे प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, लेकिन पारंपरिक चिकित्सा के साथ, ज्ञान अक्सर परिवारों के माध्यम से व्यक्तिगत स्तर पर चलता रहता है और अक्सर उपचारकों के परिवार में ही चिकित्सक पैदा होते हैं।	अक्सर व्यावसायिक – स्वास्थ्य पेशेवर स्कूलों और विश्वविद्यालयों में औपचारिक प्रशिक्षण से गुजरते हैं।

(स्रोत - http://latinalista.com/culture-2/integrating-modern-and-traditional-Therapy-facts-and-figures)

3. आधुनिक स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में समन्वयपूर्ण उपचार की तलाश

आधुनिक स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में फार्मा लॉबी पूरी दुनिया में जनमत को प्रभावित करता रहा है। किसी विशेष चिकित्सा पद्धति के पक्ष या विपक्ष में ऐसी लॉबी के द्वारा मुहिम चलाने के अनेक उदाहरण दुनिया ने देखे हैं। लेकिन चिकित्सा की विभिन्न पद्धतियों को पश्चिमी मानकों के अनुसार परखने तथा इनकी वैज्ञानिकता और अवैज्ञानिकता की बात करना बेमानी है। ऐसा भी देखा गया है कि जहां एलोपैथी काम नहीं करती, वहां आयुर्वेद प्रभावी होता है और जहां यूनानी कमजोर होती है, वहां एलोपैथिक पद्धति कारगर सिद्ध होती है ।

आधुनिक युग की एक विशेष बात ये है कि आजकल लोग लंबे समय तक जीवित रहने लगे हैं और जीवनशैली में बदलाव ने लोगों को कम उम्र में ही बीमारियों का निशाना बना दिया है । लेकिन बहुत सारे मामलों में एलोपैथिक डॉक्टर इन बीमारियों का इलाज नहीं कर पा रहे हैं। कोविड–19 के विस्तार की विस्फोटक गति और कोविडग्रस्त रोगी में उत्पन्न विभिन्न जटिलताओं के उपचार एवं प्रबंधन में उन्नत देशों को भी अनेक समस्याओं का

सामना करना पड़ा है। इस पृष्ठभूमि में अन्य पद्धतियों में सदियों से प्रचलित हल्दी, तुलसी, मुलेठी, गिलोय, आंवला, नागर मोथा, अश्वगंधा जैसी घरेलू गुणकारी वस्तुओं और पौधों के इस्तेमाल में वृद्धि हुई।

आयुर्वेदिक उत्पाद 'कोरोनिल किट' (पतंजलि योगपीठ, हरिद्वार) की खोज पर भले ही अधिकतर मीडिया में कुछ विवाद छाया रहा हो लेकिन अनौपचारिक या व्यक्तिगत रूप से कई डॉक्टरों ने कोरोना से बचाव के लिए अपने मरीजों को इसका प्रयोग करने की सलाह दी। इसी प्रकार, कोरोनाग्रस्त होने पर प्राणायाम, कपाल भाति, अनुलोम–विलोम जैसे योग विधियों को डॉक्टरों ने बहुत कारगर और उपयोगी बताया । कोरोना जनित मनोशारीरिक विकारों से बचाव के लिए सरकारी और गैर सरकारी संगठनों की ओर से ध्यान, आसन एवं मुद्राओं का नियमित रूप से अभ्यास करने की सलाह दी गई (चित्र–1 एवं चित्र–2) और बहुत बड़ी संख्या में लोगों ने इन सबको अपने जीवन में अपनाया।



चित्र–1: कोविड 19 संबंधी आयुष मंत्रालय द्वारा जारी प्रोटोकॉल

(https://www.ayush.gov.in/docs/ayush-Protocol-covid-19.pdf)

कोविड की इस त्रासदी के दौरान इलाज के लिए पश्चिमी जगत भी चिकित्सा की पारंपरिक पद्धतियों में रुचि लेने लगा है और इन पद्धतियों में विश्वास दिखला रहा है। पुरातन पद्धतियों, आरोग्यवर्धक विधियों एवं प्राकृतिक उत्पादों से स्वास्थ्य लाभ की यह प्रवृत्ति तेजी से उभर रही है क्योंकि काफी लंबे समय तक कोविड– 19 का कोई इलाज उपलब्ध नहीं था । शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने एवं कोरोना वायरस के संक्रमण को रोकने में इन उत्पादों की प्रभाविता के कारण हर्बल और आयुर्वेदिक दवाओं की मांग जोर पकड़ रही है तथा देशज एवं जड़ी बूटी आधारित औषध उद्योग में नई संभावनाएं जन्म ले रही हैं ।



चित्र–2: कोरोना के संक्रमण के निवारण संबंधी आयुष मंत्रालय का अभियान
(स्रोत–आयुष मंत्रालय @moayush)

ऐसे में एलोपैथिक पद्धति को एकमात्र 'वैज्ञानिक' उपचार पद्धति बताने वाले विकसित देशों में आ रहा परिवर्तन उल्लेखनीय है। पूरे विश्व में आज स्वास्थ्य सेवा को अधिक नैसर्गिक बनाने की कवायद जोर पकड़ रही है । बीते कुछ वर्षों में एक ऐसी वैश्विक लहर का आगाज हुआ है जिसका लक्ष्य आम आदमी को बेहतर जीवन देना, चिकित्सक और मरीजों के बीच बेहतर रिश्ते की बुनियाद रखना और कम खर्च में अच्छा इलाज मुहैया कराना है, जो मौजूदा चिकित्सा पद्धति नहीं दे रही है। स्पष्ट है कि बड़े पैमाने पर चिकित्सा

की विभिन्न पद्धतियों में सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यकता महसूस की जा रही है।

4. वेलनेस और समन्वयकारी चिकित्सा

स्वास्थ्य विशेषज्ञ बताते हैं कि पारम्परिक चिकित्सा पद्धतियों के अंतर्गत भारत की आयुर्वेद चिकित्सा मुख्य रूप से कारगर पायी जा रही है। ब्रिटेन, संयुक्त अरब अमीरात, स्वीडन, इंडोनेशिया और संयुक्त राज्य अमेरिका पहले से ही आयुर्वेद को चिकित्सा सेवा प्रणाली के रूप में मान्यता दे चुके हैं और तीस से अधिक देश आयुर्वेद को अपने–अपने देश में चिकित्सा पद्धति के रूप में मान्यता देने जा रहे हैं । इसी नीति के तहत् योग, हर्बल मेडिसिन, शाकाहार आदि को बढ़ावा दिया जा रहा है ।

'सरल सादा जीवन', 'प्रकृति की ओर लौट चलो' और 'प्राकृतिक तादात्म्य' या 'पूर्ण संतुलन की स्थापना' जैसे मंत्र आज फिर लोगों को आकर्षित करने लगे हैं । स्वास्थ्य की जटिल आधुनिक समस्याओं के निदान हेतु ऐसी कुछ परियोजनाएं शुरू की गई हैं जो पूरब और पश्चिम के 'वेलनेस' आचार्यों को एकजुट कर आधुनिक अनुसंधान और प्राचीन ज्ञान के इलाज से रोगों की रोकथाम पर शोध करे । इसका उद्देश्य स्वास्थ्य सेवा को एक समग्र रूप देते हुए चिकित्सा की एक मल्टीस्किल तकनीक विकसित करना है।

अमेरिका के नेशनल सेंटर फॉर कॉम्प्लीमेंटरी ऐंड आल्टरनेटिव मेडीसिन ऐसे उदाहरणों का उल्लेख करता है जिसमें अन्य पद्धतियों के अतिरिक्त प्राकृतिक चिकित्सा, पाद–चिकित्सा, जड़ी–बूटी, आयुर्वेद, ध्यान, योग, पोषण–आधारित उपचार पद्धतियां शामिल हैं । शोध के माध्यम से सिद्ध हुआ है कि शाकाहार के साथ शरीर और मन में सकारात्मक भावों को जगा कर दिल की बीमारी, अवसाद, तनाव, कोविड जनित श्वसन तंत्र के संक्रमण आदि बीमारियों को बहुत हद तक नियंत्रित किया जा सकता है । विविध प्रकार के प्राकृतिक इलाज की ओर रुख कर रहे इस नए प्रारूप को इंटिग्रेटेड मेडिसिन या समन्वयकारी चिकित्सा कहा जा रहा है ।

अमरीका में समन्वयकारी चिकित्सा विधियां इतनी तेजी से लोकप्रिय हो रही है कि वहां 10 में से हर 4 अमरीकी अपने इलाज के लिए इन्हें प्राथमिकता देने लगा है । प्रकृति सम्मत व नैसर्गिक इलाज की विधि की खोज में अब ऐसी औषधियों पर अनुसंधान किया जा रहा है जो शरीर को हानि पहुंचाए बिना बीमारी को जड़ से ही मिटा दे और दोबारा उसे उभरने न दे । प्रकृति की ओर जाने की यही खोज पारम्परिक चिकित्सा पद्धतियों पर आकर रुक जाती है जिसमें भारत की आयुर्वेद चिकित्सा का प्रमुख स्थान है ।

'संपूर्ण स्वास्थ्य' की अवधारणा सबसे प्राचीन भारतीय अवधारणाओं में से है जो 'सर्वे सन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः' सूक्ति से स्पष्ट होता है । यह अवधारणा आज पूरे विश्व में लोकप्रिय हो रही है । इसके साथ ही भारत की आयुर्वेदिक, यौगिक और आध्यात्मिक शक्तियों तथा आधुनिक आरोग्यवर्धक पद्धतियों का महत्व अधिकांश देश अब समझने लगे हैं। विभिन्न देशों में सदियों से प्रचलित रही एक्यूपंचर, एक्यूप्रेशर, योग, सम्मोहन, संगीत चिकित्सा, हर्बल चिकित्सा, मालिश आदि विविध पद्धतियों को भी आजमाया जा रहा है । विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट में भी पारंपरिक चिकित्सा पद्धति, जड़ी बूटियों और प्राकृतिक औषधियों की मांग में वृद्धि होने की बात कही गई है।

पारंपरिक चिकित्सा पद्धति में शामिल उपचार की विभिन्न विधियों को ही कई देश 'समन्वयकारी चिकित्सा पद्धति' के नाम से पुकारते हैं । सच्चाई ये है कि इन विधियों का उपयोग सदियों से रोगों के उपचार के लिए किया जा रहा है। आयुर्वेद, यूनानी, होम्योपैथी, प्राकृतिक चिकित्सा, सिद्ध, सोवा रिग्पा, रेकी आदि अधिकांश उपचार पद्धतियों बहुत प्राचीन पद्धतियां हैं और भारत की परंपरागत चिकित्सा पद्धतियों में इन्हें सम्मिलित किया जाता है । यह सभी सबसे लोकप्रिय चिकित्सा पद्धतियों के रूप में जानी जाती हैं।

भारतीय पद्धतियों को विश्व में लोकप्रिय बनाने में योग का महत्वपूर्ण योगदान है। विभिन्न भारतीय गुरूओं और योगाचार्यों ने कई पाश्चात्य देशों में योग, प्राणायाम, आसन

और यौगिक मुद्राओं को लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इतना अवश्य है कि संयुक्त राष्ट्र द्वारा अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाने के निर्णय से स्वास्थ्य के संदर्भ में पूरे विश्व में बड़े स्तर पर 'संपूर्ण आरोग्य' तथा 'जीवन जीने की कला' जैसी बातों के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न हुई है तथा होलिस्टिक हीलिंग और स्पिरिचुअल हीलिंग जैसी पुरानी धारणाएं फिर चलन में आने लगी हैं।

इन सबके परिणामस्वरूप भारतीय ध्यान, साधना, पंचकर्म, हवन, योग, आसन, विपश्यना, मंत्र विज्ञान आदि भारतीय जीवन दर्शन को समझने में लोग रुचि लेने लगे है । अब तो विश्व के कई देशों में इन विधियों के ऊपर वैज्ञानिक शोध और अन्वेषण की प्रक्रिया को सरकारी प्रोत्साहन भी दिया जा रहा है। कहीं न कहीं, इससे पश्चिमी चिकित्सा की मुख्यधारा के चिकित्सकों की मानसिकता भी बदल रही है तथा 'वैकल्पिक', 'पूरक', 'पारंपरिक' जैसे भेदभावजन्य सोच से निकलकर वे इनमें समन्वय स्थापित करने और एक समावेशी धरातल तैयार करने की ओर कदम बढ़ा रहे हैं ।

5. निष्कर्ष

कोरोना महामारी ने उपचार पद्धतियों के संदर्भ में आम लोगों के मन में 'संपूर्ण आरोग्य' या वेलनेस जैसी संकल्पनाओं की ओर झुकाव पैदा किया है। जनमत के साथ–साथ पश्चिमी चिकित्सा की मुख्यधारा के चिकित्सकों की मानसिकता में भी बदलाव देखने को मिल रहा है। वे आज विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों की 'डाउन टू अर्थ' अवधारणाओं को अपनाने में रुचि दिखला रहे हैं। शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने एवं कोरोना वायरस के संक्रमण को रोकने की दिशा में पारंपरिक पद्धतियों में प्रचलित देशज एवं जड़ी बूटी आधारित उत्पादों और आरोग्यवर्धक विधियों की कारगर भूमिका के कारण इनकी लोकप्रियता बढ़ रही है । उल्लेखनीय है कि चिकित्सा की अधिकांश पारंपरिक पद्धतियां प्राकृतिक सम्मत विधि से उपचार को प्राथमिकता देती हैं और 'नैसर्गिक आरोग्य' के मूल सिद्धांत पर आधारित हैं। यही कारण है कि विभिन्न पद्धतियों में तालमेल स्थापित करके स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र की तमाम चुनौतियों का समाधान निकाला जा सकता है । आज की गंभीर परिस्थितियों में यदि सभी पद्धतियों के चिकित्सक और चिकित्सा संगठन साथ आकर आपसी समन्वय से चिकित्सा की समन्वयकारी पद्धति का विकास करते हैं तो यह दूरदराज के उन लोगों के लिए भी उपयोगी होगा जिन्हें अभी तक कोई चिकित्सा सुविधा उपलब्ध नहीं है। यह समन्वय रामबाण औषधि के समान आधुनिक स्वास्थ्य सेवा को नई दिशा दे सकता है।

संदर्भ

1. Reimagining Global Health Governance in the Age of COVID-19, _Lawrence O. Gostin JD, Suerie Moon PhD, MPA, and _Benjamin Mason Meier JD, LLM, PhD, American Journal of Public Health (AJPH), November 2020, https://ajph.aphapublications.org/doi/10.2105/AJPH.2020.305933

2. Knowledge, perception, and practices towards COVID-19 pandemic among general public of India: A cross-sectional online survey, Goruntla Narayana, Bhupalam Pradeepkumar, Jinka Dasaratha Ramaiah, Thummala Jayasree, Dasari Laluprasad Yadav, and Bonala Kranthi Kumar, Curr Med Res Pract. 2020 July-August; 10(4): 153–159, Published online 2020 Jul 21. doi: 10.1016/j.cmrp.2020.07.013

3. सभी उपचार विधियों में समन्वय जरूरी, प्रशांत झा, 09.04.2020, https://www.patrika.com/opinion/coronavirusoutbreak-coordination-in-all-treatment-methods-is-necessary-5984660/

4. Utilization of Indigeous systems of medicine and homeopathy in India, INDIAN JOURNAL OF MEDICAL RESEARCH, August 2005, पदम सिंह एवं अन्य

5. संपूर्ण स्वास्थ्य, डॉ. दीपक चोपड़ा, मंजुल पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. भोपाल, 2000

6. Use of Complementary and Alternative Medicine (CAM) and Home Remedies by COVID-19 Patients: A Telephonic Survey, Jaykaran Charan,

Pankaj Bhardwaj et. Al, Indian J Clin Biochem. 2021 Jan; 36(1): 108–111, https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC7602770/

7. http://latinalista.com/culture-2/integrating-modern-and-traditional-Therapy-facts-and-figures

8. https://www.ayush.gov.in/docs/ayush-Protocol-covid-19.pdf

9. https://www.ayush.gov.in

10. https://mohfw.gov.in

11. https://www.nhp.gov.in

12. https://www.nia.nic.in

13. https://www.ccras.nic.in

14. https://www.mygov.in/covid-19

जिस प्रकार बंगला भाषा के द्वारा बंगाल में एकता का पौधा प्रफुल्लित हुआ है उसी प्रकार हिन्दी भाषा के साधारण भाषा होने से समस्त भारतवासियों में एकता तरु की कलियाँ अवश्य ही खिलेंगी।

—शारदाचरण मित्र

जापानियों ने जिस ढंग से विदेशी भाषाएँ सिखकर अपनी मातृभाषा को उन्नति के शिखर पर पहुंचाया है उसी प्रकार हमें भी मातृभाषा का भक्त होना चाहिए।

—श्यामसुन्दर दास

दैनिक जीवन में कोड मिक्सिंग–एक समीक्षा
(हिन्दी व अंग्रेजी भाषा की कोड मिक्सिंग)

सुश्री अरूणा घवाना,
ए–201/केराली अपार्ट्मेंट, प्लाट नं.–10
फेस–1, द्वारका, नई दिल्ली–110078
ईमेल– arunaghawana@gmail.com

सारांश

भारत विविधताओं से भरा देश है। अनेक विविधताओं के अलावा भाषा की विविधता भी हमारे देश में देखी जा सकती है। भारत ही एक ऐसा देश है, जिसमें दुनिया की सर्वाधिक भाषाएं बोली जाती है। इन भाषाओं की कई बोलियां हैं, पर बृहत संसार होने के बावजूद कई बोलियों का लिखित साहित्य मौजूद ही नहीं है। भौगोलिक कारणों के चलते डायग्लोसिया की स्थिति दो बोलियों के बीच भी पैदा हो जाती है। अर्थात एक बोली को उच्च दर्जा प्राप्त हो जाता है, जबकि दूसरी निचले पायदान पर ही रह जाती है। डायग्लोसिया की स्थिति ही कई बार कोड मिक्सिंग को जन्म देती है। हिन्दी और अंग्रेजी भाषा की कोड मिक्सिंग भी कई बार सामाजिक प्रकार्यों की वजह से भी होती है। महानगरों के लोगों की दिनचर्या में हम बड़े पैमाने पर हिन्दी और अंग्रेजी भाषा की कोड मिक्सिंग देखते हैं। इसमें किसी एक भाषा का अशुद्ध रूप भी प्रयोग करने में परहेज नहीं किया जाता ।

की–वर्ड्सः जीवन, कोड मिक्सिंग, भाषा–विज्ञान, डायग्लौसिया

1. प्रस्तावना

विश्वभर में लगभग 6,497 भाषाएं बोली जाती हैं। एक अनुमान के मुताबिक इनमें से 1,897 सिर्फ भारत वर्ष में बोली जाती हैं और ये भाषाएं चार अलग–अलग भाषा परिवारों की हैं–

इंडो आर्यन
द्रविड़
तिब्बत–बर्मी
आस्ट्रो–एशियाटिक

साधारण व सरल शब्दों में कहा जाए तो भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन को भाषा विज्ञान कहते हैं। भाषा विज्ञान को अनेक नामों से जाना जाता है किन्तु 'भाषा विज्ञान' सर्वाधिक प्रचलित नाम होने के साथ सहज रूप में भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन का भाव भी प्रकट करता है।

"समय–समय पर भाषा विज्ञान की परिभाषा को भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों ने परिभाषित किया है।

डॉ. देवेन्द्र शर्मा के अनुसार भाषा विज्ञान का सीधा अर्थ है भाषा का विज्ञान और विज्ञान का अर्थ है विशिष्ट ज्ञान। इस प्रकार भाषा का विशिष्ट ज्ञान भाषा विज्ञान कहलाएगा।

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार भाषा विज्ञान वह विज्ञान है, जिसमें भाषा विशिष्ट, कई और सामान्य का समकालिक, ऐतिहासिक, तुलनात्मक और प्रायोगिक दृष्टि से अध्ययन और तद्विषयक सिद्धांतों का निर्धारण किया जाता है।

डॉ. देवी शंकर मानते हैं कि भाषा विज्ञान को अर्थात भाषा के विज्ञान को भाषिकी कहते हैं। भाषिकी में भाषा का वैज्ञानिक विवेचन किया जाता है।

डॉ. मंगल देव शास्त्री मानते हैं कि भाषा विज्ञान उस विज्ञान को कहते हैं, जिसमें सामान्य रूप से मानवीय भाषा का, किसी विशेष भाषा की रचना और इतिहास का और अन्ततः भाषाओं, प्रादेशिक भाषाओं या बोलियों के वर्गों की पारस्परिक समानताओं और विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।

2. भाषा विज्ञान का क्षेत्र

विज्ञान का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है। जो विश्व की समस्त

भाषाओं तक फैला हुआ है। इसका संबंध मानव मात्रा की भाषा से है, इसीलिए इसका दूसरा छोर मानव चिन्तन से जुड़ा है। भाषा विज्ञान में वर्तमान तथा अतीत से संबंधित भाषाओं का अध्ययन किया जाता है, वर्तमान में बोलियों का अध्ययन भाषा विज्ञान का महत्त्वपूर्ण अध्ययन क्षेत्र है। जिसमें भाषा की उत्पत्ति एवं विकास के साथ–साथ विवेचनात्मक व विश्लेषात्मक अध्ययन किया जाता है। अर्थात इसमें उन भाषाओं का अध्ययन किया जाता है जो वाचिक रूप से प्रयुक्त नहीं होती, पर उनका साहित्य उपलब्ध है।

इसके अलावा भाषा विज्ञान का संबंध भाषा के विभिन्न कालों और इकाइयों से भी है।

भाषा विज्ञान की अध्ययन पद्धतियाँ

वर्णात्मक
ऐतिहासिक
तुलनात्मक
प्रयोगात्मक
संरचनात्मक"[1]

सरल शब्दों में कहें तो कोड मिश्रण का अर्थ है एक भाषा में दूसरी भाषा के तत्व मिला देना अर्थात बोलने या लिखने में दो या दो से अधिक भाषाओं को मिला देना, भाषा मिश्रण या कोड मिश्रण कहलाता है।

"दो या दो से अधिक भाषाओं के प्रयोग की क्षमता रखने वाला भाषा समाज अपने भाषा व्यवहार में इनका मिला–जुला रूप प्रयोग करने लगता है। इस प्रकार वह अपनी भाषा में दो या दो से अधिक कोड के घटक मिश्रित करके बोलता है अथवा एक भाषा बोलते–बोलते अनायास दूसरी भाषा का कोड उसमें जोड़कर अपनी बात पूरी करता है।

कोड परिवर्तन का मुख्य कार्य है कि द्विभाषिक या बहुभाषिक व्यक्ति, जो भाषाएं जानता व समझता है, वे भाषा प्रयोग के विशेष संदर्भ और स्थिति के अनुरूप बोलते समय ही परस्पर परिवर्तित होती रहती हैं।"[2]

3. वर्तमान स्थिति

कोड मिश्रण (CM) प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण (NLP) के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। विभिन्न माध्यमों एवं स्तरों पर लेन–देन की प्रक्रिया की वजह से लगभग हर भाषा कभी न कभी दो या दो से अधिक भाषाओं से संपर्क में आकर प्रभावित होती हैं। इसके कई स्तर व स्वरूप होते हैं।

कोड–मिक्सिंग से तात्पर्य है– एक भाषा के भाषाई इकाइयों जैसे वाक्यांशों, शब्दों और एक भाषा के अन्य शब्दों का उच्चारण। कोड मिश्रण या मिक्सिंग संवाद करते समय दो या दो से अधिक भाषाओं का मिश्रण होता है। यह उस वक्ता के लिए आसान है जो एक भाषा से एक शब्द या एक से अधिक शब्द लेने के लिए दो या दो से अधिक भाषाओं को जानता है और दूसरी भाषा बोलते समय इसे पेश करता है।

हिन्दी भाषा में अंग्रेजी भाषा की कोड मिक्सिंग हम कई स्तरों पर देखते हैं। इन्हीं स्वरूपों व स्तरों को हम अपनी दिनचर्या में सुनते हैं।

"भाषा समाज में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है और इससे समाजशास्त्रियों के संबंध में कोड मिक्सिंग का अध्ययन होता है। हमें हिन्दी वाक्यों में कई अंग्रेजी वाक्यांश मिलते हैं, जो भाषा उपयोगकर्ताओं की रचनात्मक और अप्रत्याशित प्रकृति को सामने लाते हैं। इसलिए यह सुरक्षित है कि कोड मिक्सिंग के लिए प्रेरणा लोगों के बीच संचार को बढ़ाती है या एकजुट हो जाती है।"[3]

प्रो. रोजलीन के अनुसार "कोड–मिक्सिंग उस आवृत्ति का भी चिंतनशील हो सकता है जिसके साथ एक व्यक्ति अपने दैनिक संचार में एक या दूसरी भाषा से विशेष अभिव्यक्तियों का उपयोग करता है। इस प्रकार, एक भाषा से एक अभिव्यक्ति दूसरी भाषा में समकक्ष अभिव्यक्ति की तुलना में अधिक आसानी से दिमाग में आ सकती है।"[4]

4. उद्देश्य

इस विषय पर बात करने की आवश्यकता इसलिए महसूस

की गई क्योंकि भाषिक वातावरण में कोड मिक्सिंग का एक बदलाव पिछले कई दशकों से चला आ रहा है, जिसे शुरुआती दिनों में फैशनपरस्ती, स्वयं को ज्यादा पढ़ा–लिखा साबित करना, अंग्रेजी भाषा के ज्ञान का दिखावा आदि नामों से पुकारा गया। किन्तु धीरे–धीरे यह सब उपमाएं शांत हो गईं और अब हिन्दी और अंग्रेजी भाषा का बखूबी इस्तेमाल हो रहा है, वह भी कोड मिक्सिंग के अंदाज में। और अब तो भाषा का यह रूप दैनिक जीवन में कुछ ऐसे घुलमिल गया है कि दशकों पुराने जुमले अब बेमाने लगते हैं। भाषाओं के मिश्रण का यह उदाहरण किसी ज्यादा पढ़े–लिखे या कम पढ़े–लिखे होने का द्योतक नहीं माना जा सकता।

आज जब यातायात व संचार माध्यमों ने विकास की नई गति पाई है तो भाषा द्वारा अपना वाचिक स्वरूप बदलना बड़ा ही स्वाभाविक है। अंग्रेजी और हिन्दी का यह मिश्रण हमें मानकीकृत स्तर पर लिखित रूप में नहीं मिलता।

वाचक व श्रोता द्वारा इस तरह का वार्तालाप आम घरों में प्रतिदिन सुना जा सकता है।

निम्न उदाहरण दिन के अलग–अलग काल खंडों से लिए गए हैं।

प्रातः काल

	हिन्दी	कोड मिक्सिंग	अंग्रेजी
1	मां, मेरा खाना दे दो, देर हो रही है।	मम्मा, मेरा लंच पैक कर दो, लेट हो रहा हूं।	लंच, पैक, लेट
2	मेरे जूते कहां हैं?	मेरे शू कहां हैं?	शू
3	आज घर देर से आऊंगा।	आज घर लेट आऊंगा।	लेट
4	बच्चे को नहला दो।	बेबी को शावर दे दो।	बेबी, शावर
5	आज दफ्तर में वार्ता है।	आज ऑफिस में मीटिंग है।	ऑफिस, मीटिंग

दोपहर

	हिन्दी	कोड मिक्सिंग	अंग्रेजी
1	खाना तैयार है, खाने की मेज पर आ जाओ।	लंच रेडी है, डाइनिंग टेबल पर आ जाओ।	लंच, रेडी, डाइनिंग टेबल
2	खाने के बाद नींद जरूरी है।	लंच के बाद नैप जरूरी है।	लंच, नैप
3	थाली और कांटा लाओ।	प्लेट्स और फोर्क लाओ।	प्लेट्स, फोर्क
4	मेरे थैले में लाल रंग की कलम है।	मेरे बैग में रेड पेन है।	बैग, रेड, पेन
5	एक प्याली चाय बनाओ।	एक कप चाय बनाओ।	कप

रात्रि

	हिन्दी	कोड मिक्सिंग	अंग्रेजी
1	खाना तैयार है।	डिनर रेडी है।	डिनर, रेडी
2	सैर करने जाना है।	वाक पर जाना है।	वाक
3	बिजली चली गई।	लाइट गई।	लाइट
4	बंद कर दो।	ऑफ कर दो।	ऑफ
5	सोने का समय हो गया है, शुभरात्रि।	ईट्स स्लीपिंग टाइम, गुड नाइट	ईट्स स्लीपिंग टाइम, गुड नाइट

उपरोक्त तालिका एक भारतीय परिवार के आधार पर तैयार की गई है।

इससे यह पता चला कि दिल्ली के परिवारों की भाषा में भाषा की कोड मिक्सिंग अब जाने अनजाने पैठ कर चुकी है। फिर भी इस स्तर पर हिन्दी भाषा के विलुप्त होने का खतरा नहीं माना जा सकता।

5. भावी दिशा

हिन्दी–अंग्रेजी भाषा के अलावा भी कई अन्य भाषाओं में कोड मिक्सिंग पर शोध हो चुका है पर शोधपरक दृष्टि से देखा जाए तो हिन्दी भाषा के इस कोड मिक्सिंग से क्या खोया और क्या पाया? शोध में यह भी देखा जा सकता है कि क्या दैनिक जीवन में भाषा के इस तरह के इस्तेमाल के चलते कहीं भाषा अपना मूल स्वरूप तो नहीं खो देगी। क्या इस प्रयोक्ताजन्य हिन्दी से भावी पीढ़ियां कहीं हिन्दी के मूल रूप से वंचित तो नहीं रह जाएंगी। क्या भाषा का मानकीकरण ही इसका एकमात्र उपाय है!

6. उपसंहार

भूमंडलीकरण के दौर में कोई भी भाषा किसी भौगोलिक सीमा की मोहताज नहीं है। इसलिए उसे सीमाओं में बांधकर नहीं रखा जा सकता। भूमंडलीकरण के प्रभाव के चलते विश्व के हर क्षेत्र में उपभोक्ता व प्रयोक्ताजन्य साहित्य का आगाज हुआ है। जिसके चलते हमें हिन्दी व अंग्रेजी का प्रयोक्ताजन्य प्रयोग अब दैनिक जीवन में घर–घर में देखने को मिलता है।

कोई भी भाषा तभी विस्तार पाती है, जब उसमें कुछ नए तत्व व कलेवर को पाने की क्षमता हो। हिन्दी भाषा यह सिद्ध करने में कहीं कमतर नहीं रही। हिन्दी एक समृद्ध व सशक्त भाषा है, इसमें कोई दो राय नहीं।

इस तरह देखा जाए तो एक भाषा के बहते दरिया में यदि दूसरी भाषा के शब्द जुड़ जाते हैं तो स्पष्ट हो जाता है कि उस स्थान विशेष पर किसी अन्य भाषा–भाषी का राजनैतिक प्रभाव जरूर रहा होगा और भारत में भी यही स्थिति रही। भारत पर अंग्रेजी हुकूमत 200 वर्ष रही, ऐसे में स्पष्ट है, कि भारत की राष्ट्रभाषा पर भी फर्क पड़ना था। भारत की आजादी पर प्रधानमंत्री द्वारा राष्ट्र को अंग्रेजी में संबोधित किया गया। यहीं से हम अंग्रेजों से आजाद तो हो गए, पर अपनी राष्ट्रभाषा को गुलाम बनाते रहे।

परन्तु अब जब हम सब इस भाषा के आदि हो गए हैं, तो सहर्षता व सहजता से इसे स्वीकार कर लेने में कोई बुराई नहीं। भाषा बहता दरिया है, और दरिया के पानी को एक जगह बांधने से उसमें सड़न आनी शुरू हो जाती है, अच्छा हो इसे बहने दिया जाए, फिर चाहे हिन्दी, अंग्रेजी के साथ बहे या उर्दू के साथ, उसमें कोड मिक्सिंग से हिन्दी गतिमान व ज्यादा से ज्यादा समृद्धतर होती रहेगी।

संदर्भ सूची

1. https://www.scotbuzz.org/2018/12/bhasha.vigyan-ki-paribhasha.html
2. प्रो. दिलीप सिंह, हिन्दी भाषा चिंतन, भाषा प्रयोग की दिशा–दो, वाणी प्रकाशन, संस्करण 2009 पृष्ठ–109
3. https://files.eric.ed.gov/fulltext/ED132858.pdf
4. https://slideplayer.com/slide/6618903

ग्रंथ सूची

1. अनुप्रयुक्त भाषा की व्यवहारिक परख–डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा, वाणी संस्करण 2015 पृष्ठ 42।
2. http://laurentmaheux.free.fr/HIN3B14bSHH/HIN3B14b_cours-11-2013-04-16-sociolinguistique-du-Hindi-2.pdf
3. https://link.springer.com/chapter/10.1007/978-981-10-5780-9_11
4. https://lgandlt.blogspot.com/2019/12/unit-01.html
5. https://pt.slideshare.net/fatimagul102/code-mixing-and-code-switching
6. https://umagunturi789.medium.com/a-primer-on-code-mixing-code-switching-9bbde2a15e57

अंग्रेजी आवश्यक है क्योंकि वर्तमान में विज्ञान के मूल काम अंग्रेजी में हैं। मेरा विश्वास है कि अगले दो दशक में विज्ञान के मूल काम हमारी भाषाओं में आने शुरू हो जायेंगे, तब हम जापानियों की तरह आगे बढ़ सकेंगे।

– डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

भारत में ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का विश्लेषण

डॉ. नीरज चौरसिया
केंद्रीय पुस्तकालय
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली
हौज खास, नई दिल्ली–110016
ई–मेल : neerajchaurasia.iit@gmail.com

सार

यह अध्ययन ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर पिछले दस वर्षों के दौरान किए जा रहे अनुसंधान का विभिन्न पहलुओं पर विश्लेषण करने का एक प्रयास है। इसके लिए, भारत के वैज्ञानिकों, संकाय एवं शोधार्थियों द्वारा प्रकाशित शोध पत्र जो कि 31 अगस्त 2021 तक एल्सेवियर स्कोपस (Scopus) डेटाबेस में अनुक्रमित थे, को पुनर्प्राप्त किया गया। इसके पश्चात् पिछले 10 वर्षों में प्रकाशित इन शोध पत्रों को प्रकाशन के वर्ष के आधार पर, प्रकाशनों के प्रकार के आधार पर, शोध पत्रों का विषयवार वितरण, स्रोत शीर्षक के आधार पर, लेखकों द्वारा प्रकाशित शोध पत्रों के आधार पर वितरण एवं वैश्विक सहयोग से प्रकाशित शोध पत्रों के अनुसार वितरण को विश्लेषित किया गया। इस डेटाबेस के द्वारा प्राप्त परिणाम किसी भी समय सीमाओं के बिना पुनर्प्राप्त किए गए। विश्व के विभिन्न देशों द्वारा वर्ष 1964 से लेकर 31 अगस्त 2021 तक कुल 8298 शोध पत्र प्रकाशित किए गए जो एल्सेवियर्स स्कोपस (Scopus) में अनुक्रमित थे। इनमें से कुल 1007 शोध पत्र भारत के वैज्ञानिकों/संकाय/शोधकर्ताओं द्वारा प्रकाशित किए गए। पिछले 10 वर्षों (वर्ष 2011 से 2020) के दौरान भारत के वैज्ञानिकों/संकाय/शोधकर्ताओं द्वारा ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर कुल 675 शोध पत्र प्रकाशित किए गए। विश्लेषण करने पर यह पाया गया कि वर्ष 1964 में ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर पहला शोध पत्र एस. मुखर्जी, पैथोलॉजी स्कूल, ग्रांट मेडिकल कॉलेज, मुंबई द्वारा ब्रिटिश मेडिकल जर्नल में प्रकाशित किया गया था। शोधार्थियो द्वारा सर्वाधिक शोध पत्र 493(73.03%) 'जर्नल्स' में अर्थात प्राथमिक स्रोतों में प्रकाशित करने को प्राथमिकता दी गई । शोधार्थियो द्वारा सबसे अधिक शोध पत्र 'इंडियन जर्नल ऑफ ओटोलरींगोलॉजी एंड हेड एंड नेक सर्जरी' 27(4.01%) में प्रकाशित किए। ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर कुल 675 प्रकाशनों में से 'मैडिसिन' विषय पर सर्वाधिक 591 (87.85%) पेपर्स का प्रकाशन किया। ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर 100 से अधिक शोध पत्रों का प्रकाशन करने वाले देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका 2563(30.88%) प्रकाशनों के साथ सबसे अग्रणी देश है, जिसके बाद भारत 1009(12.15%) और फ्रांस 425(5.12%) प्रकाशनों के साथ क्रमशः तीसरे स्थान पर रहा। पिछले 10 वर्षों में भारत द्वारा संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ 27(4%) शोध पत्रों में सहकार्यता की गई जो कि अन्य देशों कि तुलना में सर्वाधिक है ।

की–वर्ड् : ब्लैक फंगस, म्यूकोर्मिकोसिस, कोविड–19, फंगल संक्रमण

1. परिचय

म्यूकोर्मिकोसिस या ब्लैक फंगस एक फंगल संक्रमण जो अब तक बहुत कम लोगों को होता था, लेकिन पिछले कुछ दिनों में इसने कोविड–19 के मरीजों को तेजी से शिकार बनाया है। वातावरण में उपस्थित कवक, बीजाणुओं के संपर्क में आने से लोगों में म्यूकोर्मिकोसिस होता है । एक रिपोर्ट के अनुसार, यह बीमारी उन लोगों को हो रही है जो कोविड–19 से ठीक हो रहे हैं या ठीक हो चुके हैं। इसके अलावा, जो मधुमेह के रोगी हैं और इम्यून सिस्टम अच्छी तरह से काम ना कर रहा हो तो वो भी इससे संक्रमित हो सकते हैं। यह बीमारी म्यूकोर्मिसेट्स नामक सूक्ष्म जीवों के एक समूह के

कारण होती है, जो पर्यावरण में प्राकृतिक रूप से मौजूद होते हैं, और ज्यादातर मिट्टी में तथा पत्तियों, खाद एवं ढेरों जैसे कार्बनिक पदार्थों के क्षय में पाए जाते हैं । सामान्य तौर पर, हमारे शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली ऐसे फंगल संक्रमण से सफलतापूर्वक लड़ती है, लेकिन हम जानते हैं कि कोविड–19 हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली को प्रभावित करता है । एक शोध के अनुसार, अगर किसी हाई डायबिटिक मरीज को कोरोना हो जाता है तो उसका इम्यून सिस्टम और ज्यादा कमजोर हो जाता है, ऐसे लोगों में ब्लैक फंगस इंफेक्शन फैलने की आशंका और ज्यादा हो जाती है। विश्व के विभिन्न संस्थानों/संगठनों द्वारा इस विषय पर शोध कार्य किए जा रहे हैं और की गई शोध के निष्कर्ष शोध पत्रों के रूप में प्रकाशित किए जा रहे हैं। ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित होने वाले शोध पत्रों की संख्या लगातार बढ़ रही है। यह अध्ययन ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का विभिन्न पहलुओं पर विश्लेषण करने का एक प्रयास है।

2. अध्ययन का उद्देश्य

इस अध्ययन का उद्देश्य ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर भारत में प्रकाशित समग्र शोध पत्रों का विभिन्न पहलुओं पर विश्लेषण करना है । शोध पत्रों का वर्षवार, विषयवार, स्रोत शीर्षकों तथा लेखकों के आधार पर, अंतर्राष्ट्रीय सहयोगध्सहकार्यता तथा सर्वाधिक शोध पत्र प्रकाशित करने वाले संस्थानों का विश्लेषण करना है ।

3. शोध की रूप रेखा एवं कार्य पद्धति

वर्तमान अध्ययन के लिए, भारत के वैज्ञानिकों, संकाय सदस्यों एवं शोधार्थियों द्वारा प्रकाशित शोध पत्र जो कि 31 अगस्त 2021 तक एल्सेवियर स्कोपस (Scopus) डेटाबेस में अनुक्रमित थे, को पुनर्प्राप्त किया गया । इसके पश्चात पिछले 10 वर्षों में प्रकाशित इन शोध पत्रों को प्रकाशन के वर्ष के आधार पर, प्रकाशनों के प्रकार के आधार पर, शोध पत्रों का विषयवार वितरण, स्रोत शीर्षक के आधार पर, लेखकों द्वारा प्रकाशित शोध पत्रों के आधार पर वितरण एवं वैश्विक सहयोग से प्रकाशित शोध पत्रों के अनुसार वितरण तथा विश्लेषित किया गया। इस डेटाबेस के द्वारा प्राप्त परिणाम किसी भी समय सीमाओं के बिना पुनर्प्राप्त किए गए थे। 1964 से लेकर 31 अगस्त 2021 तक इस डेटाबेस में कुल 1007 शोध पत्र अनुक्रमित किये गए थे जिन्हे पुनर्प्राप्त किया गया। इसके लिए TITLE-ABS-KEY (mucormycosis* OR zygomycosis* OR phycomycosis*) AND (LIMITTO)AFFILCOUNTRY, "India") का प्रयोग किया गया । पिछले 10 वर्षों (वर्ष 2011 से 2020) में ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर कुल 675 शोध पत्र प्रकाशित हुये जिन्हें माइक्रोसॉफ्ट–एक्सेल का उपयोग करके विश्लेषित किया गया।

4. शोध की परिसीमाएँ

इस अध्यन हेतु पिछले 10 वर्षों (वर्ष 2011 से 2020) के दौरान ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित व एल्सेवियर्स स्कोपस (Scopus) में अनुक्रमित शोध पत्रों को शामिल किया गया है इसलिये केवल वही शोध पत्र विश्लेषित किए गए हैं जो इस इंडेक्स में अनुक्रमित हैं ।

5. आंकड़ों का विश्लेषण और चर्चा

एकत्र किए गए आंकड़ों का विश्लेषण और तालिकाओं एवं ग्राफ के माध्यम से प्रस्तुतीकरण किया गया :

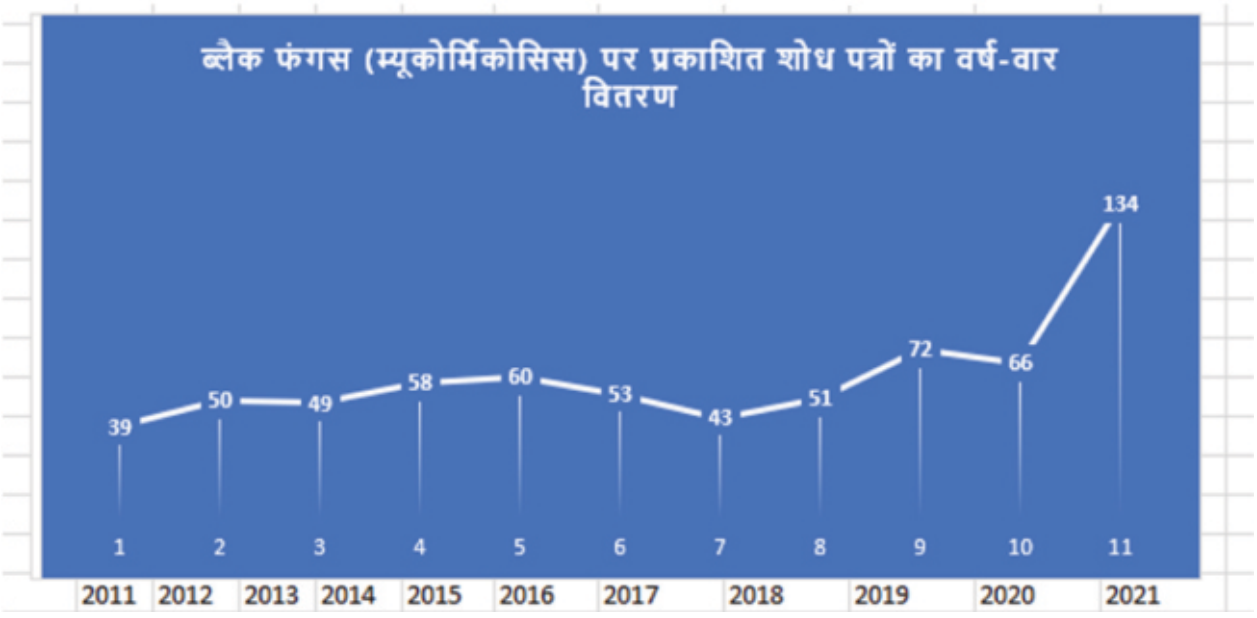
5.1 ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का वर्ष–वार वितरण

निम्न तालिका 5.1 एवं ग्राफ–5.1 द्वारा विश्व के विभिन्न देशों द्वारा अभी तक (1964 से लेकर 31 अगस्त 2021 तक) कुल 8298 शोध पत्र प्रकाशित किए गए जो एल्सेवियर स्कोपस (Scopus) में अनुक्रमित थे। इनमें से कुल 1007 शोध पत्र भारत के वैज्ञानिकों/संकाय/शोधकर्ताओं द्वारा प्रकाशित किए गए। पिछले 10 वर्षों (वर्ष 2011 से 2020) के दौरान भारत के वैज्ञानिकों/संकाय/शोधकर्ताओं द्वारा ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर कुल 675 शोध पत्र प्रकाशित किए गए। इन शोध पत्रों का वर्ष के आधार पर वितरण दर्शाया गया है।

तालिका–5.1: ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का वर्ष–वार वितरण

वर्ष	प्रकाशनों की संख्या	प्रतिशत
2021 (31 अगस्त)	134	19.85
2020	66	9.77
2019	72	10.66
2018	51	7.55
2017	43	6.37
2016	53	7.85
2015	60	8.88
2014	58	8.59
2013	49	7.25
2012	50	7.40
2011	39	5.77
कुल प्रकाशनों की संख्या	**675**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 1964 से 2021 की समयावधि के दौरान ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर विश्व के सभी देशों के द्वारा कुल 8298 शोध पत्र प्रकाशित किए गए। इनमें से कुल 1009(12 से 15 %) शोध पत्र भारत के वैज्ञानिकों/संकाय/शोधकर्ताओं द्वारा प्रकाशित किए गए। पिछले 10 वर्षों (वर्ष 2011 से 2020) के दौरान भारत के वैज्ञानिकों/संकाय/शोधकर्ताओं द्वारा ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर कुल 675 शोध पत्र प्रकाशित किए गए। 1964 से ही ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर शोध प्रारम्भ कर दी गयी थी। तालिका में शोध पत्रों के प्रकाशन में निरंतर वृद्धि देखी जा सकती है। भारत के वैज्ञानिक समुदाय द्वारा इस ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर शोध के बाद प्रकाशनों में काफी तेजी आई । वर्ष 2021 के शुरुआती आठ महीनों में यह सर्वाधिक दर्ज की गई, ये वो समय है भारत में कोरोना महामारी के साथ–साथ ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) के भी मामले सामने आए। विश्लेषण करने पर यह पाया गया कि वर्ष 1964 में ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर पहला शोध पत्र एस. मुखर्जी, पैथोलॉजी स्कूल, ग्रांट मेडिकल कॉलेज, मुंबई द्वारा ब्रिटिश मेडिकल जर्नल में प्रकाशित किया गया था। पिछले 10 वर्षों में शोध पत्रों के प्रकाशन में निरंतर वृद्धि देखी जा सकती है।



ग्राफ–5.1

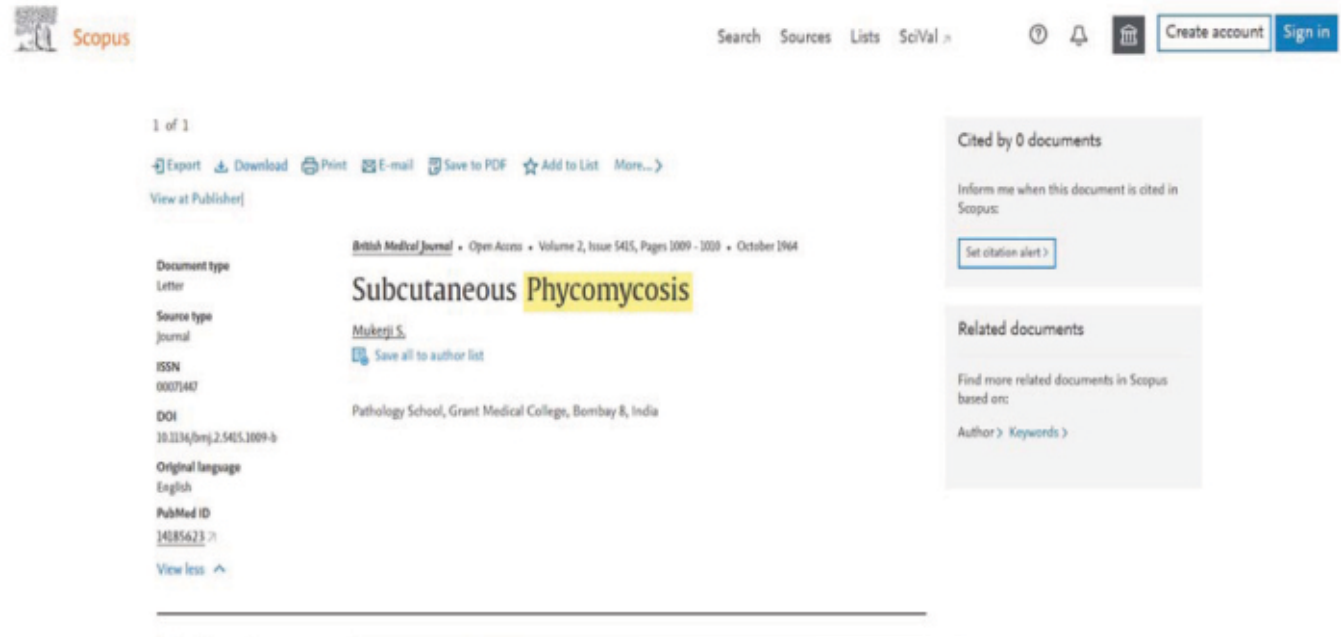
वर्ष 2021 (31 अगस्त) तक कुल 134 शोध पत्र प्रकाशित किए गए जो पिछले दस वर्षों में प्रकाशित शोध पत्रों का लगभग 20% हैं। वर्ष 2020 में प्रकाशनों कि संख्या लगभग 10% व 2019 में 11% थी, वर्ष 2011 से यह बृद्धि लगातार देखी गई । ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर विश्व के सभी देशों के द्वारा प्रकाशित कुल 675 शोध पत्रों को 4 हजार से अधिक उद्धरण (साइटेशन) प्राप्त हुए हैं। कुल 385 (57%) शोध पत्र ओपन एक्सैस प्लेटफॉर्म्स/जर्नल्स में प्रकाशित किए गए।

5.2. ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का प्रकारों के आधार पर वितरण

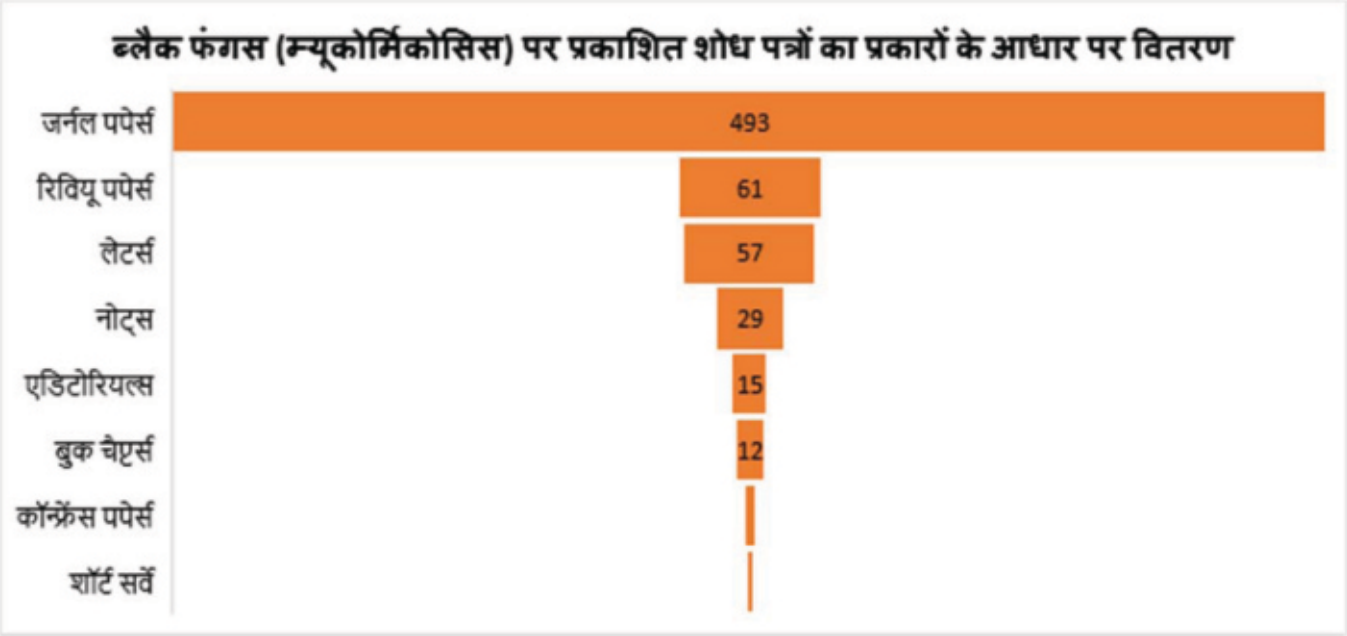
तलिका–5.2 एवं ग्राफ–5.2 में ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का प्रकारों के आधार पर वितरण दर्शाया गया है।

तालिका–5.2: ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का प्रकारों के आधार पर वितरण

प्रकारों के आधार पर प्रकाशनों वितरण	प्रकाशनों की संख्या	प्रतिशत
जर्नल पेपर्स	493	73.03
रिवियू पेपर्स	61	9.03
लेटर्स	57	8.44
नोट्स	29	4.29
एडिटोरियल्स	15	2.22
बुक चैप्टर्स	12	1.77
कॉन्फ्रेंस पेपर्स	5	0.74
शॉर्ट सर्वे	3	0.44



वर्ष 1964 में प्रकाशित पहले शोध पत्र का चित्र (स्रोत–एल्सेवियर स्कोपस (SCOPUS)



ग्राफ–5.2

उपर्युक्त तालिका एवं ग्राफ में यह देखा जा सकता है, वर्ष 2011 से 2020 की समयावधि के दौरान ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर कुल 675 शोध पत्रों में, शोधार्थियो द्वारा सर्वाधिक शोध पत्र 493 (73.03%) जर्नल पेपर्स के रूप में अर्थात प्राथमिक स्रोतों में प्रकाशित करने को प्राथमिकता दी गई। रिवियू पेपर्स में 61(9.03%); लेटर्स 57 (8.44%); नोट्स 29 (4.29%); एडिटोरियल्स 15(2.22%) व बुक चैप्टर्स 12(1.77%) में शोध पत्र में प्रकाशित किए गए। कॉन्फ्रेंस पेपर्स, शॉर्ट सर्वे तथा अन्य माध्यमों में प्रकाशनों की संख्या 10 से भी कम रही ।

5.3 ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का स्रोत शीर्षकों के आधार पर वितरण

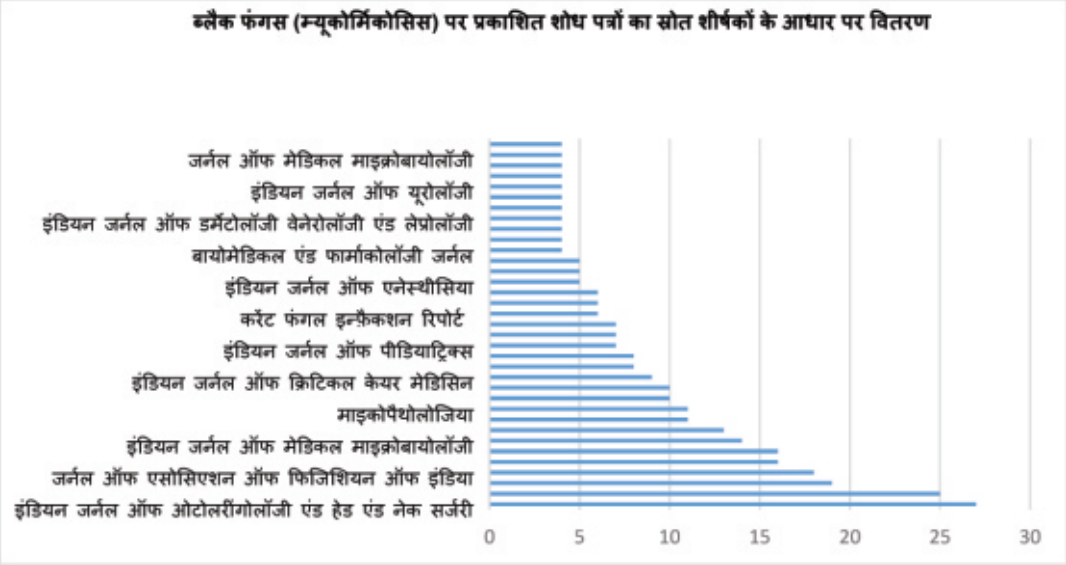
ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का शीर्ष 25 स्रोत शीर्षकों के आधार पर विवरण तालिका–5.3 एवं ग्राफ–3 द्वारा दर्शाया गया है। शोधार्थियो द्वारा सबसे अधिक शोध पत्र 'इंडियन जर्नल ऑफ ओटोलरींगोलॉजी एंड हेड एंड नेक सर्जरी' 27 (4.01%) में प्रकाशित किए गए। 'बीएमजे केस रिपोर्ट' 25 (3.71%)य 'क्लीनिकल एंड डॉयग्नॉस्टिक रिसर्च जर्नल' में 19 (2.82%)य 'जर्नल ऑफ एसोसिएशन ऑफ फिजिशियन ऑफ इंडिया' में 18 (2.67%)य 'इंडियन जर्नल ऑफ ऑथ्ल्मोलॉज' और 'मायकोसेस' में 16 (2.37%); 'इंडियन जर्नल ऑफ मेडिकल माइक्रोबायोलॉजी' में 14 (2.08%); 'इंडियन जर्नल ऑफ पैथोलॉजी एंड माइक्रोबायोलॉजी'13(1.93%); 'क्लिनिकल राइनोलॉजी', 'माइकोपैथोलोजिया' 11(1.63%); 'लंग्स इंडिया' और 'ट्रॉपिकल डॉक्टर' 10 (1.48%); 'इंडियन जर्नल ऑफ क्रिटिकल केयर मेडिसिन' 9 (1.33%); 'इंडियन जर्नल ऑफ नेफ्रोलॉजी' और 'मेडिकल माइकोलॉजी' 8(1.18%); 'इंडियन जर्नल ऑफ पीडियाट्रिक्स', 'इंडियन जर्नल ऑफ सर्जरी' और 'जर्नल ऑफ ओरल एंड मैक्सिलोफेशियल पैथोलॉजी' 7(1.04%); 'करेंट फंगल इन्फैकशन रिपोर्ट', 'डाइबिटिज एंड मेटाबोलिक सिंड्रोम क्लिनिकल रिसर्च एंड रिवियू', और 'डायग्नोस्टिक साइटोपैथोलॉजी' 6(0.89%); 'इंडियन जर्नल ऑफ एनेस्थीसिया', 'जर्नल ऑफ मैक्सिलोफेशियल एंड ओरल सर्जरी', और 'मेडिकल माइकोलॉजी केस रिपोर्ट'

5 (0.74%); 'बायोमेडिकल एंड फार्माकोलॉजी जर्नल', 'मिस्र जर्नल ऑफ रेडियोलॉजी एंड न्यूक्लियर मेडिसिन', 'इंडियन जर्नल ऑफ डर्मेटोलॉजी', 'इंडियन जर्नल ऑफ डर्मेटोलॉजी वेनेरोलॉजी एंड लेप्रोलॉजी', 'इंडियन जर्नल ऑफ ओटोलॉजी' 'इंडियन जर्नल ऑफ ट्रांसप्लांटेशन', 'इंडियन जर्नल ऑफ यूरोलॉजी', 'जर्नल इंडियन एकेडमी ऑफ क्लिनिकल मेडिसिन' 'जर्नल ऑफ इंडियन एकेडमी ऑफ ओरल मेडिसिन एंड रेडियोलॉजी', 'जर्नल ऑफ मेडिकल माइक्रोबायोलॉजी' और 'जर्नल ऑफ ओरल एंड मैक्सिलोफेशियल सर्जरी' में 4(0.59%) शोध पत्र प्रकाशित किए गए जो कि 1 प्रतिशत से भी कम है ।

तालिका–5.3 : ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का स्रोत शीर्षकों के आधार पर वितरण

स्रोत शीर्षक	प्रकाशनों की संख्या	प्रतिशत
इंडियन जर्नल ऑफ ओटोलरींगोलॉजी एंड हेड एंड नेक सर्जरी	27	4.01
बीएमजे केस रिपोर्ट	25	3.71
क्लीनिकल एंड डॉयग्नॉस्टिक रिसर्च जर्नल	19	2.82
जर्नल ऑफ एसोसिएशन ऑफ फिजिशियन ऑफ इंडिया	18	2.67
इंडियन जर्नल ऑफ ऑप्थल्मोलॉजी	16	2.37
मायकोसेस	16	2.37
इंडियन जर्नल ऑफ मेडिकल माइक्रोबायोलॉजी	14	2.08
इंडियन जर्नल ऑफ पैथोलॉजी एंड माइक्रोबायोलॉजी	13	1.93
क्लिनिकल राइनोलॉजी	11	1.63
माइकोपैथोलोजिया	11	1.63
लंग्स इंडिया	10	1.48
ट्रॉपिकल डॉक्टर	10	1.48
इंडियन जर्नल ऑफ क्रिटिकल केयर मेडिसिन	9	1.33
इंडियन जर्नल ऑफ नेफ्रोलॉजी	8	1.18
मेडिकल माइकोलॉजी	8	1.18
इंडियन जर्नल ऑफ पीडियाट्रिक्स	7	1.04
इंडियन जर्नल ऑफ सर्जरी	7	1.04
जर्नल ऑफ ओरल एंड मैक्सिलोफेशियल पैथोलॉजी	7	1.04

करेंट फंगल इन्फैकशन रिपोर्ट	6	0.89
डाइबिटिज एंड मेटाबोलिक सिंड्रोम क्लिनिकल रिसर्च एंड रिवियू	6	0.89
डायग्नोस्टिक साइटोपैथोलॉजी	6	0.89
इंडियन जर्नल ऑफ एनेस्थीसिया	5	0.74
जर्नल ऑफ मैक्सिलोफेशियल एंड ओरल सर्जरी	5	0.74
मेडिकल माइकोलॉजी केस रिपोर्ट	5	0.74
बायोमेडिकल एंड फार्माकोलॉजी जर्नल	4	0.59
मिस्री जर्नल ऑफ रेडियोलॉजी एंड न्यूक्लियर मेडिसिन	4	0.59
इंडियन जर्नल ऑफ डर्मेटोलॉजी	4	0.59
इंडियन जर्नल ऑफ डर्मेटोलॉजी वेनेरोलॉजी एंड लेप्रोलॉजी	4	0.59
इंडियन जर्नल ऑफ ओटोलॉजी	4	0.59
इंडियन जर्नल ऑफ ट्रांसप्लांटेशन	4	0.59
इंडियन जर्नल ऑफ यूरोलॉजी	4	0.59
जर्नल इंडियन एकेडमी ऑफ क्लिनिकल मेडिसिन	4	0.59
जर्नल ऑफ इंडियन एकेडमी ऑफ ओरल मेडिसिन एंड रेडियोलॉजी	4	0.59
जर्नल ऑफ मेडिकल माइक्रोबायोलॉजी	4	0.59
जर्नल ऑफ ओरल एंड मैक्सिलोफेशियल सर्जरी	4	0.59



ग्राफ–5.3

5.4. ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का विषयवार वितरण

निम्न तालिका–5.4 एवं ग्राफ–5.4 द्वारा ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का विषयवार वितरण दर्शाया गया है। ये सभी विषय श्रेणी प्रकाशक द्वारा दी गई हैं ।

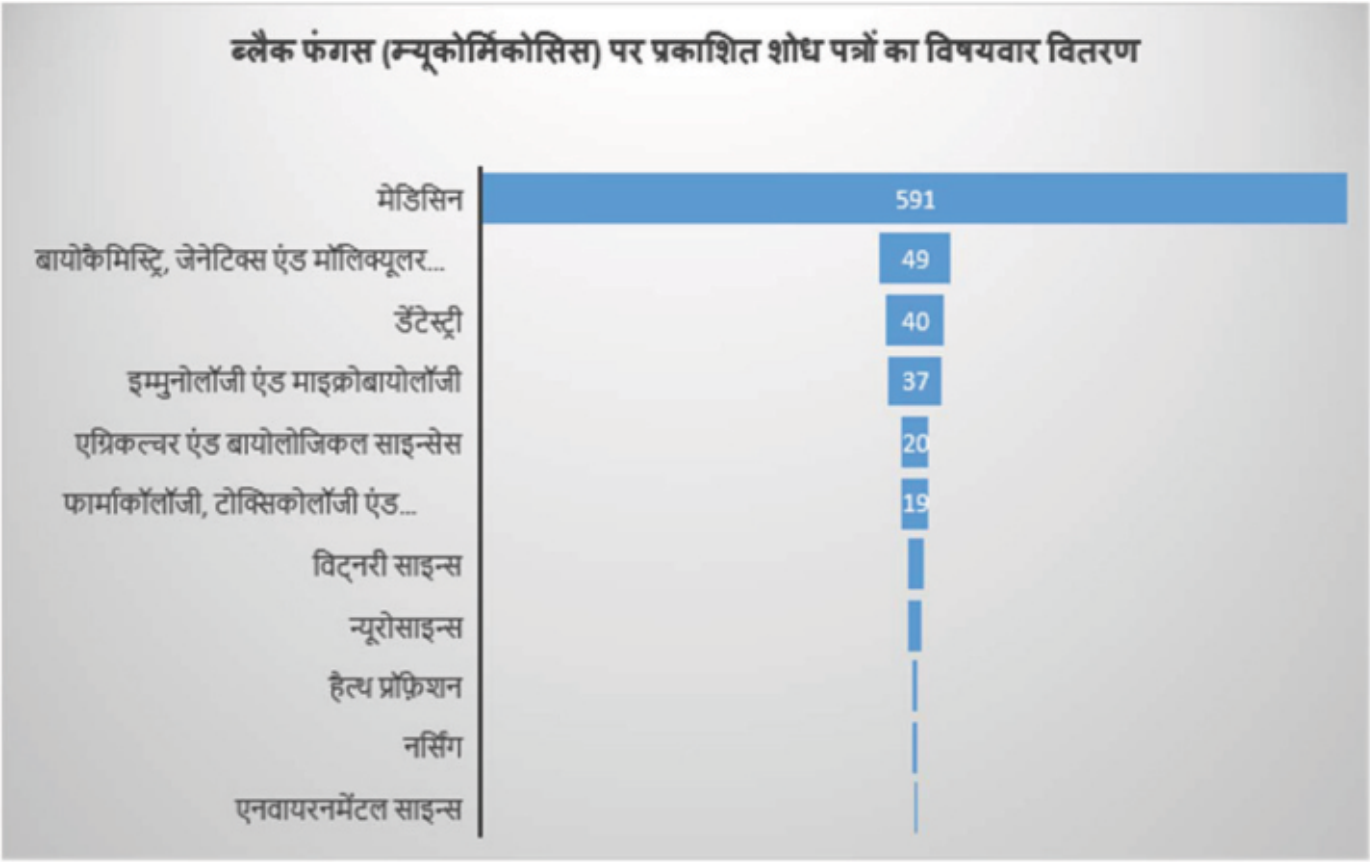
तालिका–5.4: ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर प्रकाशित शोध पत्रों का विषयवार वितरण

विषय श्रेणी	प्रकाशनों की संख्या	प्रतिशत
मेडिसिन	591	87.55
बायोकैमिस्ट्रि, जेनेटिक्स एंड मॉलिक्यूलर बायोलॉजी	49	7.25
डेंटेस्ट्री	40	5.92
इम्मुनोलॉजी एंड माइक्रोबायोलॉजी	37	5.48
एग्रिकल्चर एंड		
बायोलोजिकल साइन्सेस	20	2.96
फार्माकॉलॉजी, टोक्सिकोलॉजी एंड फार्मास्युटिक्स	19	2.81
विट्नरी साइन्स	12	1.77
न्यूरोसाइन्स	10	1.48
हैल्थ प्रॉफेशन	4	0.59
नर्सिंग	4	0.59
एनवायरनमेंटल साइन्स	3	0.44
केमिकल इंजीनियरी	2	0.29
एनर्जी	2	0.29
इंजीनियरी	2	0.29
आर्ट्स एंड ह्यूमनटीस	1	0.14
कैमिस्ट्री	1	0.14
कम्प्यूटर साइन्स	1	0.14
अर्थ एंड प्लानेटरी साइन्स	1	0.14
इकनोमिक्स, इकोनोमेट्रिक्स एंड फाइनेंस	1	0.14
सोशल साइन्स	1	0.14

उपरोक्त तालिका से स्पश्ट है कि–ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर कुल 675 प्रकाशनों में लेखकों ने 'मैडिसिन' विषय पर सर्वाधिक 591(87.85%) पेपर्स का प्रकाशन किया। बायोकैमिस्ट्रि, जेनेटिक्स एंड मोकुलर बायोलॉजी पर 49(7.25%); डेंटेस्ट्री पर 40 (5.92%); इम्मुनोलॉजी एंड माइक्रोबायोलॉजी पर 37 (5.48%); एग्रिकल्चर एंड बायोलोजिकल साइन्सेस पर 20 (2.96%); फार्माकॉलॉजी, टोक्सिकोलॉजी एंड फार्मास्युयूटिक्स पर 19 (2.81%); विट्नरी साइन्स पर 12 (1.77%); तथा न्यूरोसाइन्स विषय पर 10 (1.48%) शोध पत्रों का प्रकाशन हुआ। इसके अतिरिक्त अन्य विषय जैसे हैल्थ प्रॉफेशनय नर्सिंग, एनवायरनमेंटल साइनस, केमिकल इंजीनियरी, एनर्जी, इंजीनियरी, आर्ट्स एंड ह्यूमनटीज, कैमिस्ट्री, कम्प्यूटर साइन्स, अर्थ एंड प्लानेटरी साइन्स, इक्नोमिक्स, एकोनोमेट्रिक्स एंड फाइनेंस, और सोशल साइन्स विषय श्रेणी में 1 प्रतिशत से कम पेपर्स का प्रकाशन किया ।

5.5 ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) के क्षेत्र में प्रकाशित शोध पत्रों का लेखकों के आधार पर वितरण

तालिका–5.5 एवं ग्राफ–5.5 में ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) के क्षेत्र में प्रकाशित शोध पत्रों का लेखकों के आधार पर वितरण दर्शाया गया है। इस तालिका में प्रकाशित शोध पत्रों के आधार शीर्ष 25 लेखकों की रैंकिंग को भी दर्शाया गया है। उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि



ग्राफ–5.4

पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च, चंडीगढ़ के चक्रवर्ती, ए. 42 शोध पत्रों के साथ प्रथम स्थान पर हैं । वहीं चंदर, जे. (गवर्नमेंट मेडिकल कॉलेज एंड हॉस्पिटल, चंडीगढ़) ने 16 व रुद्रमूर्ति, एस.एम. (पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च, चंडीगढ़) ने 15 शोध पत्रों का प्रकाशन किया । अग्रवाल, आर. (पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च, चंडीगढ़) 14; मुथु, वी. 12; सिंह, जी. (अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली) 10; कौर, एच. और सोनिया, एम. नें 9; गुप्ता, एन., प्रकाश, एच, पुनिया, आर.एस. और सोमन, आर. नें 8; बाल, ए., 9 स्थान पर तथा चौधरी, ए., दयाल, डी., गुप्ता, के.एल., झा, वी., शिवप्रकाश, एम.आर. व सिंह, आर. 6 शोध पत्रों के प्रकाशन के साथ 10वें स्थान पर हैं।

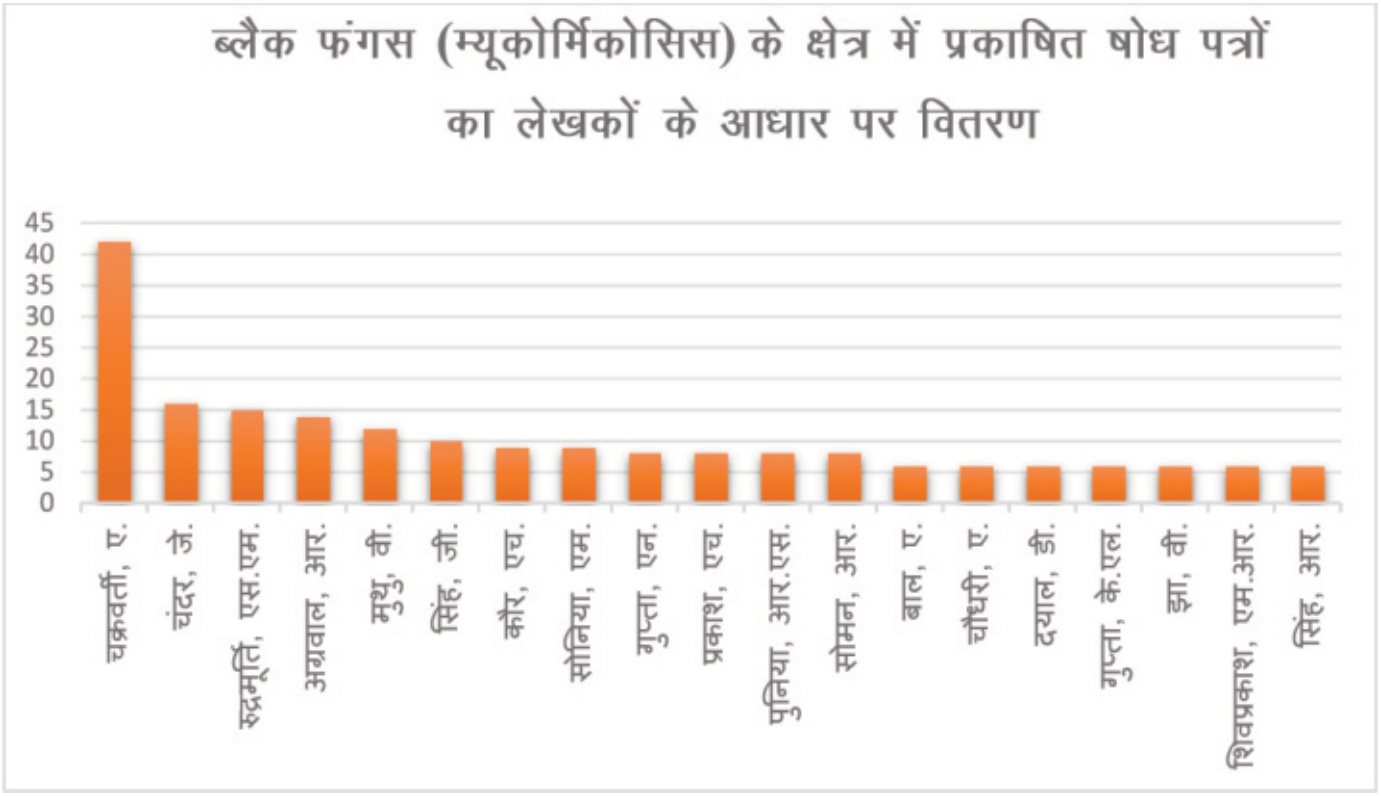
तालिका–5.5 : ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) के क्षेत्र में प्रकाशित शोध पत्रों का लेखकों के आधार पर वितरण (शीर्ष 10)

लेखक का नाम	प्रकाशनों की संख्या	रैंक
चक्रवर्ती, ए.	42	1
चंदर, जे.	16	2
रुद्रमूर्ति, एस.एम.	15	3
अग्रवाल, आर.	14	4
मुथु, वी.	12	5
सिंह, जी.	10	6
कौर, एच.	9	7

सोनिया, एम.	9	7
गुप्ता, एन.	8	8
प्रकाश, एच.	8	8
पुनिया, आर.एस.	8	8
सोमन, आर.	8	8
बाल, ए.	6	10
चौधरी, ए.	6	10
दयाल, डी.	6	10
गुप्ता, के.एल.	6	10
झा, वी.	6	10
शिवप्रकाश, एम.आर.	6	10
सिंह, आर.	6	10

5.6 ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) के क्षेत्र सर्वाधिक शोध पत्र प्रकाशित करने वाले संस्थान

विश्व में बहुत सारे संस्थानों ने ब्लैक फंगस(म्यूकोर्मिकोसिस) अनुसंधान में योगदान दिया। अध्ययन में पाया गया कि भारत में ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) के क्षेत्र में शीर्ष पंद्रह संस्थानों द्वारा 332 शोध पत्रों का प्रकाशन किया गया जो कुल प्रकाशनों का लगभग 50 प्रतिशत है। ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) के क्षेत्र सर्वाधिक शोध पत्र प्रकाशित करने वाले शीर्ष 15 संस्थानों का विवरण तालिका–5.6 एवं ग्राफ–5.6 में दिया गया है।

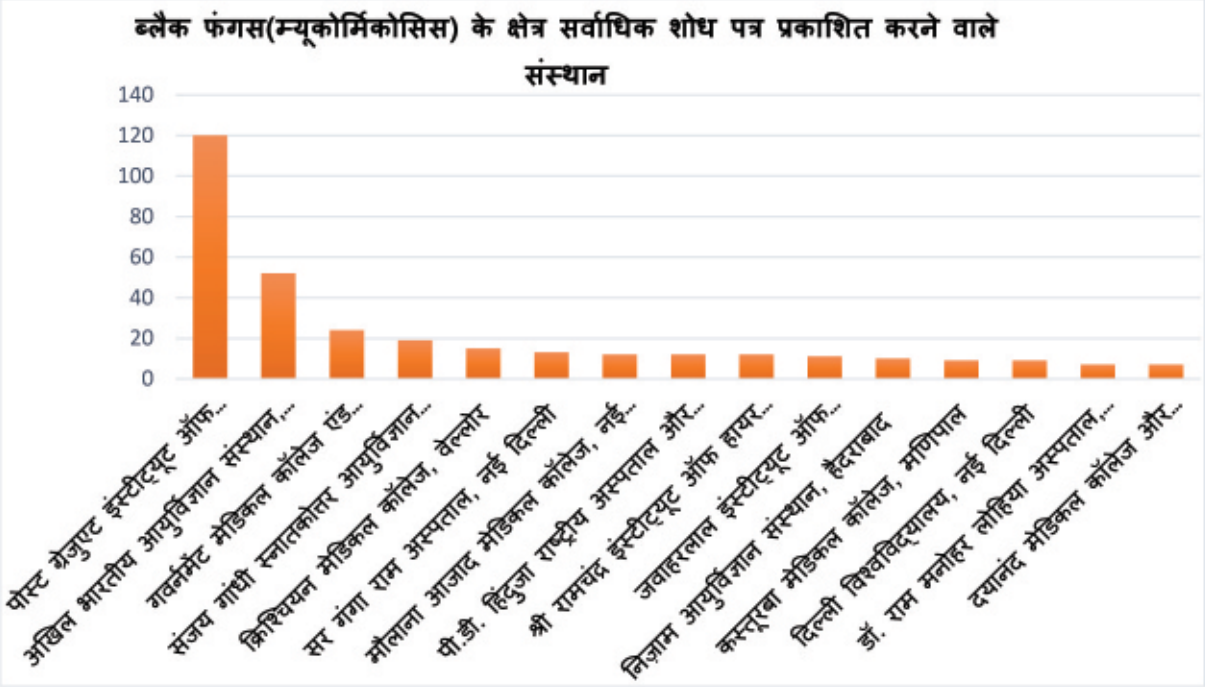


ग्राफ–5.5

तालिका–5.6 : ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) के क्षेत्र सर्वाधिक शोध पत्र प्रकाशित करने वाले संस्थान (शीर्ष 15 संस्थान)

क्रमांक	संस्थान का नाम	कुल प्रकाशन	प्रतिशत
1.	पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च, चंडीगढ़	120	17.77
2.	अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली	52	7.70
3.	गवर्नमेंट मेडिकल कॉलेज एंड हॉस्पिटल, चंडीगढ़	24	3.55
4.	संजय गांधी स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, लखनऊ	19	2.81
5.	क्रिश्चियन मेडिकल कॉलेज, वेल्लोर	15	2.22
6.	सर गंगा राम अस्पताल, नई दिल्ली	13	1.92
7.	मौलाना आजाद मेडिकल कॉलेज, नई दिल्ली	12	1.77
8.	पी.डी. हिंदुजा राष्ट्रीय अस्पताल और चिकित्सा अनुसंधान केंद्र, मुम्बई	12	1.77
9.	श्री रामचंद्र इंस्टीट्यूट ऑफ हायर एजुकेशन एंड रिसर्च, चेन्नई	12	1.77
10.	जवाहरलाल इंस्टीट्यूट ऑफ पोस्टग्रेजुएट मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च, पुदुचेरी	11	1.62
11.	निजाम आयुर्विज्ञान संस्थान, हैदराबाद	10	1.48
12.	कस्तूरबा मेडिकल कॉलेज, मणिपाल	9	1.33
13.	दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	9	1.33
14.	डॉ. राम मनोहर लोहिया अस्पताल, नई दिल्ली	7	1.03
15.	दयानंद मेडिकल कॉलेज और अस्पताल, लुधियाना	7	1.03

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च, चंडीगढ़ 120(17. 77%), अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली 52 (7.70%), गवर्नमेंट मेडिकल कॉलेज एंड हॉस्पिटल, चंडीगढ़ 24 (3.35%), संजय गांधी स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, लखनऊ 19 (2.81%), क्रिश्चियन मेडिकल कॉलेज, वेल्लोर 15(2.22%), सर गंगा राम अस्पताल, नई दिल्ली 13(1.92%), मौलाना आजाद मेडिकल कॉलेज, नई दिल्ली, पी.डी. हिंदुजा राष्ट्रीय अस्पताल और चिकित्सा अनुसंधान केंद्र, मुम्बई, श्री रामचंद्र इंस्टीट्यूट ऑफ हायर एजुकेशन एंड रिसर्च, चेन्नई, जवाहरलाल इंस्टीट्यूट ऑफ पोस्टग्रेजुएट मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च, पुदुचेरी, निजाम आयुर्विज्ञान संस्थान, हैदराबाद, कस्तूरबा मेडिकल कॉलेज, मणिपाल और दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली द्वारा 9(1.33%) शोध पत्र, डॉ. राम मनोहर लोहिया अस्पताल, नई दिल्ली और दयानंद मेडिकल कॉलेज और अस्पताल, लुधियाना द्वारा 7(1.03%) शोध पत्र प्रकाशित किए गए ।



ग्राफ–5.6

5.7 ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) के क्षेत्र में 100 से अधिक प्रकाशनों वाले देश

तालिका–5.7 में ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर 100 से अधिक शोध पत्रों का प्रकाशन करने वाले 20 देशों की सूची दी गई है। संयुक्त राज्य अमेरिका 2563 (30.88%) प्रकाशनों के साथ सबसे अग्रणी देश है, जिसके बाद भारत 1009 (12.15%) और फ्रांस 425 (5.12%) प्रकाशनों के साथ क्रमशः तीसरे स्थान पर रहा। इन शीर्ष तीन देशों ने कुल मिलाकर लगभग 50 प्रतिशत से अधिक प्रकाशनों में योगदान दिया। स्पेन 396 (4.77%) चौथे, जर्मनी 391(4.71%) पांचवे, यूनाइटेड किंगडम 337(4.06%) छठवें, जापान 320(3.85%) सातवें, इटली 245(2.95%) आठवें, और ऑस्ट्रेलिया 233(2.80%) नौवें स्थान पर रहा। दसवें स्थान पर 222 प्रकाशनों के साथ चीन रहा जो कुल प्रकाशनों का 2.67% था। ब्राजील 194 (2.33%) के साथ ग्यारहवें, ईरान 156(1.87%) प्रकाशनों के साथ बारहवें तथा यूनान 155(1.86%) प्रकाशनों के साथ तेरहवें स्थान पर रहा। ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर 100 से अधिक शोध पत्रों का प्रकाशन करने वाले देशों में तुर्की 148(1.78%), कनाडा 130(1.56%), स्विट्जरलैंड 129 (1.55%), दक्षिण कोरिया 126 (1.51%), नीदरलैंड 125 (1.50%), मेक्सिको 120 (1.44%) और ऑस्ट्रिया 106 (1.27%) रहे।

तालिका–5.7 : ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) के क्षेत्र में 100 से अधिक प्रकाशनों वाले देश

क्र. सं.	देश	प्रकाशनों की संख्या	प्रतिशत
1.	संयुक्त राज्य अमेरिका	2563	30.88
2.	भारत	1009	12.15
3.	फ्रांस	425	5.12
4.	स्पेन	396	4.77
5.	जर्मनी	391	4.71
6.	यूनाइटेड किंगडम	337	4.06

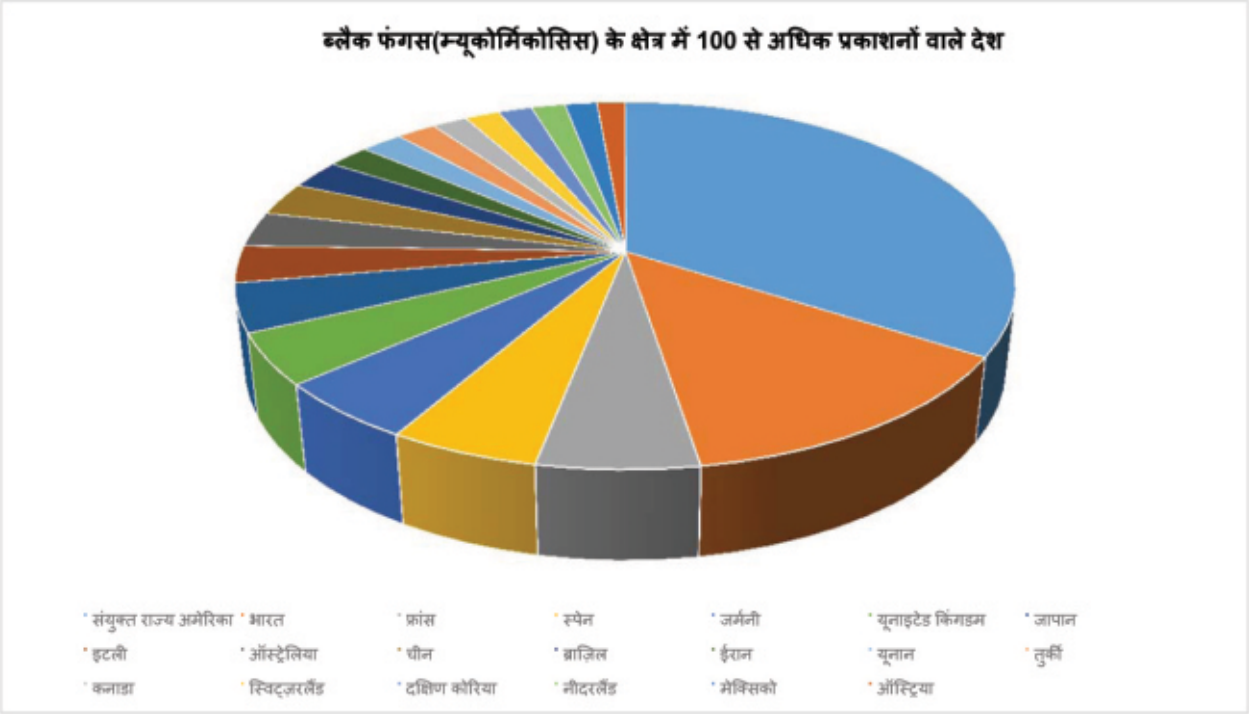
7.	जापान	320	3.85
8.	इटली	245	2.95
9.	ऑस्ट्रेलिया	233	2.80
10.	चीन	222	2.67
11.	ब्राजील	194	2.33
12.	ईरान	156	1.87
13.	यूनान	155	1.86
14.	तुर्की	148	1.78
15.	कनाडा	130	1.56
16.	स्विट्जरलैंड	129	1.55
17.	दक्षिण कोरिया	126	1.51
18.	नीदरलैंड	125	1.50
19.	मेक्सिको	120	1.44
20.	ऑस्ट्रिया	106	1.27

5.8 ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) के क्षेत्र में भारत की अन्य देशों के साथ सहकार्यता

तालिक–5.8 एवं ग्राफ–5.7 में में ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) के क्षेत्र में भारत की अन्य देशों के साथ सहकार्यता को दर्शाया गया है। यह देख गया है कि पिछले 10 वर्षों में भारत द्वारा प्रकशित 675 शोध पत्रों में संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ 27 (4%); फ्रांस के साथ 13 (1. 92%) व स्पेन के साथ 12 (1.77%) सहकार्यता के साथ प्रकाशित किए गए। कनाडा, जर्मनी व नीदरलैंड जैसे प्रत्येक देश की सहकार्यता में 9(1.33%) शोध पत्र प्रकाशित किए गए। इस प्रकार प्रथम तीन देशों के साथ लगभग 50% शोध पत्रों में सहकार्यता की गई। अन्य देशों के साथ सहकार्यता का प्रतिशत 1 से भी कम रहा ।

तालिका – 5.8 : ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) के क्षेत्र में भारत का अन्य देशों के साथ सहकार्यता

क्र. सं.	देश	प्रकाशनों की संख्या	प्रतिशत
1.	संयुक्त राज्य अमेरिका	27	4.00
2.	फ्रांस	13	1.92
3.	स्पेन	12	1.77
4.	कनाडा	9	1.33
5.	जर्मनी	9	1.33
6.	नीदरलैंड	9	1.33
7.	ऑस्ट्रेलिया	8	1.18
8.	ऑस्ट्रिया	7	1.03
9.	चेक रिपब्लिक	7	1.03
10.	बेल्जियम	6	0.88
11.	ब्राजील	6	0.88
12.	रूस संघ	6	0.88
13.	इटली	5	0.74
14.	यूनान	4	0.59
15.	इजराइल	4	0.59
16.	स्लोवाकिया	4	0.59
17.	तुर्की	4	0.59
18.	यूनाइटेड किंगडम	4	0.59
19.	बांग्लादेश	3	0.44
20.	डेनमार्क	3	0.44
21.	हंगरी	3	0.44
22.	मेक्सिको	3	0.44
23.	पोलैंड	3	0.44
24.	रोमानिया	3	0.44



ग्राफ–5.7

6. निष्कर्ष

उपरोक्त अध्यन से यह स्पष्ट है कि ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर 1964 से आज तक विश्व के सभी देशों द्वारा बृहत मात्र में शोध पत्र प्रकाशित किए गए और यह बृद्धि लगातार हो रही है । भारत के शोधार्थियों द्वारा भी कुल प्रकाशनों का लगभग 13% शोध पत्र प्रकाशित किए गए। यह भी देखा जा सकता है कि ब्लैक फंगस (म्यूकोर्मिकोसिस) पर विश्व के सभी देशों के द्वारा द्वारा ओपन एक्सैस प्लेटफॉर्म्स/जर्नल्स में प्रकाशित हुए शोध पत्रों की संख्या भी काफी अधिक है अर्थात शोधार्थियों द्वारा काफी संख्या में अपने शोध पत्र प्रकाशन हेतु ओपन एक्सैस प्लेटफॉर्म्स/जर्नल्स को चुना ताकि इन्हे अधिक से अधिक पढ़ा व उद्धरित किया जा सके। किन–किन क्षेत्रो में शोध कार्य किए जा रहे हैं हैं और किन क्षेत्रों में कार्य किया जा सकता है। यह शोध पत्र इस क्षेत्र में कार्य करने वाले वैज्ञानिकों एवं शोधर्थियों के लिए उपयोगी हो सकता है।

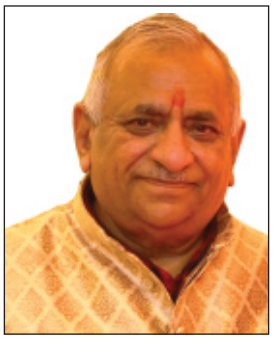
संदर्भ

1. Singh AK, Singh R, Joshi SR, Misra A. Mucormycosis in COVID-19: A systematic review of cases reported worldwide and in India. Diabetes Metab Syndr. 2021;15(4):102146. doi: 10.1016/j.dsx.2021.05.019.

2. एल्सेवियर्स स्कोपस (SCOPUS) - https://www.scopus.com Accessed on August 31, 2021)

खण्ड–II ग्रामीण प्रौद्योगिकी

खण्ड–II
ग्रामीण प्रौद्योगिकी



प्रो. ऋषिराज गौड़
(15 अगस्त, 1945 – 6 दिसम्बर, 2020)



प्रो. राजेन्द्र प्रसाद
(2 जनवरी, 1949 – 9 मई, 2021)

स्व. प्रो. ऋषिराज गौड़
एवं
स्व. प्रो. राजेन्द्र प्रसाद
की स्मृति में
श्रद्धा व आदर के साथ समर्पित



परस्पर–पूरकता समाज की समृद्धि का मूल मंत्र है।

दो शब्द

आई.आई.टी. दिल्ली के 'ग्रामीण विकास एवं प्रौद्योगिकी केन्द्र (CRDT) की स्थापना में विशेष भूमिका निभाने वाले प्रो. राजेन्द्र प्रसाद (पूर्व अध्यक्ष, CRDT) के साथ सहयात्री के रूप में पूरी अकादमिक जिन्दगी प्रसन्नता के साथ जीने का अवसर मिला। उनके अथक प्रयास से CRDT का विकास होता गया। जमीनी हकीकत से जुड़े प्रो. ऋषिराज गौड़ (पूर्व अध्यक्ष, यांत्रिक इंजीनियरी विभाग व मूल्य शिक्षा केन्द्र) का मार्गदर्शन, आत्मीयता पूर्ण सान्निध्य व सहयोग तथा योगदान CRDT परिवार के लिये अनमोल रहा। आप दोनों का असमय कोरोना महामारी से इस धरा से चले जाना, एक खालीपन छोड़ गया।

इस वर्ष 'जिज्ञासा' (हिन्दी विज्ञान जर्नल) के प्रकाशन के संदर्भ में महसूस हुआ कि एक खंड –'ग्रामीण प्रौद्योगिकी', उनको समर्पित करना, उनकी स्मृति को संजोये रखना, इसके द्वारा सहज रूप में परिलक्षित होगा। इस विचार को मैनें प्रो. वीरेन्द्र कुमार विजय (संयोजक, उन्नत भारत अभियान) व डॉ. नीरज चौरसिया (अध्यक्ष, हिन्दी कक्ष) से साझा करके उनकी सहमति ली तथा कार्य प्रारम्भ किया। प्रो. एस.जी. देशमुख, उप निदेशक (प्रचालन) ने इसके लिए सहज स्वीकृति दे दी। इस प्रकार प्रो. ऋषिराज गौड़ व प्रो. राजेन्द्र प्रसाद के विचारों की अभिव्यक्ति का यह छोटा सा प्रयास है।

प्रो. ऋषिराज गौड़ के मार्गदर्शन में लिखे दो रिसर्च पेपर–(i) ''विवेक सम्मत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अवधारणा'' (पूर्व प्रकाशित) तथा (ii) ''गतिशील स्थिरता (sustainability) की खोज में कुछ प्रयास (क्षेत्रीय एवं वैश्विक अध्ययन)'' चिन्तन–मनन में गहन परिवर्तन (paradigm shift) की अनिवार्यता पर बल देते हैं। यह प्रो. गौड़ की दूरदृष्टि (vision) का परिचायक है। प्रो. राजेन्द्र प्रसाद का भारतीय पारम्परिक ज्ञान व तकनीकी पर चिन्तन एवं दृढ़ विचार–''नई शिक्षा नीति के अनुसार तकनीकी शिक्षा में बदलाव की आवश्यकता'' में परिलक्षित होते हैं। साथ ही ग्रामीण प्रौद्योगिकी के लिये अनुसंधान के प्रैक्टिकल पक्ष को दर्शाते अनेक रिसर्च पेपर प्रस्तुत हैं। आशा है कि हम उपरोक्त मूल अवधारणाओं को अपनी कार्यशैली में समाहित करने का प्रयास करेंगे। यही आप दोनों महानुभावों को सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

इस सदकार्य के लिए प्रो. अनुश्री मलिक (पूर्व अध्यक्ष, CRDT) एवं प्रो. पी.एम.वी. सुब्बाराव (अध्यक्ष, CRDT) तथा सभी लेखकगण के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करती हूँ।

सर्वशुभ की कामना के साथ,

–प्रो. सन्तोष सत्या

ग्रामीण प्रौद्योगिकी–सर्वेक्षण प्रतिवेदन
(1989)

"सम्पूर्ण अध्ययन ने हमें प्रेरणा दी है। जीवन में जो भी आवश्यकताओं का जाल बुना हुआ है, उसमें प्रयुक्त तकनीकी का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। भारत की सभ्यता पुरानी होने के कारण यहाँ एक समस्या एवं एक आवश्यकता के लिये एक से अधिक समाधान देखने को मिले। भारत की ग्राम आधारित व्यवस्था विकेन्द्रीकरण का एक अत्यन्त उज्जवल उदाहरण है। जीवन शैली में प्रयुक्त तकनीकी का धीरे–धीरे सरल तथा सहज होना तथा स्थानीय संसाधनों पर उनका आधारित होना व समाज का उसके ऊपर नियंत्रण होना कुछ ऐसे गुण हैं जो अन्यत्र देखने को नही मिलते।"

डॉ. भारतेन्दु प्रकाश
विज्ञान शिक्षा केन्द्र,
बाँदा (उ.प्र)

सौगंध इस मिट्टी की, मैं देश नहीं मिटने दूंगा

सौगंध मुझे इस मिट्टी की, मैं देश नहीं मिटने दूंगा,
मैं देश नहीं मिटने दूंगा, मैं देश नहीं झुकने दूंगा।

मेरी धरती मुझसे पूछ रही,
कब मेरा कर्ज़ चुकाओगे,
मेरा अम्बर मुझसे पूछ रहा,
कब अपना फर्ज़ निभाओगे
मेरा वचन है भारत माँ को,
तेरा शीश नहीं झुकने दूंगा,
सौगंध मुझे इस मिट्टी की....

वो लूट रहे हैं सपनों को,
मैं चैन से कैसे सो जाऊँ,
वो बेच रहे अरमानों को,
खामोश मैं कैसे हो जाऊँ,
हाँ मैंने कसम उठाई हैं,
मैं देश नहीं बिकने दूंगा,
सौगंध मुझे इस मिट्टी की....

वो जितने अंधेरे लाएंगे,
मैं अपने सूर्य उगाऊँगा,
वो जितनी रात बढ़ाएंगे,
मैं उतने उताले लाउंगा,
इस छल फरेब की आँधी में,
मैं दीप नहीं बुझने दूंगा,
मैं देश नहीं मिटने दूंगा,
सौंगध मुझे इस मिट्टी की....

मांओ बहनों की अस्मत पर
गिद्ध नजर लगाए बैठे हैं
हर इंसां है यहां डरा–डरा
दिल में खौफ़ जमाए बैठे हैं
मैं अपने देश की धरती पर
अब दर्द नहीं उगने दूंगा
मैं देश नहीं झुकने दूंगा
सौगंध मुझे इस मिट्टी की....

–श्री प्रसून जोशी

विवेक सम्मत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अवधारणा*

प्रो. सन्तोष सत्या,[1] प्रो. ऋषिराज गौड़[2]
[1]ग्राम विकास एवं प्रौद्योगिकी केन्द्र, भा.प्रौ.सं. दिल्ली,
[2]पूर्व अध्यक्ष, एन.आर.सी.वी.ई.ई., भा.प्रौ.सं. दिल्ली

1.0 प्रस्तावना

आज पूरे विश्व में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का वर्चस्व है। इनके द्वारा अनेकानेक उपलब्धियाँ मानव जाति को प्राप्त हुई है तथा हमारी जीवनशैली गहन रूप से प्रभावित हुई है। सारा प्रयत्न तो मानव जाति के निरंतर तथा चिरस्थायी एवं लोकव्यापी सुख समृद्धि की अपेक्षा में है। इस उद्देश्य में हम कितने सफल हो पाते हैं यह व्यापक समीक्षा का विषय है। विशेषकर वर्तमान संदर्भ में, जबकि विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का इतने व्यापक स्तर पर विकास–प्रसार हुआ है और इसी परिवर्तन के फलस्वरूप अनेकानेक भीषण समस्याओं से मानव जाति ग्रसित हो गई है और एक ऐसे पड़ाव पर पहुंच गई है जहां से न तो पीछे लौटना संभव है अथवा वांछनीय लगता है और न ही इस दिशा में आगे बढ़ना। बल्कि वर्तमान विकास की शैली मानव एवं पृथ्वी पर अन्य सभी जीव जन्तुओं के अस्तित्व के लिए भयंकर संकट बनती दिख रही है।

वर्तमान विकास शैली के फलस्वरूप हमारे समाज व पर्यावरण में गहराती हुई ज्वलंत समस्याओं जैसे जलवायु परिवर्तन, ऊर्जा एवं अन्य सभी संसाधनों का क्षरण, मानव का गिरता स्वास्थ्य स्तर, समाज में बढ़ता वैमनस्य/घटती समरसता व आपसी विश्वास, भोज्य पदार्थो की घटती गुणवत्ता व सुरक्षा, पर्यावरण से जुड़े मुद्दे, परंपरागत प्रमाणिक तकनीकी की उपेक्षा से घटते रोजगार आदि ने विश्व स्तर पर विद्या मनीषियों, विचारकों तथा वैज्ञानिकों व तकनीकी विशेषज्ञों तथा नीति निर्धारकों–सभी को विकल्प तलाशने के लिए बाध्य किया है, प्रेरित किया है। यह तो बिल्कुल स्पष्ट ही है कि इन सब समस्याओं का मूल कारण मानव की वर्तमान समझ तथा उसके अनुरूप जीवन शैली ही है। अब सवाल उठता है कि क्या मानव जीवन शैली का वर्तमान स्वरूप बदला नहीं जा सकता है ? यदि हाँ तो उसको प्रारम्भ करने का बिन्दु कहां स्थित है ? मानव कल्पनाशीलता से सम्पन्न है तथा स्वतंत्रता का आनन्द लेते हुए इस धरती पर सुख, शांति व समृद्धि पूर्वक जीना उसकी नैसर्गिक चाहत है। इसके समाधान के लिए अनेक प्रकार से विचारकों, बुद्धिजीवियों, समाजसेवी महानुभावों की कल्पनाएं दौड़ रही है तथा भांति–भांति के उपाय सुझाए गए हैं। निश्चित रूप से हमें विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का विकास तो चाहिए ही पर महत्वपूर्ण प्रश्न यह बन गया है कि किस प्रकार की विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी हो जो वस्तुतः निरंतर सुख–समृद्धि की हमारी मौलिक आकांक्षा को सुनिश्चित कर सके तथा चिरस्थायी विकास की दिशा निर्धारित कर सके।

यह तो हम जानते ही हैं कि पूरे अस्तित्व में मनुष्य ही ज्ञानावस्था की इकाई है अर्थात् सही को समझना, सही का ज्ञान प्राप्त करना तथा उसके अनुरूप जीवन शैली अपना कर स्वयं भी तृप्त होना तथा सभी के सुख–समृद्धि में सहायक होना यही मनुष्य का मौलिक स्वभाव है। यही समझदारी को प्रमाणित करने की भी विधि है जो प्रत्येक मानव का तृप्ति बिन्दु है, गंतव्य है। अपने बारे में तथा अपने से लेकर पूरे अस्तित्व के बारे में सही जानकारी ही ज्ञान का क्षेत्र है। सही ज्ञान से ही विवेक उत्पन्न होता है अर्थात् जीने का प्रयोजन स्पष्ट होता है। मानवीय लक्ष्य एवं आचरण स्पष्ट होता है। वास्तव में ज्ञान एवं विवेक के प्रकाश में ही प्रकृति की भिन्न–भिन्न इकाईयों के गुण–धर्म की जानकारी तथा परस्पर अन्तर्क्रियाओं की समझ विज्ञान के दायरे में

* (पूर्व प्रकाशित, जिज्ञासा–2012)

आती है, जो प्रौद्योगिकी की दिशा एवं स्वरूप निर्धारित करता है। इस प्रकार मनुष्य की जीवन शैली व टैक्नोलॉजी विकसित करने के लिए सामाजिक व्यवस्था के ढांचे का निर्माण होता है।

2.0 विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी–आधुनिक स्वरूप

'ज्ञान' के आधार पर जीवन शैली निर्धारित करने के लिए सम्पूर्ण प्रकृति की व्याख्या करनी पड़ती है, प्रकृति के साथ अपने सम्बन्धों को समझना, अपने जीवन का लक्ष्य निर्धारित करना तथा प्रकृति से अपने जीने के लिए साधन जुटाने पड़ते हैं। प्रकृति की व्याख्या ही विज्ञान है, प्रकृति से साधन जुटाने और उनका प्रयोग करने की विधि ही प्रौद्योगिकी है। परन्तु इसके लिए 'स्वयं' को एवं मानव–मानव संबंध को सही रूप से समझना तथा मानव–प्रकृति संबंध के वास्तविक स्वरूप को समझना अनिवार्य है तभी विवेक सम्मत विज्ञान एवं तकनीकी का विकास हो सकता है।

प्रचलित आधुनिक सिस्टम में केवल किसी खास प्रकार की मान्यताओं (विधाओं, सूचना....) को ही विज्ञान व प्रौद्योगिकी कहा जाता है। स्वाभाविक है यह कथित विज्ञान व प्रौद्योगिकी प्रकृति के साथ सम्बन्धों को, मानव–मानव एवं मानव–समाज के सम्बन्धों तथा मनुष्य के 'स्वयं' के साथ सम्बन्धों को नजर अन्दाज/नकार कर (overlook) ही विकसित होती है। यह तथ्य साहित्य (dictionary, encyclopaedia, आदि) में वर्णित टैक्नोलॉजी की परिभाषा* से नितान्त स्पष्ट हो जाता है, क्योंकि परिभाषा में प्रकृति का जिक्र ही नहीं है, समाज का व मनुष्य के स्वयं के विकास का कोई प्रतिबिम्ब भी नहीं है। इसी प्रकार दक्षता (Effciency) की परिभाषा व सूत्र अपूर्ण पाई गयी है। वास्तव में आधुनिक विज्ञान व टैक्नॉलोजी, केन्द्रीकृत व्यवस्था, बाजारवाद के माध्यम से व्यापार (टैक्नॉलोजिकल बाजारवाद) प्रकृति पर विजय पाने की लालसा, युद्ध द्वारा विश्व में अपना आधिपत्य जमाना आदि की ही संपोषक है। यह सब इसलिए है कि जड़ पदार्थ (Physical materials) को ही ज्ञान का केन्द्र माना जाता है, जड़ यन्त्रों द्वारा ही इसका परीक्षण किया जाता है और उसी को प्रमाण मान लिया जाता है। चेतन का अध्ययन एवं समझ इसमें उपेक्षित रहती है।

वर्तमान में अनिश्चितता (uncertainity) को ही सिद्धान्त रूप में स्वीकार कर लिया गया है। दुनिया में सारी योजनाएं (जीवन शैली से लेकर पर्यावरण, तकनीकी विकास, आर्थिक विकास....) इसी के आधार पर बनाई गई है/जा रही है। आधुनिक विज्ञान/दृष्टिकोण के अनुसार विज्ञान अर्थात् प्रकृति की व्याख्या अस्थिर (unstable) है। मनुष्य को कभी भी समझ में आने वाली नहीं है, अतः निरन्तर अनुसंधान के आधार पर विज्ञान का स्वरूप बदलता रहता है। विज्ञान को जिसको कल सही माना जाता था, आज उसी को गलत मान लिया जाता है तथा यह भी घोषणा रहती है कि आने वाले दिनों में नई–नई खोज होगी जिनके आधार पर आज कल की वैज्ञानिक बातें भविष्य में गलत सिद्ध हो सकती है। इस प्रकार विज्ञान का स्वरूप कभी स्थिर नहीं हो पाता।

इसी अनुक्रम में मनुष्यों के जीने का कार्यक्रम तथा टैक्नॉलोजी भी अस्थिर बन जाती है। इस विचारधारा में प्रकृति/ईश्वर का स्थान बाजार ने ले लिया है। व्यापार, शोषण तथा संघर्ष परस्पर अविभाज्य से हो गए हैं, जो अन्ततः मनुष्यों के जीने को दूभर बना रहे हैं। संघर्ष ही जीवन शैली बन जाती है। इसी प्रकार वस्तु केन्द्रित अनिश्चयात्मक ज्ञान में प्रकृति के साथ संघर्ष करने की, उस पर विजय पाने की तथा उसका भोग करने की बात है। परिणामस्वरूप इस paradigm/विकास मॉडल में भोगोन्मादी और युद्धोन्मादी टैक्नॉलोजी विकसित होती है।

3.0 ज्ञान–विवेक–विज्ञान (एवं प्रौद्योगिकी) शृँखला

वास्तव में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी को मानव कल्याण के साथ–साथ अन्य जीव प्रजातियों (species) के लिए उपयुक्त होने के लिए विवेक सम्मत होना अनिवार्य है। ज्ञान तथा विवेक के अभाव में भी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आकर्षक

* यह तथ्य आई.आई.टी. दिल्ली के B.Tech. विद्यार्थियों के साथ RDL340 कोर्स (Technology and community Development) में हुई चर्चा (पिछले ~ 10 वर्ष से) में पूर्ण रूप से उजागर हुआ है।

हो सकती है लेकिन निश्चित रूप से सदुपयोगी नहीं बन सकती है। बल्कि वास्तव में यह अंततः मानव के लिए विनाशकारी तथा प्रकृति के लिए भी विरोधी होती जाएगी। आज हम उसी दुःष्चक्र में अपने को फंसा हुआ पाते हैं। सुख और समृद्धि की सही समझ के अभाव में वर्तमान में हमने अधिकाधिक सुविधा भोग तथा धन संचय को ही सुख–समृद्धि का स्रोत मान लिया है। इस प्रवृत्ति के व्यापक स्तर पर प्रभावी होने से विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी भोगोन्मादी तथा लाभोन्मादी हो गई है। इसीलिए इनसे अनेकानेक समस्याएं उत्पन्न हो रही है। इस स्थिति का निराकरण तभी हो सकता है जब विवेकशीलता को विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विकसित करने की प्रक्रिया में आधारशिला बनाया जाए। इसके लिए पहला आवश्यक चरण यही है कि मानव ज्ञान एवं विवेक से पुष्ट हो। शिक्षा में समझदारी विकसित करने तथा उसके अनुसार जीने में निष्ठा जागृत करने का प्रयास हो। उसके बाद समझदारी के प्रकाश में, विवेक के प्रकाश में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की समीक्षा हो तथा उनमें वांछनीय संशोधन हो, वैकल्पिक अनुसंधान तथा विकास हो।

4.0 विवेक सम्मत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की दिशा में कुछ अभिनव प्रयास

सौभाग्यवश पिछले लगभग 3 दशकों में वैज्ञानिकों, मनीषियों व बुद्धिजीवियों ने उपरोक्त विषय पर गंभीरता से विचार करके नया चिन्तन–मनन विकसित किया है तथा उसके आधार पर विज्ञान व प्रौद्योगिकी का सही स्वरूप समझ कर जीवन शैली विकसित करने के प्रयोग भी चल रहे हैं। उदाहरण के रूप में–अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिन्तन ज्ञान (सह–अस्तित्व सिद्धान्त), प्राकृतिक इंजीनियरी (प्रकृति की engineering व architecture से ज्ञान प्राप्ति), Gaia सिद्धान्त (जिसके मूल में Homostatis समायी है), डॉ. Larry Dossey का Conciousness पर आधारित स्वास्थ्य टैक्नॉलोजी सिस्टम, जापान में ग्रीन स्वास्थ्य clinic, शुमाकर कॉलेज, लन्दन (U.K.) विश्व में पहली Holistic Science में M.Sc. आदि उद्धृत किए जा सकते हैं। इनमें 'विवेकशीलता' को पूरी Technological व्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान देने की आवश्यकता परिलक्षित होती है।

डॉ. James Lovelock के Gaia सिद्धांत में सम्बन्धों की व्याख्या प्रकृति तक सीमित है, जबकि सहअस्तित्व का सिद्धान्त प्रकृति के अलावा मानव–मानव सम्बन्ध, मानव–समाज सम्बन्ध तथा मानव का 'स्वयं' से सम्बन्धों की पूर्ण व्याख्या करता है ताकि विकास के लिए holistic व्यवस्था ईजाद की जा सके। हालांकि वर्तमान आधुनिक विद्यार्थियों/वैज्ञानिकों को विवेक सम्मत विज्ञान व प्रौद्योगिकी का स्वरूप समझाने में Gaia Theory अत्यन्त सहायक है तथा Natural Engg. में दर्शायी गयी प्रकृति की अभिनव (innovative) क्षमता उनका हृदय झकझोर देती हैं। Natural Engg. System के उदाहरण IIT दिल्ली के B.Tech. विद्यार्थियों को बहुत अपील करते हैं इसके बाद वे विवेक सम्मत विज्ञान व टैक्नोलॉजी को भली प्रकार समझने की चेष्टा करते हैं।

5.0 अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिन्तन ज्ञान

पूज्य नागराज जी ने इस चिन्तन शैली को उजागर किया है। इसका नाम इन्होंने सह–अस्तित्ववाद (मध्यस्थ दर्शन) रखा है। इसमें मानव के चैतन्य पक्ष को 'जीवन' नाम दिया है। मानवीय लक्ष्य–समाधान एवं समृद्धि तथा 'जीवन' को गठनपूर्ण चैतन्य परमाणु के रूप में पहचाना गया है, जो अक्षय शक्तियों एवं अक्षय बलों से सम्पन्न है। मानव 'जीवन' अध्ययनशील है। यह सम्पूर्ण अस्तित्व में जो कुछ भी है उसका अध्ययन करने की क्षमता रखता है। 'जीवन' अर्थात् 'स्वयं' का भी अध्ययन कर सकता है। 'स्वयं' का अध्ययन करने के लिए 'जीवन विद्या' को भी मध्यस्थ दर्शन में पहचान लिया गया है। 'जीवन विद्या' के प्रकाश में मनुष्यों को मानवीय व्यवस्था का बोध हो जाता है। मानवीय व्यवस्था ऐसी व्यवस्था है जिसमें चिराकांक्षित प्राकृतिक समृद्धि, अखण्ड सामाजिकता, बौद्धिक समाधान, तथा प्रमाणिकतापूर्ण आचरण की सम्भावना, समीचीन है। इस संदर्भ में आई.आई. टी. दिल्ली में कुछ महत्वपूर्ण प्रयोग–मूल्य शिक्षा के रूप में तथा उपयुक्त प्रौद्योगिकी सिस्टम विकसित करने की दिशा में हुए हैं।

6. उपसंहार

सर्वविदित है कि ज्ञान पिपासा/जिज्ञासा सभी मनुष्यों में एक स्वाभाविक प्रवृत्ति है। मानव लक्ष्य के पूर्ण स्वरूप को समझकर ज्ञान का विकास समाज में समरसता व समृद्धि लाता है। लेकिन इस 'समझ' के बिना जिज्ञासा तृप्ति भटकाव की ओर ले जाती है। वर्तमान मे विश्व स्तर पर फैली विभीषिकाएं–आर्थिक संकट, कुछ देशों में भुखमरी, भयग्रस्त समाज (terrorism), मनोवैज्ञानिक रोग, चरमराती परिवार व्यवस्था, बढ़ता अकेलापन आदि के रूप में उजागर हो रही है, यह स्थिति स्पष्ट संकेत देती है कि विकास के आधुनिक मॉडल में आगे रास्ता बन्द है। कारण है कि मनुष्य के 'चैतन्य पक्ष' की आवश्यकताओं की विकास मॉडल में उपेक्षा की गयी है जिससे टैक्नोलॉजी विकसित करने के प्रयास दिशा विहीन हो गए हैं। यह शोध पत्र इस महत्वपूर्ण उपेक्षित तथ्य की ओर ध्यान आकर्षण करके इन समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करता है। यह नया paradigm अस्तित्व में विभिन्न स्तरों पर बहते सम्बन्धों (मानव–मानव, मानव–प्रकृति, मानव–समाज, मानव–स्वयं.....) व उनमें समाये मूल्यों (values) के महत्व को ध्यान में रखकर स्वाभाविक रूप से सभी के लिए विवेक जागृति की सम्भावना दर्शाता है। निःसंदेह इस अवधारणा का शिक्षा व्यवस्था में समावेश एक 'नयी दृष्टि' का उदय करेगा जिससे विवेक सम्मत विज्ञान व प्रौद्योगिकी विकसित करके सुखी व समृद्ध समाज की स्थापना व निरन्तरता कायम रह सकेगी। इस दिशा में किए जा रहे अभिनव प्रयोग व प्रयास आज की विकट परिस्थिति में आशा की किरण है तथा ऊर्जा व उत्साह का संचार करते हैं।

आभार

यह शोध पत्र मुख्य रूप से पूज्यनीय नागराज जी, एवं श्रद्धेय डॉ, यशपाल सत्य जी के चिन्तन–मनन पर आधारित है। समय के साथ–साथ प्रकाशित साहित्य में वर्णित कुछ अन्य चिन्तन शैली का अध्ययन करके व्यापक समझ बनी। RDL 340 कोर्स के मेधावी B.Tech. विद्यार्थियों के साथ Term paper के रूप में अध्ययन में नये आयाम जुड़ते गये। विभिन्न अवसरों पर इस विषय पर पूज्य नागराज जी, प्रो. गणेश बगारिया, डॉ. रणसिंह आर्य, हर्ष सत्या आदि के साथ चर्चा भी इसमें परिलक्षित है। लेखक सभी के सहयोग के लिए हार्दिक धन्यवाद ज्ञापित करते हैं।

संदर्भ

1. ए नागराज, 'जीवन विद्या–एक परिचय', दिव्य पथ संस्थान, अमर कंटक।
2. R.A. Mashelker, "Emergence of Natural Engg." Employment News (2002)
3. Larry Dossey "Space, Time & Medicine (Health and Consciousness)" (1982).
4. Holistic Science (M.Sc.) Schumacher College London (2006).
5. Hind Swarajaya, Gandhiji (1908).
6. Satish Kumar "You are Therefore I am" Viveka Foundation (2002).
7. धर्मपाल, 'भारतीय चित्त, मानस व काल' ।
8. James Lovelock, 'Gaia-A New Look at Life on Earth" (1979).

नई शिक्षा नीति के अनुसार तकनीकी शिक्षा में बदलाव की आवश्यकता

प्रो. वीरेंद्र कुमार विजय[1], स्व. प्रो. राजेन्द्र प्रसाद[2], मनीष कुमार[3]

[1]राष्ट्रीय कोऑर्डिनेटर, उन्नत भारत अभियान
[2]पूर्व मानद प्रोफेसर
[3]शोध छात्र
ग्रामीण विकास एवं प्रौद्योगिकी केन्द्र
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली
ई–मेलः vkvijay@rdat.iitd.ac.in

आधुनिक भारत में तकनीकी शिक्षा में काफी प्रगति हुई है । देश विदेश में भारत ने अपना नाम बनाया है। देश में एक बड़ा मूलभूत ढांचा विकसित किया है। एक तरफ भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान आदि शीर्ष पर हैं तो दूसरी तरफ मूल आधार में प्रौद्योगिकी प्रशिक्षण संस्थान आदि है और मध्य स्तर पर पॉलिटेक्निक आदि हैं।

इस सब प्रगति के बावजूद ये देखकर दुख होता है कि इस ढांचे की पहुंच बहुत सीमित है, समाज में एक बहुत छोटा सा वर्ग ही इसके साथ जुड़ पाया है । समाज का एक बहुत बड़ा अंग अभी भी इससे अछूता है । इसका एक मूल कारण यह है कि यह आधुनिक व्यवस्था, मुख्यतः विदेश की नकल है इसमें भारतीयता का योगदान बहुत ही कम रहा है। वास्तव में भारतवर्ष पारंपरिक ढंग से एक तकनीकी रूप में विकसित राष्ट्र ही था परंतु आधुनिक व्यवस्था में ना केवल इसको नकारा बल्कि तोड़ा, ठुकराया एवं उपेक्षित किया। ये इस कारण से हुआ कि भारत एक लंबे समय तक गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ था । विशेषकर अंग्रेजों ने पिछली कुछ शताब्दियों में भारत में अपने राज्य के दौरान पारंपरिक ज्ञान–विज्ञान एवं विधाओं को नष्ट करने का प्रयास किया। सौभाग्य है फिर भी काफी कुछ बच गया । कुछ उदाहरण लेते हैं वस्त्र उद्योग में भारत का ज्ञान–विज्ञान एवं क्षमता विश्व में अतुलनीय रहा। अखंड भारत में ढाका की मलमल बहुत महीन और सुंदर होती थी। उस गुणवत्ता का वस्त्र तो आज भी शायद उच्च से उच्च मशीन भी नहीं बना पाएगी। लाखों कारीगर इस देश में इस विधा के साथ जुड़े हुए थे और सम्मान पूर्वक अपना जीवन यापन करते थे और देश की उन्नति में बड़ा योगदान देते थे।

दूसरा उदाहरण हम लोहा और इस्पात का ले सकते हैं, भारत में विश्व का सर्वश्रेष्ठ लोहा एवं इस्पात बनाया जाता था, ये कहा जाता था कि भारत का निम्नतर उत्पाद भी बाकी विश्व के सर्वोत्तम उत्पादों से बेहतर था। ऐसे अनेक उदाहरण लिए जा सकते हैं, विचारणीय विषय है कि ये सब उद्योग जो पारंपरिक रूप में यहां विकसित थे, उन्नत थे, उन सब का क्या हुआ ।

आज हम देखते हैं कि ये सब पारंपरिक ज्ञान–विज्ञान एवं विधाएं विलुप्त प्राय हो गई है । इसका एक बड़ा कारण अंग्रेजों के राज्य में सुनियोजित ढंग से इन सब पर प्रहार किया जाना, इनका विरोध करना और इनको नष्ट करने का प्रयास था। यह इसलिए हुआ कि ये सब उत्पाद अंग्रेजों को उनके द्वारा आधुनिक तकनीकी द्वारा उत्पादित वस्तुओं को एक बड़ा प्रतिद्वंदता उपस्थित करते थे । अगर हमारे पारंपरिक उत्पाद चलते रहते तो अंग्रेज विश्व में कहीं भी अपने उत्पाद नहीं बेच पाते, इसलिए उन्होंने हमारे पारंपरिक उद्योगों को तहस–नहस किया। ऐसा नहीं है कि अगर हमारे पारंपरिक उद्योग चलते रहते तो हमारे देश का आधुनिकरण नहीं हो पाता। होना ये चाहिए था कि आधुनिक ज्ञान और पारंपरिक ज्ञान का एक संतुलित समन्वय होता ।

जापान इसका एक अच्छा उदाहरण है। यूरोप में औद्योगिक क्रांति 18वीं शताब्दी में शुरू हो गई थी जबकि जापान में औद्योगिक क्रांति 19वीं सदी के मध्य में शुरू हुई । औद्योगिकरण करने के लिए जापान ने अपने पारंपरिक ज्ञान–विज्ञान एवं विधाओं को नष्ट नहीं किया बल्कि आधुनिक विज्ञान का उपयोग करते हुए अपने पारंपरिक

उद्योगों को और विकसित और उन्नत बनाया । भारत में ऐसा करने का अंग्रेजों द्वारा प्रयास नहीं हुआ, लेकिन भारतीय समाज द्वारा ऐसे अनेक प्रयास किए गए और उसमें कुछ सफल भी हुए। विशेषकर 19वीं सदी के उत्तरार्ध में इस प्रकार के प्रयास भारत में हुए, कुछ सफल हुए कुछ असफल हुए और कुछ आंशिक रूप से सफल हुए ।

पुनः हम कुछ उदाहरण ले सकते हैं, एक बड़ा ही सुनियोजित एवं कर्मठता पूर्वक किया गया प्रयास Indian Association for cultivation of science था जो डॉ. महेंद्र लाल सरकार द्वारा 19वीं सदी के आखिर के कुछ दशकों में किया गया । इस प्रयास की एक बड़ी उपलब्धि डॉ. सी.वी. रमन, के रूप में सामने आई, जो इस प्रयास से जुड़े और भौतिकी में 1930 में नोबेल प्राइज प्राप्त किया। अनेक अन्य विभूतियां भी इस प्रयास से जुड़ीं जैसे कि डॉ. जगदीश चंद्र बसु, डॉ. प्रफुल चंद्र रे आदि जिन्होंने भी अपने–अपने क्षेत्र में अत्यधिक सफलताएं प्राप्त की। इस प्रभाव को हम उस समय का स्वदेशी ज्ञान–विज्ञान प्रभाव कह सकते हैं जो कि आधुनिक ज्ञान–विज्ञान को पारंपरिक ज्ञान–विज्ञान के साथ समन्वय कराते हुए आगे बढ़ा ।

इसी कड़ी में हम कुछ और नाम जोड़ सकते हैं। जैसे कि लोकमान्य तिलक जिन्होंने एक अद्वितीय प्रयास किया जिसका नाम था ''एक पैसा फैक्ट्री''। तिलक जी ने आम जन से एक–एक पैसे के रूप में योगदान लिया और कुछ बड़े उद्योग स्थापित किए जिनमें आधुनिक ज्ञान–विज्ञान के साथ पारंपरिक ज्ञान विज्ञान का सुंदर समन्वय था।

वास्तव में देश में बंग–भंग के विरोध में जो आंदोलन उठा उसके मूल में यही स्वदेशी औद्योगिकरण की भावना काम कर रही थी । बंगाल के युवाओं का एक बड़ा वर्ग जापान जाता था और वहां से इस नए ढंग के प्रौद्योगीकरण का प्रशिक्षण लेकर के देश वापस लौटता था। लेकिन उस तरह के औद्योगिकरण को आगे बढ़ाने के लिए यहां भी अंग्रेज सरकार सहयोग नहीं करती थी, जिससे अंग्रेजों के प्रति एक भारी नाराजगी बंगाल में व्याप्त थी जो बंग–भंग के विरोध के रूप में प्रकट हुई। और अंग्रेजों को अपना निर्णय वापस लेना पड़ा ।

इसी कड़ी में महात्मा गांधी का विशेष स्थान है जिन्होंने All India Village Industry Association बनाई। इसके Governing Body में उन्होंने डॉ. सी.वी. रमन, डॉ. जगदीश चंद्र बसु और डॉ. प्रफुल्ल चंद्र रे जैसे वैज्ञानिकों को जोड़ा । अनेक प्रयास इनके माध्यम से हुए जो आज भी अनेक रूपों में देश में चल रहे हैं, जैसे कि 'खादी ग्रामोद्योग आयोग' जिसके माध्यम से हजारों–हजारों छोटे–छोटे उद्योगों को देश में प्रोत्साहन मिलता है ।

दुर्भाग्य ये रहा कि यह स्वदेशी विचारधारा स्वतंत्रता के बाद कुंठित होते चली गई और हम आधुनिकता की चकाचौंध में अंधाधुंध विदेश की नकल करने लगे । आज का तकनीकी शिक्षा का ढांचा मुख्यतः इसी नकल का अंग है। हमने स्वदेशी का रास्ता छोड़कर पारंपरिक ज्ञान–विज्ञान एवं विधाओं को इस ढांचे में कोई स्थान नहीं दिया। इसलिए इसका लाभ एक छोटे से वर्ग तक सीमित हो गया है और समाज का बहुत बड़ा अंग इससे अछूता है इसमें बदलाव करना होगा ।

वर्तमान ढांचा अधिकतर डिग्री और सर्टिफिकेट्स पर आधारित है । इसमें प्रवेश के लिए भी डिग्री और सर्टिफिकेट्स की आवश्यकता होती है और इसमें से उपलब्धि भी डिग्री और सर्टिफिकेट्स ही होते हैं । यह ज्ञान, क्षमता, योग्यता को नहीं परखता सिर्फ डिग्री का कागज देखता है चाहे वह किसी भी रुप में प्राप्त किया हो इसलिए भयंकर विकृतियां इस व्यवस्था में आ गई है इसको बदलना होगा। देश के किसान, कारीगर, मजदूर आदि को इन डिग्रियों से क्या लेना देना उनके पास अपना ज्ञान है, विज्ञान है, क्षमता है, योग्यता है जिसको कोई भी नहीं पूछता। इसलिए ये सब वर्तमान तकनीकी शिक्षा से बाहर है और यह देश का बहुसंख्यक समाज है जो वर्तमान शिक्षा से पूर्णतः अछूता है ।

तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था में अभियांत्रिकी की प्रवेश परीक्षा के लिए JEE परीक्षा होती है। अभियांत्रिकी करने वाले के लिए JEE की परीक्षा की जगह व्यक्ति की तकनीकी योग्यता व रुझान (Technical Aptitude) मापदंड होना

चाहिए। जिसको हाथ से काम करने की सारी कुशलता मालूम है उसे अभियंता कहते हैं, जैसे हमारे पहले के कारीगर थे। जिसको अभियंता बनना है उसे हाथ से काम करने आना चाहिए। जिसको भी अभियांत्रिकी करना है उसको अपनी शुरूआत आई.टी.आई. से करना चाहिए और जो आई.टी.आई. के टॉप छात्र हो उन्हें, डिप्लोमा में प्रवेश मिले और डिप्लोमा के अच्छे छात्र को बी.टेक. में प्रवेश मिले और जो बी.टेक. के सबसे अच्छे छात्र हों उसे एम.टेक. और पीएच.डी. में प्रवेश मिले।

ऐसा भी नहीं है कि किसान, कारीगर और मजदूर इस देश की आर्थिक व्यवस्था में अपना योगदान नहीं कर रहे हैं। वास्तव में तो आर्थिक व्यवस्था का इस देश में सबसे बड़ा उत्पादक वर्ग है और बाकी वर्ग तो इनके उत्पादकता के कारण ही उनपर पूर्ण आश्रित है। कृषि में तो यह सर्वविदित है ही कि किसान उत्पादन करता है और बाकी समाज अपने भोजन के लिए उनपर आश्रित है ।

यही सत्य अन्य क्षेत्रों में भी उसी प्रकार प्रतिपादित होता है । उदाहरण के रूप में अगर हम वस्त्र उद्योग ले तो वहां भी वस्त्र उत्पादन है उसका छोटा सा भाग ही आधुनिक मिलों में बनता होगा जिनको भारी सरकारी मदद मिलती है पर एक बहुत बड़ा भाग वस्त्र को हैंडलूम और पावरलूम में उत्पादन होता है जिसको अधिकतर कारीगर समुदाय ही चलाता है। जिनको कोई तकनीकी सहयोग नहीं मिलता ।

इसी प्रकार एक उदाहरण ऑटोमोबाइल उद्योग का ले सकते हैं जिसका पूरा रखरखाव (रिपेयर एंड मेंटिनेस) कारीगरों द्वारा ही किया जाता है कोई भी आधुनिक तकनीकी ढांचा इसमें कोई योगदान नहीं करता यही सत्य लगभग सभी उद्योगों का है। इतना सब योगदान होते हुए भी पारंपरिक ज्ञान–विज्ञान और विधाओं का वर्तमान तकनीकी शिक्षा से कोई संबंध नहीं बना है, यह विचारणीय है।

वर्तमान तकनीकी शिक्षा को बदलना होगा । इसमें कारीगरों, किसानों और मजदूरों का योगदान बढ़ाना होगा, तकनीकी शिक्षा को इन्हीं वर्गों की दृष्टि से ढालना होगा, और कागज (डिग्री, सर्टिफिकेट्स) आधार खत्म करना होगा और वास्तविक ज्ञान, क्षमता एवं योग्यता आधारित करना होगा। कारीगरों, मेकेनिको, एवं अन्य तकनीकी ज्ञान वालों को किस तरह कागजी डिग्री वालों के बराबर मान्यता मिले उसकी नई शिक्षा नीति में व्यवस्था करनी चाहिए।

संदर्भ

1. नई शिक्षा नीति 2020, शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार, www.education.gov.in
2. भारत में तकनीकी शिक्षा की दिशा पर आलेख, शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास नई दिल्ली।
3. Dharampal, Collected Writings, vol III, “The Beautiful Tree: Indigenous Indian Education”, Other India Press, Mapusa, Goa, (2000)
4. https://unnatbharatabhiyan.gov.in
5. Vijay, Virendra Kumar, Ph.D Thesis “ Rural Industries Development using Biomass energy, IIT Delhi (1998)

राष्ट्र के पुनरुत्थान की नींव
(नई शिक्षा नीति के संबंध में)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में राष्ट्र के पुनरुत्थान की नीव रखी गई है। इस नीति के सुचारू एवं समग्रता से क्रियान्वयन द्वारा देश की शिक्षा बदलेगी। जब शिक्षा बदलेगी तो इस परिवर्तन का सकारात्मक समग्र असर देश पर पड़ेगा। इससे देश बदलेगा यानी समृद्धि, समर्थ एवं शक्तिशाली भारत के निर्माण में हम अग्रसर हो सकेंगे।

श्री अतुल कोठारी
राष्ट्रीय सचिव, शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास, नई दिल्ली

किसी भी राष्ट्र की उन्नति में वहां की शिक्षा व्यवस्था की महत्ती भूमिका होती है। इसका स्पष्ट प्रभाव समाज, संस्कृति, राजनीति एवं अर्थव्यवस्था पर परिलक्षित होता है। इसलिए राष्ट्र का निर्माण करने हेतु सबसे पहले वहां की शिक्षा व्यवस्था को सशक्त, समर्थ एवं राष्ट्रानुकूल बनाने की आवश्यकता होती है। यूनेस्को की डैलर्स समिति की रिपोर्ट के अनुसार, 'किसी भी देश की शिक्षा का स्वरूप उस देश की संस्कृति एवं प्रगति के अनुरूप होना चाहिए।' इसमें एक शब्द 'प्रकृति' को भी जोड़ना उचित होगा। तात्पर्य यह है कि किसी भी देश की शिक्षा, व्यवस्था जिस प्रकार की होगी, देश और समाज भी वैसा ही बने। शिक्षा किसी भी राष्ट्र की आधारशिला होती है। शिक्षा का आधारभूत लक्ष्य चरित्र निर्माण एवं व्यक्तित्व का समग्र विकास है। आज चरित्र का संकट एक प्रकार से विश्व की अधिकतर समस्याओं की जड़ में है। शिक्षा के इस महत्वपूर्ण लक्ष्य के साथ दो और सहायक बातें अपेक्षित हैं। शिक्षा के द्वारा देश एवं सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो तथा राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय चुनौतियों का समाधान प्राप्त हो सके। किसी भी देश के निर्माण हेतु यह तीनों आधारभूत बातें आवश्यक हैं।

नई शिक्षा नीति में विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण और व्यक्तित्व विकास को पूर्व प्राथमिक शिक्षा से ही संज्ञान में लिया गया है। छात्र खेल–खेल में एवं गतिविधियों द्वारा सीखें जिससे उन छात्रों में सृजनात्मकता, रचनात्मकता एवं नवाचार की दृष्टि का विकास हो सके, इस प्रकार के प्रावधान किए गए हैं। चरित्र–निर्माण हेतु भारतीय मूल्यों, संवैधानिक मूल्यों एवं सामुदायिक सेवा आदि का समावेश किया गया है। छात्रों के समग्र विकास हेतु सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ–साथ व्यावसायिक शिक्षा, कौशल विकास का विद्यालयी शिक्षा से ही पाठ्यक्रमों में समावेश की बातें हैं। इस प्रकार छात्रों को रोजगारपरक शिक्षा प्रदान कर उन्हें रोजगार की याचना करने वाले से रोजगार देने वाला बनाने की संकल्पना पूरी होगी। इससे देश आत्मनिर्भरता की दिशा में भी आगे बढ़ेगा।

किसी भी देश के विकास में शोध कार्य का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान होता है, इस हेतु शिक्षा नीति में 'राष्ट्रीय अनुसंधान प्रतिष्ठान' के गठन का प्रावधान किया गया है। छात्रों के समग्र विकास से ही देश एवं समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकेगी एवं राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय चुनौतियों के समाधान हेतु छात्र सक्षम बनेंगे। किसी भी देश का निर्माण अतीत को विस्मृत करके नहीं किया जा सकता। इस शिक्षा नीति में भारतीय ज्ञान परंपरा के समावेश के साथ–साथ ई–लर्निंग, ऑनलाइन शिक्षा आदि के प्रावधान द्वारा प्राचीन एवं आधुनिकता के समन्वय की बात कहीं गई है। इसी प्रकार विज्ञान और तकनीकी शिक्षा के साथ आध्यात्मिकता को जोड़ने की बात भी है। इस संबंध में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद (पूर्व राष्ट्रपति) ने कहा था, 'समय आ गया है जब अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय ही हमें आण्विक युग में सुरक्षा प्रदान कर विकास की ओर उन्मुख कर सकेगा।' वास्तव में, राष्ट्रीय शिक्षा नीति इस दिशा में एक सार्थक पहल कहीं जाएगी।

किसी भी देश का निर्माण मात्र कुछ वर्गों के विकास से संभव नहीं हो सकता। लिहाजा समावेशी शिक्षा अर्थात् दलित, पिछड़े–वंचित वर्ग, महिला, शारीरिक दृष्टि से अक्षम तथा

गांव–कस्बों, पहाड़ी एवं जनजातीय क्षेत्रों के छात्रों के विकास हेतु भी अनेक कदम उठाने होते हैं, जो इस नई नीति में सुस्पष्ट है। स्वतंत्रता पश्चात् पहली बार ऐसा हुआ है कि सामाजिक–आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग के छात्रों में शिक्षा को बढ़ावा देने हेतु विशेष शिक्षा क्षेत्र की संकल्पना रखी गयी है। साथ ही छात्राओं की शिक्षा को बढ़ावा देने हेतु एक विशेष, क्षेत्र की संकल्पना रखी गयी है। साथ ही छात्रों की शिक्षा को बढ़ावा देने हेतु एक विशेष 'जेंडर समावेशी कोष' की भी आवश्यकता है। देश के विकास में भाषा का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। मातृभाषा में शिक्षा पूर्ण रूप से वैज्ञानिक दृष्टि है। इस नीति में मातृभाषा अथवा स्थानीय भाषाओं में प्राथमिक से लेकर उच्च एवं तकनीकी शिक्षा प्रदान करने की केवल बात नहीं कही गई है, बल्कि शिक्षा नीति के एक वर्ष निमित्त आयोजित कार्यक्रम में माननीय प्रधानमंत्री ने इंजीनियरिंग की शिक्षा इसी वर्ष से आठ भारतीय भाषाओं में प्रारम्भ करने की घोषणा भी की है।

[साभार–दैनिक जागरण, (2 अगस्त, 2021)]

किस सुधि–वसन्त का सुमन–तीर,

किस सुधि–वसन्त का सुमन–तीर,
कर गया मुग्ध मानस अधीर?

वेदना गगन से रजत ओस,
चू–चू भरती मन–कंज–कोष,
अलि–सी मंडराती विरह–पीर!

मंजरित नवल मृदु देह डाल,
खिल–खिल उठता नव पुलक जाल,
मधु–कन सा छलका नयन–नीर!

अधरों से झरता स्मित पराग,
प्राणों में गूँजा नेह–राग,
सुख का बहता मलयज समीर!

घुल–घुल जाता यह हिम–दुराव,
गा–गा उठते चिर मूक–भाव,
अलि सिहर–सिहर उठता शरीर!

–सुश्री महादेवी वर्मा

सस्टेनिबिलिटी मॉडल की खोज में कुछ प्रयास (क्षेत्रीय एवं वैश्विक अध्ययन)

डॉ. गोपाल बाबू[1] डॉ. हर्ष सत्या[2] स्वं. प्रो. ऋषिराज गौड़[3], प्रो. सन्तोष सत्या[4]

[1]सहायक प्रोफेसर, अजय कुमार गर्ग इंजीनियरी कॉलेज, गाजियाबाद
(ई–मेलः gopalbabu@iitdalumni.com)

[2]समन्वयक (अनुसंधान), सोसाइटी फॉर इंटीग्रेटिड डेवलपमेन्ट ऑफ हिमालय, मसूरी (उत्तरा खण्ड)

[3]पूर्व अध्यक्ष, एनआरसीवीईई, आई.आई.टी. दिल्ली

[4]एमेरिटस प्रोफेसर, ग्रामीण विकास एवं प्रौद्योगिकी केन्द्र, आई.आई.टी. दिल्ली

1. प्रस्तावना

स्थायी विकास (sustainable development) के प्रति गम्भीर सरोकार वैश्विक स्तर पर दृष्टिगोचर हो गया है। विश्व स्तर पर गतिशील स्थिरता (sustainability) पर चर्चा ब्रंटलैंड रिपोर्ट (WCED, 1987) के प्रकाशन के बाद शुरू हुई। ब्रंटलैंड रिपोर्ट का इस बात पर विशेष जोर है कि हमें न केवल अपनी पीढ़ी की आवश्यकताओं की चिंता होनी चाहिए बल्कि भावी पीढ़ियों की आवश्यकता पूर्ति की जिम्मेदारी भी हमारी ही है। और वह पूर्ति भी इस तरह होनी चाहिये कि पर्यावरण को क्षति न पहुँचे (Mensah, 2019)। इस विचार को एक प्रकार का मूल मंत्र मानते हुए अनेकों संस्थानों (विश्वविद्यालय, अन्य अकादमी जगत के संस्थान, बड़ी बड़ी कोरपोरशन एवं समाज सेवी संस्थाएँ आदि) में इस ओर अनेकों प्रयास किए गये हैं। इन विभिन्न प्रयत्नों का फल है कि आज हमारे पास स्थायी विकास की करीब 70 अलग–अलग परिभाषाएँ उपलब्ध हैं। इन सभी परिभाषाओं में इस बात को महत्ता दी गयी है कि हमें आर्थिक उन्नति, सामाजिक मुद्दे और पर्यावरण के बीच एक तारतम्यता को सुनिश्चित करना होगा।

आश्चर्य की बात है कि इन सभी संस्थानों की सद–इच्छा और इनके द्वारा किए गए प्रयासों के बावजूद इनका धरातल पर असर नगण्य ही है। सभी शोधकर्ता यह मानते हैं कि दो महत्वपूर्ण प्राचल (i) धरती का पर्यावरण और (ii) सामाजिक बराबरी का पतन रुका नहीं है बल्कि और तेज ही हुआ है। ऐसा लगता है कि स्थाई विकास की अवधारणा में आवश्यक आन्तरिक विधायी शक्ति की कमी है जो उपयुक्त राजनैतिक एवं सामाजिक बदलावों को अंजाम दे सके। इस कमी का मुख्य कारण है कि भोगवादी जीवनशैली में परिवर्तन करने को कोई अभी तैयार नहीं है। हांलाकि, धीरे धीरे यह सहमति अवश्य बन रही है कि sustainable consumption (SC) के बिना sustainable development (SD) सम्भव नहीं हो पायेगा। और इसलिए धरती के ऊर्जा स्रोत्रों को sustainable उपयोग में खर्च करने की बात अब होने लगी है। फिर भी sustainable जीवन शैली के लिए अभी लोग तैयार नहीं दिख रहे हैं। जिसके कारण स्थायी विकास की भाँति Sustainable उपभोग का क्रियान्वन भी विफल साबित हो रहा है। इसके लिए हमें भौतिकवादी paradigm से बाहर निकलना होगा (Stefanovich, 2000)। वास्तव में SC-SD युग्म को धरातल पर प्रतिस्थापित करने के लिये यह नितान्त आवश्यक है।

अगर हम Hove (2004) और Morse (2008) की बात पर ध्यान दें तो स्थायी विकास मूलतः पश्चिम की भौतिकवादी सभ्यता का ही एक सिद्धांत है– जिसका मूल सरोकार केवल आर्थिक उन्नति ही है। इस कारण स्थायी विकास की अवधारणा में एक मौलिक कमी है। भौतिकवादी दृष्टि के मूल में सामाजिक गैर बराबरी, सामाजिक उत्पीड़न और प्रकृति का शोषण निहित है (Capra & Luisi, 2014)। इस की समीक्षा तालिका–1 में की गई है!

तालिका–1 आधुनिक विकास मॉडल।

आधुनिक विकास की दार्शनिक धुरि	सामाजिक व्यवस्था पर इसका प्रभाव
एक भौतिकवादी दृष्टि जिसमें असीम आर्थिक उन्नति की चाहना निहित है।	• 'विकसित' और 'विकास–शील' देशों के बीच बढ़ती दूरी। • प्राकृतिक धरोहर का दोहन। • सामाजिक गैर बराबरी और शोषण। • लगातार बढ़ता भय और असुरक्षा का माहौल।

आधुनिक विकास के सभी लक्षण यह स्पष्ट संकेत दे रहे हैं कि विश्व समुदाय unsustainability की ओर अग्रसर हो रहा हैं। अतः यह नितान्त आवश्यक हैं कि स्थायी विकास के लिए किए गए प्रयासों की एक समीक्षा हो, उनके अध्ययन से 'दृष्टि–परिवर्तन' के कुछ संकेत हमें मिल सकते हैं।

2. कुछ सामुदायिक प्रयासों का अध्ययन

इस भाग में हम कुछ सामुदायिक विकास के लिये किये गये प्रयासों पर संक्षिप्त चर्चा कर रहे हैं। ऐसे पाँच प्रयास नीचे लिखे हैं, जिनका हमने गहन अध्ययन तथा समीक्षा की है:

(i) पारम्परिक भारत की जजमानी व्यवस्था।
(ii) भारत में रालेगन सिद्धि का ग्रामीण विकास का मॉडल।
(iii) भारत में औरोविल अंतरराष्ट्रीय समुदाय।
(iv) इजराइल में किबुत्ज और मोशाव समुदाय।
(v) वैश्विक स्तर पर चल रहा 'ईको–विलेज' आंदोलन।

प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य इन अलग–अलग प्रयासों के पीछे प्रचालित सैद्धान्तिक दृष्टि को समझना है।

2.1 भारतवर्ष की पारम्परिक जजमानी व्यवस्था

भारत की पारम्परिक जजमानी व्यवस्था ने अनेकों शोधकर्ताओं का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है– समाजशास्त्री (Sociologist), अर्थशास्त्री (Economist), मानवीय वैज्ञानिक (humane scientist) इत्यादि। अधिकांश अध्ययन भारत की 'जाति व्यवस्था' को समझने तक सीमित रहा है तथा ये अध्ययन एक ऐसे समय के है जब यह व्यवस्था टूट चुकी थी, और इसमें अनेकों भ्रांतियों ने प्रवेश कर लिया था। इनमें Wiser (1936), Dumont (1970), Gould (1986), M.N. Srinivas (1956) के अध्ययन मुख्य माने गए हैं। इनके अतिरिक्त Dharam pal (2007) का अध्ययन भी महत्वपूर्ण रहा है जिसने पिछले कुछ वर्षों में शोधकर्ताओं को एक नवीन दृष्टि प्रदान की है।

जजमानी व्यवस्था–मुख्य विशेषतायें

- वास्तविक आवश्यकता–आधारित परस्पर खुशी प्रदान करने वाला व्यवसाय।
- 'Tool based technology के प्रयोग द्वारा विकेन्द्रित, परिवार मूलक उत्पादन व्यवस्था।
- पीढी दर पीढी सभी के लिए जीविका की आश्वस्ति।
- सम्बन्ध आधारित अर्थव्यवस्था (the Kinship system)
- स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों का पर्या–हितेषी उपयोग।
- सामूहिक विचार विमर्श व चिन्तनशीलता तथा समुदाय भागीदारी को बढ़ावा देना।

[1] *आनंद कुमारस्वामी ने पारम्परिक कारीगरी टेक्नॉलाजी को **tool based** टेक्नॉलाजी कहा। टूल और मशीन का मौलिक अंतर हमें शूमाकर के काम में मिलता है। महात्मा गांधी ने भी इस अंतर को महत्व दिया है।*

Sustainability को ध्यान में रखते हुए जजमानी व्यवस्था का अध्ययन नहीं किया गया है। इस व्यवस्था के अगर सैद्धांतिक परिपेक्ष्य पर ध्यान दें, तब sustainability से सम्बंधित कुछ महत्वपूर्ण और मौलिक विचारों को उजागर करना सम्भव है। इस सम्बंध में आदिलाबाद (तेलंगाना) के श्री रविंद्र शर्मा द्वारा किया गया अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इनकी गहन समीक्षा एक पी.एच.डी. थीसिस में की गयी है (satya, 2020)।

तालिका–2 से स्पष्ट है कि मूलतः जजमानी व्यवस्था यज्ञ के सिद्धांत पर आधारित है। यज्ञ की अवधारणा समस्त अस्तित्व की इकाइयों के बीच अर्न्तसम्बन्ध देखती है, उनमे 'परस्पर–पूरकता' का सम्बंध देखती है। यज्ञ का यह वैदिक सिद्धांत जजमानी व्यवस्था में sustainability को सुनिश्चित करने का मूल प्रेरक है।

2.2 इजराइल में किबुत्ज और मोशाव समुदाय

इजराइल में किबुत्ज और मोशाव intentional community के प्रयोग सहकारिता, सामाजिक न्याय एवं प्रकृति के प्रति जिम्मेदारी रखने को बढ़ावा देती हैं। तालिका–3 में इजराइल मॉडल की समीक्षा प्रस्तुत की गयी है।

2.3 ग्रामीण विकास का रालेगन सिद्धि मॉडल

श्री अन्ना हजारे के नेतृत्व में किया गया यह सामाजिक प्रयास अपने आप में अनोखा है। इसके चलते अभूतपूर्व सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन देखने को मिला है। इस परिवर्तन के पीछे स्थानीय लोगों में 'दृष्टि–परिवर्तन' एवं उनके उत्साह में वृद्धि को माना जाता है। इसके चलते स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों का पोषण, संरक्षण एवं विवेकपूर्ण उपयोग की एक सुंदर परम्परा बनी है। इस प्रयोग की आज वैश्विक ख्याति है। रालेगन सिद्धि को एक आदर्श ग्राम के रूप में देखा जाता है, जिसने अपना सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान स्वयं ही किया। इसके पीछे श्री अन्ना हजारे के निश्चल चरित्र और समाज के प्रति उनकी जवाबदेही महत्वपूर्ण स्तम्भ माने जाते हैं।

तालिका–2 जजमानी व्यवस्था एवं समाज

जजमानी व्यवस्था की दार्शनिक धुरि	सामाजिक व्यवस्था पर प्रभाव
• जजमानी व्यवस्था का दार्शनिक आधार वैदिक सिद्धांत'यज्ञ' है। • 'यज्ञ' की अवधारणा समस्त अस्तित्व की ईकाइयों को अंतर–सम्बंधित मानती है। यह सम्बन्ध 'परस्पर–पूरकता' के अर्थ में देखा गया है। • इसलिए मानव से भी अपेक्षा है कि वह 'परस्पर–पूरकता' के अर्थ में ही अपना कार्य (प्रकृति के साथ) और व्यवहार (अन्य मानव के साथ) करे।	• आवश्यकता अनुसार और 'परस्पर–पूरकता' के अर्थ में व्यवसायों का निर्माण हुआ। • सभी व्यवसायों के बीच 'परस्पर–पूरकता' का अर्न्तसम्बन्ध स्थापित किया गया था। • विकेंद्रित उत्पादन प्रक्रिया निर्मित हुई। परिवार को उत्पादन की इकाई माना गया। और 'tool based technology' से उत्पादन सुनिश्चित किया गया। • सभी के लिए, पीढ़ी दर पीढ़ी 'आहार की सुरक्षा' (व्यवसाय की सुरक्षा) सुनिश्चित की गयी। • प्राकृतिक संसाधनों का sustainable प्रक्रिया से उपयोग सुनिश्चित किया गया।

तालिका 3: इजराइल मॉडल (किबुत्ज आन्दोलन)

किबुत्ज और मोशाव की दार्शनिक धुरि	सामाजिक व्यवस्था पर प्रभाव
• किबुत्ज आंदोलन की घोषणा थी–किसी भी व्यक्ति का शोषण नहीं तथा कोई शोषक नहीं ["No one exploited and no exploiters" (Richman, 2004), । • इसका मूल सिद्धांत है– ''प्रत्येक से उसकी योग्यता के अनुसार प्राप्त को प्रत्येक को उसकी आवश्यकता के लिये।''	• सभी की भौतिक एवं मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति की आश्वस्ति। • सहकारिता में कार्य करने का प्रावधान। • बच्चों का पालन–पोषण एवं उनकी शिक्षा की सामुदायिक जिम्मेदारी। • सामुदायिक योगदान द्वारा स्व–राज्य (self-governance) की व्यवस्था।

तालिका–4: रालेगन सिद्धि मॉडल

रालेगन सिद्धि मॉडल की दार्शनिक धुरि	सामाजिक व्यवस्था पर प्रभाव
• अन्ना हजारे का ध्यान गाँव के लोगों का 'चेतना विकास' करने पर था– बच्चों में शिक्षण द्वारा और बड़ों में सामूहिक विचार–विमर्श द्वारा। बच्चों की शिक्षा ऐसी हो जो उनका चारित्रिक विकास करे– दोनो मन और शरीर को मजबूत बनाए। इसके लिए व्यायाम, योग एवं मूल्य शिक्षा पर खास जोर दिया गया।	• सामुदायिक कार्यों में 'श्रम–दान' की संस्कृति का निर्माण हुआ। • स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों के पोषण, संरक्षण एवं सदुपयोग द्वारा गाँव की आत्मनिर्भरता को सुनिश्चित किया गया। • सामुदायिक प्रयास, सभी के बीच बराबरी एवं सत्यता की संस्कृति का निर्माण करना। • समाज में वे लोग जो किसी कारण अक्षम हैं उन पर समाज का विशेष ध्यान बना रहे, ऐसा सुनिश्चित किया गया।

संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्रस्तावित "sustainability व विकास" सम्बंधित लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए जाधव (2015) ने रालेगन सिद्धि मॉडल का गहरा अध्ययन किया है। उनके निष्कर्ष में वैश्विक स्तर पर इस मॉडल के सफल होने की काफी सम्भावना है।

2.4 औरोविल अंतरराष्ट्रीय समुदाय का प्रयास

दक्षिण भारत में स्थित औरोविल एक "यूनिवर्सल टाउन" है जहाँ दुनिया के किसी भी कोने में बसे लोग आ सकते हैं और बस सकते हैं। उनकी अधिकारिक वेबसाइट कहती है कि औरोविल का उद्देश्य सम्पूर्ण मानव जाति में सौहार्द पैदा करना है।

तालिका 5: ओरोविल 'यूनिवर्सल टाउन'

औरोविल अंतरराष्ट्रीय समुदाय की दार्शनिक धुरि	सामाजिक व्यवस्था पर प्रभाव
• शिक्षा का उद्देश्य सेवा भाव को जागृत करना है। सेवा करने के उद्देश्य से ही कौशल विकास (skill development) करना है। शिक्षा परीक्षा पास करने के लिए नहीं दी जाती है। • सभी की शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति होनी होगी। • हर एक व्यक्ति की योग्यता का सम्मान होगा, न कि पद या पैसे का।	• **सामूहिक स्व–राज (Collective Self-Governance")**: कोई एक व्यक्ति या फिर कोई एक छोटे समूह के पास विधायी शक्ति (legislative power) संकुचित नहीं है बल्कि निर्णय लेने का अधिकार औरोविल की समस्त राजनैतिक समूह (political body) के पास है। • **Sustainability को बढ़ाने के प्रयास**– जोंगे के अध्ययन से पता चलता है कि औरोविल में सभी प्रयास इस बात को ध्यान में रखकर किए जाते हैं जिससे sustainability को सामाजिक, पर्यावरण एवं आध्यात्मिक आयामों के साथ जोड़ कर देख सकें। इसके साथ ही लोगों के जीवन शैली विविधता को पूरा सम्मान दिया जाता है।

2.5 ''ईको–विलेज'' आंदोलन

ईको–विलेज intentional traditional community है जिसे भागीदारी प्रक्रिया (participatory process) द्वारा sustainable रहन–सहन के लिए, बसाया गया है। दुनिया भर से अनेक लोग जो sustainability को लेकर संवेदनशील हैं, विचारशील हैं इस आंदोलन से जुड़ कर साथ रहने के प्रयास में हैं। 'ईको–विलेज' की परिभाषा है:

अनेक–सौ लागों का समुदाय, जो साथ मिलकर, दूसरे की भौतिक, आर्थिक, सामाजिक, मानसिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बसाया गया है। जहाँ स्थानीय प्रकृति के साथ ताल–मेल बिठा कर जिया जाता है (Hollick and Connelly,1999)।''

तालिका–6: 'ईको–विलेज' पारम्परिक समुदाय

''ईको–विलेज'' की दार्शनिक धुरि	सामाजिक व्यवस्था पर प्रभाव
• स्थानीय भागीदारी प्रकिया (Local participatory processes) इनका मूल सिद्धांत है। यानि सभी लोग मिलजुल कर साथ काम करते हैं और स्थानीयता– लोकल लोग और लोकल पर्यावरण को प्राथमिकता व महत्व मिलता है।	• प्रकृति संसाधनों का सही उपयोग और स्थानीय संसाधनों को समृद्ध बनाना। एक ऐसी जीवनशैली पर जोर है जिससे पर्यावरण पर कम से कम असर पड़े। साथ ही स्थानीय पर्यावरण और पशु–पक्षी का पोषण–संरक्षण होता है।

• सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं प्राकृतिक आयामों के बीच समन्वय पैदा करना। • स्थानीय समाज और प्राकृतिक पर्यावरण के पुनरुत्थान की तरफ प्रयासरत हैं।	• आत्म–निर्भरता का प्रयास यानि सभी आवश्यकताओं की पूर्ति स्थानीय पर्यावरण एवं समाज से पूरा करना। • Self - governance of collective contemplation – सामूहिक विचार विमर्श की संस्कृति को बढ़ावा देना जिससे सभी में sustainability की दृष्टि बने रहे।

3. उपसंहार

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट है कि इस पेपर में प्रस्तुत Sustainability के प्रयासों में सम्पूर्णता से देखने का नजरिया (holistic world-view) पर बल दिया गया है। ये सभी प्रयास आपसी ताल–मेल, न्यायपूर्ण समाज और प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग हो, इसपर बल देते हैं। इसके लिए सामाजिक सौहार्द पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इन सभी प्रयासों में संसाधनों के भोग की प्रवृत्ति को सही नहीं माना गया है। अत्याधिक भोग की प्रवृत्ति को उन्माद माना जाता है। हमें यह बिंदु sustainable development के लिए अनिवार्य लगते हैं। ऐसा कहना सही होगा कि sustainability प्राप्त करने के लिए holistic world-view अनिवार्य है।

इस संदर्भ में प्रकृति को एक 'महान यज्ञ' के रूप में देखने की अवधारणा 'परस्पर–पूरकता' को केंद्र में रखती है–अर्थात समाज के अन्य लोगों के साथ एवं प्रकृति के साथ 'परस्पर–पूरकता'। इस दृष्टि को सुनिश्चित करने के लिए पारम्परिक भारत के समाज में विशेष प्रयास किए गए थे। रालेगन सिद्धि और ऐसे अन्य प्रयास यह दर्शाते हैं कि आज के अस्थायी संरचना (unsustainable structures) को sustainability की तरफ सफलतापूर्वक मोड़ा जा सकता है। इसके लिए holistic world-view और स्थानीय समाज में दृढ़ संकल्प की आवश्यकता है।

Selected Bibliography

1. Capra, F., & Luisi, P. L. (2014). The Systems View of Life. In (pp. 363). Cambridge University Press.
2. Dharampal "Panchayat Raj and India's Polity" Other India Press, Goa 2007 (This volume comprises two separate books: "Panchayat Raj as the Basis of India's Polity", first published in 1962 by AVARD and "The Madras Panchayat System", first published in 1972 by the Balwantray Mehta Panchayati Raj Foundation).
3. Gould, Harold A. "The Hindu Jajmani System: A Case of Economic Particularism." *Journal of Anthropological Research* 42, no. 3 (1986): 269-78. http://www.jstor.org/stable/3630033.
4. Hove, H. (2004). Critiquing sustainable development: a meaningful way of mediating the development impasse? *Undercurrent*, *1*(1).
5. Madan, Vandana. "The Village in India" Oxford University Press, New Delhi 2013.
6. Mensah, J. (2019). Sustainable development: Meaning, history, principles, pillars, and implications for human action: Literature review. *Cogent Social Sciences*, *5*(1). https://doi.org/10.1080/23311886.2019.1653531
7. Morse, S. (2008). Post-Sustainable Development. *Sustainable Development*, *16*(5), 341-352.
8. Stefanovich, I. L. (2000). *Safeguarding our common future: Rethinking sustainable development*. Albany: State University of New York Press.
9. WCED. (1987). *Our Common Future: Report of the World Commission on Environment and Development*. O. U. Press.
10. Wiser, William H. "The Hindu Jajmani System: A Socio-Economic System Interrelating Members of a Hindu Village Community in Services" MunshiramManoharlal Publishers Pvt. Ltd. Delhi, 1988 (first published in 1936).

जजमानी व्यवस्था में सस्टेनिबिलिटी का स्वरूप

डॉ. हर्ष सत्या[1], डॉ. गोपाल बाबू[2], स्व. प्रो. नवज्योति सिंह[3], प्रो. राजीव सांगल[4]

[1]समन्वयक (अनुसंधान), सोसाइटी फॉर इंटीग्रेटिड डेवलपमेन्ट ऑफ हिमालय, मसूरी (उत्तरा खण्ड)
(ई–मेलः harshsatya@gmail.com)
[2]सहायक प्रोफेसर, अजय कुमार गर्ग इंजीनियरी कॉलेज, गाजियाबाद
[3]पूर्व अध्यक्ष, सी.ई.एच. आई.आई.आई.टी. हैदराबाद
[4]प्रोफेसर, आई.आई.आई.टी. हैदराबाद

1. प्रस्तावना

किसी भी राष्ट्र में वहां के जनसमुदाय के लिए गतिशील स्थिरता (sustainability) के आधार पर विकास प्राप्त करना उसकी वास्तविक प्रगति के लिये अत्यन्त आवश्यक है (Abey George,1994)। इस संदर्भ में औद्योगिक गतिविधियों में टैक्नोलोजी की अहम भूमिका है। साथ ही प्राकृतिक संसाधन के उपयोग के लिये इन टैक्नोलोजी का सामाजिक व्यवस्था एवं पर्यावरण पर प्रभाव को समझना अनिवार्य है। प्राकृतिक संसाधन के दोहन व उपभोग के संदर्भ में सहअस्तित्व सिद्धान्त (Nagraj, 2001) नितान्त भिन्न तस्वीर प्रस्तुत करता है। इनके अनुसार अस्तित्व में प्रत्येक इकाई, दूसरी इकाई से परस्पर पूरकता के रूप में जुड़ी है, जो प्राकृतिक संसाधनों (खनिज लवण, बायोमास, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि के रूप में) के दोहन की एक सीमा निर्धारित करती है। अतः यह नितान्त आवश्यक हो जाता है कि भविष्य की आवश्यकता पूर्ति की योजना बनाते समय प्रकृति की समृद्धि को ध्यान में रखा जाये तथा तदनुसार टैक्नोलोजी विकसित करके उपयोग की जाये। भौतिकवादी दृष्टिकोण पर आधारित वैश्वीकरण (Capra & Luisi, 2014) के युग (सीमारहित परिस्थिति) में यह दिशा–निर्देश अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है।

भारत की पारम्परिक जजमानी व्यवस्था के संदर्भ में अधिकांश अध्ययन भारत की 'जाति व्यवस्था' को समझने तक सीमित रहा है। और यह अध्ययन एक ऐसे समय में किये गये हैं जब यह व्यवस्था टूट चुकी थी, और इसमें अनेकों भ्रांतियों ने प्रवेश कर लिया था। इनमें Wiser (1936), Dumont (1970), Gould (1986), M.N. Srinivas (1956) के अध्ययन मुख्य माने गए हैं। लेकिन Sustainability को ध्यान में रखते हुए जजमानी व्यवस्था का अध्ययन अभी तक नहीं किया गया है। प्रस्तुत रिसर्च पेपर में जजमानी व्यवस्था के Sustainability आयाम को समझने का प्रयास है। इस व्यवस्था के अगर सैद्धांतिक परिपेक्ष्य पर ध्यान दें, तब sustainability से सम्बंधित कुछ महत्वपूर्ण और मौलिक बातों को उजागर करना सम्भव है (Satya, 2020)।

2. जजमानी व्यवस्था

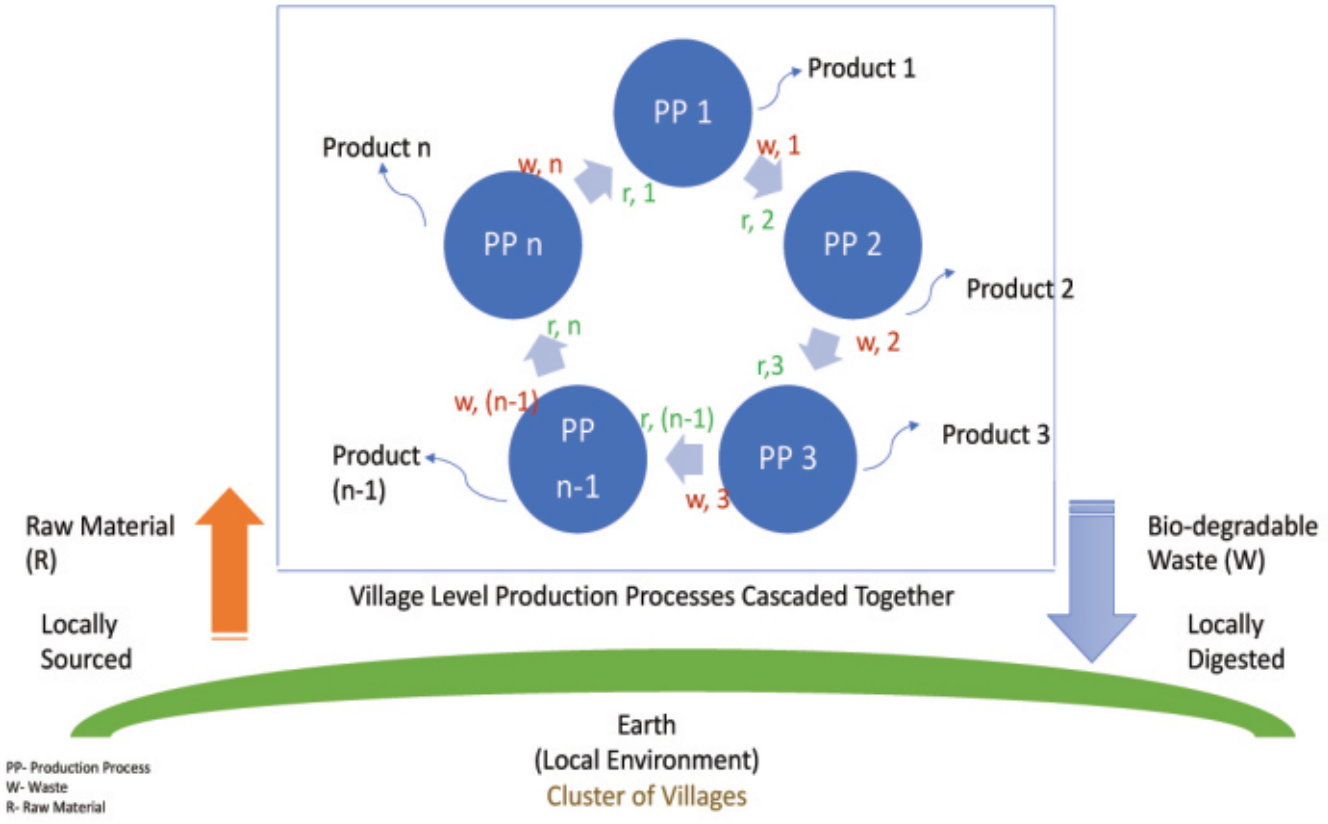
जैसा कि नाम से विदित है जजमानी व्यवस्था 'यज्ञ के सिद्धांत' पर आधारित है। यज्ञ की अवधारणा समस्त अस्तित्व की इकाइयों के बीच अंतर–सम्बंध देखती है, उनमे 'परस्पर–पूरकता' का सम्बंध देखती है। यज्ञ का यह वैदिक सिद्धांत जजमानी व्यवस्था में sustainability को सुनिश्चित करने का मूल प्रेरक है।

2.1 Sustainability Loops

Sustainability को सुनिश्चित करने के लिए जजमानी व्यवस्था में स्थानीय स्तर पर sustainability loops का निर्माण किया जाता था। इसके चलते, एक गाँव में कम से कम अपशिष्ट पदार्थ उत्पन्न हो, (waste generation) ऐसा सुनिश्चित किया जाता था। या फिर दूसरे शब्दों में ऐसा भी कहा जा सकता है कि एक गाँव स्थानीय स्तर पर अपने अपशिष्ट पदार्थ को पचाने की क्षमता रखे, इसे जजमानी व्यवस्था में सुनिश्चित किया जाता था।

इसे समझने के लिए उत्पादन सम्बंधित कुछ मौलिक बातों पर ध्यान देना आवश्यक होगा। हर उत्पादन प्रक्रिया (production process) से हमें अभीष्ट उत्पाद (product) मिलता है और साथ ही कुछ अवांछित अवशिष्ट भी मिलता है जिसे हम by product या waste कहते हैं। sustainability की एक बड़ी चिंता है कि waste का क्या किया जाय, उसे कैसे पचाया जाय। जजमानी व्यवस्था में इसका समाधान cascading के माध्यम से एक के waste को दूसरे के raw material के रूप में प्रयोग करने की व्यवस्था निर्मित की गयी थी। इसके फलस्वरूप स्थानीय स्तर पर sustainability loops तैयार किए जाते थे। नीचे दिए चित्र में इसे दर्शाया गया है।

चित्र–1 में जजमानी व्यवस्था में विभिन्न व्यवसायों के बीच 'परस्पर–पूरकता' का अन्तरसम्बन्ध दिखाया गया है। यह सुनिश्चित किया जाता था कि किसी एक व्यवसाय का waste (w) किसी दूसरे व्यवसाय के raw material (r) के रूप में उपलब्ध हो। चित्र–1 में हम देख सकते हैं PP1 का waste (w,1) का उपयोग PP2 में raw material (r, 2) के रूप में हो रहा है। ऐसे ही PP2 का waste (w2) का उपयोग PP3 में raw material (r,3) के रूप में हो रहा है। इस प्रकार एक गाँव में sustainability loop बनता है जिसके चलते सभी production process (गाँव के व्यवसाय) एक दूसरे से जुड़ते हैं, एक दूसरे पर निर्भर होते हैं।



चित्र–1 : Sustainability Loop (स्रोत : हर्ष सत्या,, 2021)

यह घुमंतू व्यवसायों की महिमा रही है। आधुनिक जीवन में अधिकतर घुमंतू समाज एक जगह बैठ गया है। इनके बैठ जाने से बड़े ***sustainability loops*** पर क्या असर पड़ा है, यह एक अध्ययन का विषय है।

उदाहरण के रूप में गाँव में खेती में उत्पन्न waste, जैसे कि फसल काटने के बाद बची बायोमास इलाके के भेड़वालों के लिए उपयुक्त raw material है जिसे भेड़ आकर चर जाती है। और फिर भेड़ों के किसान के खेत में बैठना (गोबर, मल–मूत्र आदि) भूमि की उर्वरकता के लिए महत्वपूर्ण है। इस तरह किसान और भेड़वालों के बीच परस्पर–पूरकता (cascading) का एक सुंदर सम्बंध चलता आया है (उत्तरी कर्णाटक एवं महाराष्ट्र के बड़े हिस्से में आज भी इसे देखा जा सकता है)। ऐसा परस्पर–पूरकता (cascading) का सम्बंध गाँव में सभी व्यवसायों के बीच सुनिश्चित किया जाता था, जिससे waste को पचाना और raw material की उपलब्धि आपस में स्वतः ही सुनिश्चित हो जाती थी। फिर, ऐसी ही cascading स्थानीय पर्यावरण के साथ सुनिश्चित की जाती थी जिससे जो बचा हुआ waste है, उसे स्थानीय पर्यावरण पचा ले और जो मूल raw material की आवश्यकता है वो स्थानीय पर्यावरण से उपलब्ध हो सके।

2.2 एक से अधिक गाँवों के बीच sustainability loop

चित्र–1 एक सामान्य नियम को दर्शाता है। अगर और गहराई में अध्ययन करेंगे तो हर गाँव में एक से अधिक sustainability loops देखने को मिलेंगे। ये sustainability loop एक से अधिक गावों के बीच भी मिल सकते हैं (ऐसे कुछ विशेष व्यवसाय होते हैं जो हर गाँव में स्थित नहीं होते बल्कि एक गाँव में स्थित होते हुए आस–पास के सभी गावों में उनकी जजमानी चलती है)। ऐसे ही कुछ विशेष व्यवसाय घूमंतु प्रकृति के भी होते हैं (जैसे भेड़वाले) जो एक गाँव में नहीं बसते बल्कि पूरे इलाके के गावों के बीच घूमते हैं। उनके घूमने से एक बड़े इलाके का sustainability loop बनता है। इस प्रकार जजमानी व्यवस्था में देहात (cluster of villages) के स्तर पर sustainability की पर्याप्त झलक मिलती है।

3. उपसंहार

उपरोक्त चर्चा स्पष्ट रूप से उजागर करती है कि जजमानी व्यवस्था में दो स्तर की cascading निर्मित की गयी थी। एक गांव के विभिन्न व्यवसायों के बीच तथा दूसरी गांव और स्थानीय पर्यावरण के बीच। यहां इस प्रकरण को स्थापित करना अनिवार्य है कि दोनों Cascading जरूरी हैं। न केवल किसी व्यवसाय को पर्यावरण के साथ परस्पर–पूरक होना होगा बल्कि विभिन्न व्यवसायों के आपस में भी परस्पर–पूरकता के सम्बंध होने होंगे। इस प्रकार यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि Sustainability का मुद्दा केवल पर्यावरण का नहीं बल्कि सामाजिक अर्न्तनिर्भरता (inter dependence) का भी मुद्दा है। यह दोनों बातें आपस में जुड़ी हैं। वास्तव में ऐसी व्यवस्था में सामाजिक अर्न्तनिर्भरता और पारिस्थितिकी संतुलन (ecological balance) दोनों साथ–साथ सुनिश्चित हो सकते हैं। पारम्परिक भारत की जजमानी व्यवस्था सहअस्तित्व सिद्धान्त के नैसर्गिक क्रियान्वयन का ज्वलन्त उदाहरण है। आधुनिक विकास मॉडल के स्वरूप में इस सिद्धान्त द्वारा आवश्यक बदलाव/समावेश करके अनेक सामाजिक व पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान करने की सम्भावना उजागर हुई है।

संदर्भ

1. Abey George (1994) Ph.D. Thesis "Study of tribal society in Kerala: In search of a holistic world view", IIT Delhi.
2. Capra, f. and Luisi, P.L. (2014), The systems View of Life, In (pp 363), Cambridge Univ. Press.
3. Dharampal "Panchayat Raj and India's Polity" Other India Press, Goa 2007, (first published in 1972 by the Balwantray Mehta Panchayati Raj Foundation).
4. Dirks, Nicholas B. "Castes of Mind: Colonialism and the Making of Modern India" Permanent Black, Delhi 2006 (first published in 2002).
5. Dumont, Louis "Homo Hierarchicus: The Caste System and Its Implications" Oxford University Press 2013 (first published in French in 1966 and in English in 1970).
6. Gould, Harold A. "The Hindu Jajmani System: A Case of Economic Particularism." *Journal of Anthropological Research* 42, no. 3 (1986): 269-78. http://www.jstor.org/stable/3630033.

7. Gyanshruti, S. & Srividyananda, S. "Yajna: A Comprehensive Study" Yoga Publications Trust, Munger, Bihar.

8. Nagaraj Sharma, A. "Avartansheela Arthashastra: Astitva-moolak Manav Kendrit Chintan" Jeevan Vidya Prakashan, Amarkantak 2001.

9. Satya, Harsh "Towards Revitalizing Traditional Jajmani System in India", Ph.D. Thesis (2020).IIIT Hyderabad.

10. Srinivas, M. N. "Indian Anthropologists and the Study of Indian Culture." *Economic and Political Weekly* 31, no. 11 (1996): 656-57. http://www.jstor.org/stable/4403911.

शिक्षण एक बहुत ही महान पेशा है
जो किसी व्यक्ति के चरित्र, क्षमता,
और भविष्य को आकार देता है।
अगर लोग मुझे एक अच्छे शिक्षक के
रूप में याद रखते हैं, तो मेरे लिए ये सबसे
बड़ा सम्मान होगा।

– डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

भारत की ऊर्जा सुरक्षाः वर्तमान परिदृश्य, चुनौतियाँ और संभावनाएं (एक समीक्षा)

अभिजीत आनन्द एवं प्रो. प्रियंका कौशल

ग्रामीण विकास और प्रौद्योगिकी केंद्र,
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली, नई दिल्ली
ई–मेलः priyankak@iitd.ac.in

सारांश

व्यक्ति, समुदाय और राष्ट्र के सामाजिक–आर्थिक विकास में किफायती और सतत ऊर्जा की आपूर्ति का सबसे महत्वपूर्ण स्थान होता है। ऊर्जा विकास की शक्ति है। इसलिए, भारतीय नीति निर्माता अपने नागरिकों को जल्द से जल्द ''सभी को ऊर्जा'' प्रदान करने के लिए प्रतिबध्यता के रूप में 100% ग्रामीण विद्युतीकरण के लक्ष्य रखा था। इस लक्ष्य को वर्ष 2019 में पूरा किया गया था । भारतीय अर्थव्यवस्था अभी परिवर्तन के दौर में है, और इसकी प्राथमिक ऊर्जा मांग करीब 3.2% प्रतिवर्ष की दर से बढ़ रही है । साथ–ही–साथ भारत पेरिस समझौते के तहत 2030 तक कार्बन उत्सर्जन को 2005 के स्तर से 30–35% कम करने के लिए प्रतिबद्ध है। ऐसे में सभी नागरिकों तक सतत और निर्बाध ऊर्जा आपूर्ति सुनिश्चित करना, उर्जा की बढ़ती मांग को पूरा करना और उत्सर्जन को कम करना अपने आप में एक बड़ी चुनौती है। प्रस्तुत समीक्षा शोध पत्र में भारत में ऊर्जा की बुनियादी ढांचे की वर्तमान स्थिति, उर्जा की बढ़ती मांगों को पूरा करने के लिए नीति–निर्धारण, संभावित उपायों और उनके कार्यान्वयन में संभावित चुनौतियों की समीक्षा की गई है।

की–वर्डः ऊर्जा परिदृश्य, सतत उर्जा, उर्जा सुरक्षा, उर्जा विकल्प, प्रारूप मूल्यांकन

1. प्रस्तावना

सतत विकास के लिए ऊर्जा की भूमिका महत्वपूर्ण है। आधुनिक ऊर्जा की उपलब्धता सार्वभौमिक आर्थिक विकास और सतत विकास लक्ष्यों (SDG) को पूरा करने के लिए एक पूर्वाकांक्षित शर्त होती है। मानव सभ्यता के उद्भव और विकास के क्रम में ऊर्जा की दो मूलभूत आवश्यकताएँ रही हैं –रोशनी के लिए और खाना बनाने के लिए। बिजली रोशनी के लिए ऊर्जा का सबसे सुविधापूर्ण स्वरुप है। निर्दिष्ट तथ्यों से पता चलता है कि विश्व स्तर पर लगभग 85 करोड़ लोगों के पास बिजली की सुविधा नहीं है और इनमें से 80% लोग ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं । हालांकि ईंधन के लिए पारंपरिक बायोमास पर निर्भरता वर्ष 2010 में 43% से घटकर वर्ष 2019 में 34% हो गईय फिर भी भारत सहित मध्यम और निम्न आय वाले देशों में आबादी का एक–तिहाई से अधिक हिस्सा ईंधन के लिए अभी भी पारंपरिक बायोमास पर ही निर्भर है। भारत में खाना पकाने और अन्य घरेलू जरूरतों के लिए ईंधन की खपत का लगभग 73% हिस्सा पारंपरिक बायोमास से ही पूरा होता है।

आधुनिक ऊर्जा की अनुपलब्धता न केवल घरेलू आय को सीमित करती है, वरन् महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है और साथ–ही–साथ वनों की कटाई और जलवायु परिवर्तन को भी बढ़ावा देती है । ऐसी परिस्थिति महिलाओं और बच्चों के प्रति असमानता और अनीति को भी बढ़ावा देती है जो कि एक वैश्विक चुनौती है। अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा संस्थान के अनुसार, व्यावहारिक नीति–निर्धारण और उनके त्वरित कार्यान्वयन से 2030 तक ऊर्जा उपलब्धता की समस्या को दूर किया जा सकता है। सन् 2000 में सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों (MDG) की घोषणा के बाद विकासशील देशों की सरकारों ने उर्जा उपलब्धता और उर्जा सुरक्षा संबंधी चुनौती का संज्ञान लिया। भारत सरकार

ने भी आधुनिक किफायती ऊर्जा को सभी के लिए (विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में) सुलभ बनाने के लिए कई पहल की है। इन्हीं प्रयासों के अंतर्गत भारत में 31 मार्च 2019 को दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना (DDUGYP) के तहत 100% ग्रामीण विद्युतीकरण और प्रधानमंत्री सहज बिजली हर घर योजना (सौभाग्य योजना) के तहत लगभग 100% घरेलू विद्युतीकरण की घोषणा की गई थी। राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान (NDC) के विश्लेषण से पता चलता है कि "ऊर्जा प्रबंधन" वर्ष 2021–30 की अवधि के लिए पेरिस समझौते के अंतर्गत भारत की प्रतिबध्यताओं का मूल आधार है। यह महत्वाकांक्षी अक्षय ऊर्जा लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए भारत के दृढ़ संकल्प को भी दर्शाता है।

एक ओर जहाँ भारतीय अर्थव्यवस्था परिवर्तन के दौर में है, और इसकी प्राथमिक ऊर्जा मांग करीब 2.6% प्रतिवर्ष की दर से बढ़ रही है। वहीं दूसरी ओर भारत पेरिस समझौते के तहत 2030 तक कार्बन उत्सर्जन को 2005 के स्तर से 30–35% कम करने के लिए प्रतिबद्ध है। ऐसे में सभी नागरिकों तक सतत और निर्बाध ऊर्जा आपूर्ति सुनिश्चित करना, उर्जा की बढ़ती मांग को पूरा करना और उत्सर्जन को कम करना अपने आप में एक बड़ी चुनौती है। अतीत में विभिन्न शोधकर्ताओं ने ऊर्जा सुरक्षा के लिए भारत में अक्षय ऊर्जा क्षमता की जांच करने का प्रयास किया है। उदाहरण के लिए सेन एट.एल. (2016) तथा सिंह (2018) ने अपने शोध पत्र में भारत में मौजूद सतत ऊर्जा के संसाधनों और उसके उपयोग के संभावनाओं के बारे में विस्तृत विवेचना किया है। साथ ही त्रिपाठी एट.एल. (2016) और लाहा एट.एल. (2020) ने अपने शोध पत्र में भारत की संभावित ऊर्जा जरूरतों और ससत ऊर्जा के संसाधनों के जरिए ऊर्जा आपूर्ति की संभावनाओं को तलाशा है। हालांकि भविश्य के मांग के लिए क्षमता निर्माण और अक्षय ऊर्जा संसाधनों के उपयोग करने के लिए नीति निर्माण के बीच ताल–मेल स्थापित करने हेतु विशयवार शोध का आभाव रहा है। प्रस्तुत समीक्षा शोध पत्र में भारत में ऊर्जा की बुनियादी ढांचे की वर्तमान स्थिति, उर्जा की बढ़ती मांगों को पूरा करने के लिए नीति–निर्धारण, संभावित उपायों और उनके कार्यान्वयन में संभावित चुनौतियों की समीक्षा की गई है।

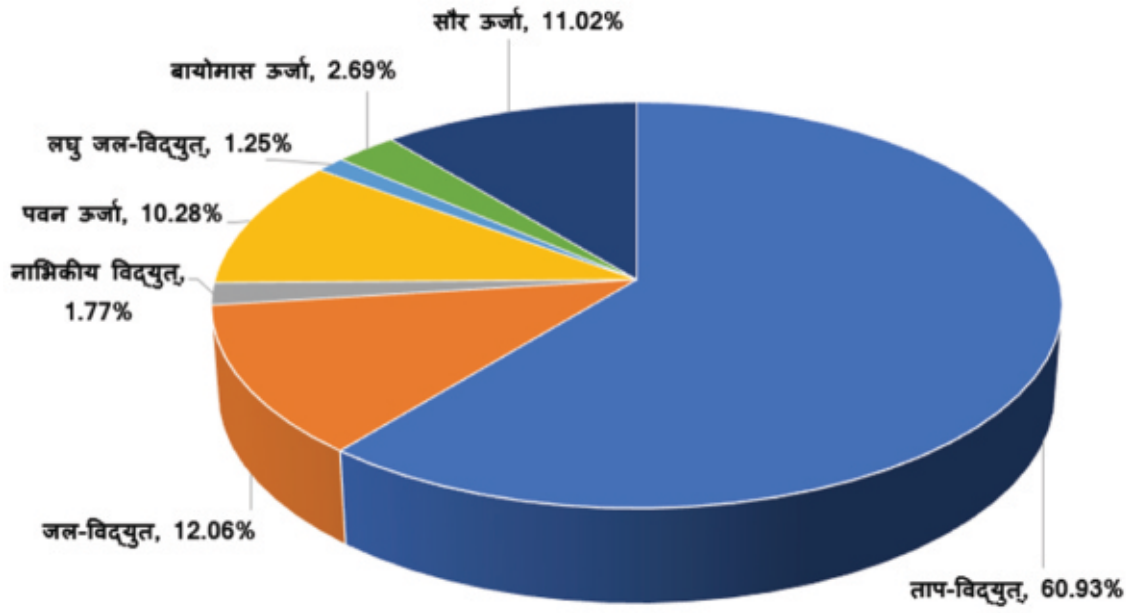
2. वर्तमान उर्जा परिदृश्य

यद्यपि भारत में लगभग 100% ग्रामीण विद्युतीकरण के लक्ष्य को हासिल कर लिया गया है और ग्रामीण विद्युतीकरण अभियान के बाद अब 96.7% भारतीय घरों में ग्रिड से जुड़ी बिजली की व्यवस्था है। तथापि ग्रामीण व्यवस्था (विशेष रूप से बिहार, झारखंड, उत्तर प्रदेश और उत्तर–पूर्वी राज्यों) में पर्याप्त गुणात्मक और मात्रात्मक बिजली की निर्बाध और सतत आपूर्ति बनाए रखना एक कठिन कार्य है। इसलिए, आगे की चर्चा से पहले, भारत के वर्तमान बिजली क्षेत्र, प्राथमिक ऊर्जा की मांग और आपूर्ति के परिदृश्य की समीक्षा और विश्लेषण करना आवश्यक है।

2.1. वर्तमान ऊर्जा स्रोत और चुनौतियाँ

भारत में पारंपरिक और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों में कोयला, जलविद्युत, नाभिकीय ऊर्जा, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा और बायोमास प्रमुख ऊर्जा स्रोत हैं। वर्ष 2020 के आंकड़ों के अनुसार भारत में बिजली उत्पादन में लगभग 54.3% हिस्सा कोयला और लगभग 6.5% हिस्सा प्राकृतिक गैस से आता है। जलविद्युत, नाभिकीय ऊर्जा और अन्य अक्षय ऊर्जा स्रोतों से क्रमशः 129%, 1.8% और 25.2% बिजली उत्पादन होता है। त में ताप विद्युत् घरों और स्टील और सीमेंट संयंत्रों में कोयले की सबसे ज्यादा खपत होती है । राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय के आंकड़ों के अनुसार ताप विद्युत् घरों और स्टील और सीमेंट संयंत्रों में वर्ष 2020 में क्रमशः 64.86% और 8.22% कोयले की खपत हुई थी।

हालांकि, ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए भारत में कोयले का विशाल भंडार है और वैश्विक स्तर पर अमेरिका, रूस, चीन और ऑस्ट्रेलिया के बाद पांचवें स्थान पर है। विशाल कोयला भंडार होने के बावजूद भारत बिजली संयंत्रों को चालू रखने के लिए ऑस्ट्रेलिया और अन्य देशों से कोयले का आयात करता रहा है । कोयला मंत्रालय की आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2019–20 में भारत में घरेलू जरूरतों को पूरा करने के लिए करीब 248 मिलियन टन कोयला का आयात किया गया था जो कि कुल खपत का 24.75% हिस्सा था । जरूरतों के हिसाब से घरेलू उत्पादन नहीं होने



चित्र 1. वर्ष 2020 में भारत में विभिन्न स्रोतों का बिजली उत्पादन में हिस्सेदारी (स्रोतः ऊर्जा मंत्रालय, भारत सरकार, 2021)

की वजह से भारत को कोयला आयात करना पड़ता है। घरेलू कोयला उत्पादन में दो महत्वपूर्ण चुनौतियां हैं: पर्यावरणीय अनुमति और भूमि अधिग्रहण। भारत में अधिकांश कोयला खदानें खुली खदानें हैं। कोयला मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 2025 तक करीब 170000 परिवारों के लगभग 850000 लोग कोयला परियोजनाओं से प्रभावित होंगे। अतएव, कोयला खदानों के शीर्ष पर रहने वाले लोगों से भूमि अधिग्रहण और उनका पुनर्वास एक बड़ी चुनौती होगी। भारत के कोयला भंडार प्रमुख रूप से वन क्षेत्रों में स्थित हैं। इन वन क्षेत्रों में कोयला उत्खनन से अत्यंत समृद्ध वन जैव विविधता को अपूर्णीय क्षति हो सकती है और उनमें से कुछ को मानवीय प्रयासों द्वारा पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता है। इसलिए, देश के सतत विकास के लिए कोयला मंत्रालय, ऊर्जा मंत्रालय और पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय जैसे विभिन्न मंत्रालयों के बीच बेहतर समन्वय की आवश्यकता है।

दूसरी ओर भारत में पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस के सीमित संसाधन हैं और कुल खपत के क्रमशः 77% और 23% हिस्से की आपूर्ति के लिए आयात पर निर्भर है । नीति आयोग के अनुमान के मुताबिक वर्ष 2047 तक पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस के आयात पर निर्भरता क्रमशः 88% और 44% तक बढ़ जाएगी। कीमतों में उतार–चढ़ाव और अंतर्राष्ट्रीय राजनैतिक बदलाव भी भारत में पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस की आपूर्ति में व्यवधान रहे हैं। पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस की खरीद और पाइपलाइन के जरिये आयात के लिए भारत का ईरान, तुर्कमेनिस्तान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान और म्यांमार जैसे देशों के साथ सहयोग की पहल क्षेत्रीय अस्थिरता और भू–राजनैतिक परिस्थितियों की वजह से साकार नहीं हो सका है।

वर्ष 2020–21 के दौरान भारत में 7 नाभिकीय ऊर्जा संयंत्रों में प्रचलित 21 नाभिकीय रिएक्टर की 6780 मेगावाट की स्थापित क्षमता थी। भारत सरकार ने 2050 तक विद्युत् उत्पादन में नाभिकीय ऊर्जा की 25% हिस्सेदारी के लक्ष्य निर्धारित किया है और इसके लिए विदेशी सहयोग से कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश और महाराष्ट्र में चार परमाणु ऊर्जा संयंत्र का निर्माण भी किया जा रहा है। निस्संदेह ईंधन की कम लागत और ग्रीनहाउस गैसों के कम उत्सर्जन की वजह से भारत की ऊर्जा जरूरतों के लिए

नाभिकीय ऊर्जा एक सुरक्षित स्रोत है। परन्तु नाभिकीय बिजली संयंत्रों में अधिक पूंजी निवेश और रेडियोधर्मी कचरे का सुरक्षित निपटारा हमेशा एक चिंता का विषय रहा है। यूरेनियम उत्खनन में कोयला उत्खनन के समान ही सामाजिक और आर्थिक चुनौतियाँ होती हैं। साथ ही, भारत में घरेलू यूरेनियम की आपूर्ति काफी कम है। अतएव भारत परमाणु ईंधन के लिए मुख्य रूप से आयात पर ही निर्भर है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिबंधों के कारण ईंधन की अनुपलब्धता की वजह से भारतीय नाभिकीय बिजली संयंत्र पूरी तरह से काम नहीं कर रहे थे। हलांकि, परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह (NSG) से परमाणु ईंधन का व्यापार करने की अनुमति के बाद भारत रूस, फ्रांस, कनाडा और ऑस्ट्रेलिया से यूरेनियम आयात करने में सफल रहा है। वर्तमान समय में भारत करीब 45% परमाणु ईंधन जरूरतों के लिए आयात पर निर्भर है । परन्तु, ऊर्जा सुरक्षा की दृष्टि से परमाणु ईंधन के लिए आयात पर दीर्घकालिक निर्भरता अवांछनीय है ।

2.2 उर्जा स्थिति और चुनौतियाँ

भारत में दुनिया की लगभग 17% आबादी अपना जीवन यापन करती है । साथ–ही–साथ, भारत चीन और संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद ऊर्जा का तीसरा सबसे बड़ा उपभोक्ता भी है । ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए भारत सरकार ने बुनियादी ढ़ांचे में सुधार पर काफी जोर दिया है । वर्ष 2012 में, भारत में स्थापित उर्जा उत्पादन क्षमता 199.989 गीगा वाट थी, जो 30 जून 2019 तक बढ़कर लगभग 38.4.996 गीगा वाट हो गयी । यह वृद्धि उल्लेखनीय है लेकिन उर्जा की मांग और आपूर्ति और भविष्य की जरूरतों को देखते हुए पर्याप्त नहीं है । वर्ष 2098–95 के दौरान देश में बिजली की मांग की आपेक्षा आपूर्ति में 3.6% की कमी दर्ज की गयी थी । हलांकि वर्ष 2017–18 से 2020–29 के दौरान यह अंतर घटकर 9% से भी कम रह गयी थी । अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा संस्थान की गणना के अनुसार, भारत और चीन में प्राथमिक ऊर्जा मांग क्रमशः 3.2% और 2.6% प्रति वर्ष बढ़ेगी । फेडरेशन ऑफ इंडियन चौंबर्स ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्री (FICCI) की गणना के अनुसार, भारत में प्राथमिक ऊर्जा आपूर्ति 9% सीएजीआर वृद्धि दर रहने की संभावना है। इसका तात्पर्य यह है कि भारत की ऊर्जा की जरूरत उसकी क्षमता वृद्धि की तुलना में तेज गति से बढ़ रही है। तथैव, ऊर्जा की बढ़ती जरूरतों को पूरा करने के लिए भारत को रणनीतिक रूप से अपनी क्षमता निर्माण में तेजी लानी होगी।

बड़ी आबादी और ऊर्जा की मांग के अनुपात में भारत के पास पारंपरिक ऊर्जा संसाधनों के सीमित भंडार हैं । भारत के पास विश्व के पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस और कोयले का क्रमशः केवल 0.4%, 0.4% और 6% भंडार ही है । अतएव, तेजी से बढ़ती उर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए भारत काफी हद तक आयातित ईंधन पर निर्भर है । वर्ष 2012 में भारत में प्राथमिक ऊर्जा की जरूरतों को पूरा करने के लिए 32% ईंधन का आयात किया गया था । नीति आयोग की गणना के अनुसार, वर्ष 2047 तक अपनी ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए भारत को करीब 57% ईंधन आयात करना पड़ेगा । इस संदर्भ में भारतीय ऊर्जा सुरक्षा रणनीति के सामने निम्नलिखित चुनौतियां हैं – (अ) प्रशस्त मांग को पूरा करना, (आ) कार्बन उत्सर्जन को नियंत्रण में रखना, (ई) आयातित ईंधन पर निर्भरता कम करना और (ऊ) सस्ती बिजली उत्पन्न करना ।

3. अक्षय ऊर्जा स्रोतों से संभावनाएं

भारत अक्षय ऊर्जा स्रोतों से संपन्न है और वर्तमान में दुनिया का सबसे व्यापक अक्षय ऊर्जा से बिजली उत्पादन क्षमता में विस्तार का कार्यक्रम चला रहा है । जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना (NAPCC) की सिफारिश पर भारत 2022 तक 175 गीगा वट अक्षय ऊर्जा आधारित बिजली उत्पादन के लिए बुनियादी ढ़ांचे का निर्माण करने के लिए एक बहुत ही महत्वाकांक्षी मिशन को क्रियान्वित किया रहा है । उपरोक्त लक्ष्य में 100 गीगा वाट सौर ऊर्जा से, 60 गीगा वाट पवन ऊर्जा से, 10 गीगा वाट बायोमास से और 5 गीगा वाट लघु जलविद्युत से बिजली उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित किया गया है । तालिका 1 में विभिन्न नवीकरणीय संसाधनों की क्षमता, स्थिति और संशोधित लक्ष्यों को सूचीबद्ध किया गया है ।

तालिका 1: भारत का राष्ट्रीय अक्षय ऊर्जा मिशन (स्रोतः ऊर्जा मंत्रालय, भारत सरकार, 2021)

स्रोत	देश में अक्षय ऊर्जा संभावनाएं (गीगा वाट)	वर्तमान स्थापित क्षमता (गीगा वाट)	लक्ष्य क्षमता (2022 तक) (गीगा वाट)
सौर	748	42.33	100 ,
पवन (80 मीटर की ऊंचाई तक)	102	39.49	60
बायोमास	28	10.34	10
लघु जल विद्युत	27	4.79	5

अक्षय ऊर्जा से संबंधित नीति–निर्धारण और प्रोत्साहन के लिए एक नया मंत्रालय (नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय) का गठन किया गया था । साथ–ही–साथ देश में अक्षय ऊर्जा के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए कई संस्थागत और वित्तीय कार्य–योजनाएं बनाई गयी है । इस अनुभाग में लेखकों ने भारत में अक्षय ऊर्जा की उपलब्ध क्षमताओं की चर्चा की है ।

3.1 जलविद्युत

जलविद्युत पर्यावरण के अनुकूल नवीकरणीय ऊर्जा का एक ऐसा स्रोत है जिसके बहुआयामी लाभ होते हैं। जलविद्युत उत्पादन अतिरिक्त विदेशी मुद्रा व्यय और मुद्रास्फीति के प्रभाव से मुक्त होता है। इसमें सिंचाई, बाढ़ नियंत्रण और पर्यटन जैसे अतिरिक्त लाभ भी होते हैं।

भारत विश्व स्तर पर जलविद्युत क्षमता के मामले में पांचवें स्थान पर है। भारत में जलविद्युत की अनुमानित क्षमता 148 गीगा वाट है । वर्तमान समय में भारत में स्थापित जलविद्युत की क्षमता लगभग 46.32 गीगा वाट है, जबकि अतिरिक्त 13 गीगा वाट निर्माणाधीन है। तथैव, अब तक देश में कुल क्षमता का केवल 35% हिस्सा ही दोहन किया जा सका है। भारत की जलविद्युत प्रणाली पांच प्रमुख प्रांतों में विभाजित है दृ उत्तरी, पश्चिमी, दक्षिणी, पूर्वी और पूर्वोत्तर क्षेत्र। क्षेत्रीय दृष्टिकोण से, पूर्वोत्तर क्षेत्र में कुल क्षमता का 93% से अधिक हिस्सा अभी दोहन किया जाना बाकी है ।

तकनीकी प्रगति और नीतिगत रुझानों के बावजूद भारत में जलविद्युत परियोजनाओं को पूरा करने में विलम्ब होता रहा है । परिणामस्वरूप, 1960 के दशक तक देश के ऊर्जा मिश्रण में जलविद्युत का हिस्सा 46% था और आधी सदी बाद जलविद्युत का हिस्सा घटकर लगभग 14% रह गया है। पर्यावरणीय नुकसान की आशंका, भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और उससे जुड़े मुद्दे, मंजूरी और अनुमोदन की लंबी प्रक्रियाएं, डेवलपर्स की क्षमता और सार्वजनिक भय जैसे विभिन्न कारक जलविद्युत परियोजनाओं को समयानुसार पूरा होने में बाधक रहे हैं । जलविद्युत विकास से जुड़े मुद्दों को काफी हद तक कई राज्य सरकारों के दायरे में आने से उनके निपटारे की प्रक्रिया भी काफी लंबी और जटिल रही है ।

हालांकि जलविद्युत उत्पादन से होने वाली पर्यावरणीय नुकसान की आशंका वाली अवधारणा अब बदल रही है । कालांतर, वैश्विक स्तर पर जलविद्युत को कम कार्बन उत्सर्जन वाले नवीकरणीय ऊर्जा के स्रोत के रूप में स्वीकार्यता प्राप्त हुई है। उदाहरण के लिए, श्रीलंका ने अपनी जल क्षमता का लगभग 96% हिस्से उपयोग विद्युत् उत्पादन में किया है । नॉर्वे में कुल उत्पादित बिजली का 99% जलविद्युत संयंत्रों से आता है। अतएव भारत में जलविद्युत की असीम संभावनाओं को देखते हुए नीति–निर्धारण और परियोजनाओं के क्रियान्वयन में तरजीह देनी चाहिए ।

3.2 सौर ऊर्जा

भारत को लगभग 300 दिनों की धूप प्राप्त होती है और 1600–2200 kWh/m^2 का वार्षिक सौर विकिरण प्राप्त करता है। उपरोक्त सौर विकिरण से भारत में लगभग 748 गीगा वाट सौर आधारित विद्युत् उत्पादन हो सकता है। यदि भारत इसके एक अंश का भी सफलतापूर्वक दोहन कर लेता है तो उसकी सभी ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाएगी । इसे वास्तविकता बनाने के लिए, भारत सरकार ने जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना (NAPCC) की सिफारिश पर वर्ष 2010 में 22 गीगा वाट सौर विद्युत् उत्पादन के लिए राष्ट्रीय सौर मिशन शुरू किया था । बाद में वर्ष 2022 तक सौर आधारित बिजली उत्पादन के लक्ष्य को संशोधित कर 100 गीगा वाट कर दिया गया था । सौर ऊर्जा नीति के क्रियान्वयन और सौर ऊर्जा को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार ने कई नीतिगत फैसले लिए जिनमें उत्पाद शुल्क में छूट, 10 सालों तक कर में छूट, रियायती दरों पर ऋण, बिजली खरीद में सब्सिडी, और 100% विदेशी निवेश महत्वपूर्ण हैं । राज्य/प्रांतीय सरकारें भी अपने–अपने राज्यों में सौर ऊर्जा को बढ़ावा देने के लिए पहल कर रही हैं । राष्ट्रीय सौर मिशन की घोषणा के बाद से सौर ऊर्जा से विद्युत् उत्पादन में तेजी से वृद्धि हुई है और वर्ष 2020 तक उपरोक्त लक्ष्य का 42.33% पूरा किया जा चुका है । वर्तमान में सौर ऊर्जा देश में कुल बिजली उत्पादन क्षमता का लगभग 11% है । सरकार के सौर ऊर्जा के लिए पहल और नीतिगत फैसलों की वजह से आज भारत सौर ऊर्जा में आत्मनिर्भरता हासिल करने के बेहद करीब है ।

3.3 पवन ऊर्जा

भारत की 7600 किलोमीटर लम्बी तटरेखा पवन ऊर्जा व्यापक संभावनाएं प्रदान करती है। 80 मीटर हब ऊंचाई पर भारत में तटीय और अपतटीय क्षेत्रों में पवन ऊर्जा की कुल अनुमानित क्षमता करीब 102– 2006 गीगा वाट है । ऊर्जा मंत्रालय के वर्ष 2029 के आंकड़ों के अनुसार भारत में पवन ऊर्जा से बिजली उत्पादन की क्षमता करीब 39.49 गीगा वाट है जो की देश में कुल बिजली उत्पादन क्षमता का लगभग 10.28% है । भारत सालाना 9.5 गीगा वाट से अधिक पवन ऊर्जा आधारित बिजली उत्पादन के लिए टरबाइन का निर्माण कर सकता है । अतएव, निजी निवेश और सरकार की उचित नीतियों से भारत में पवन ऊर्जा कार्यक्रम को सफलतापूर्वक पूर्ण किया जा सकता है ।

3.4 बायोमास ऊर्जा

भारत में प्राथमिक ऊर्जा जरूरतों का लगभग एक तिहाई हिस्सा बायोमास से पूरा होता है । नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार भारत में सालाना करीब 500 मिलियन टन बायोमास का उत्पादन होता है, जिसमें से 120–150 मिलियन टन का विद्युत् उत्पादन के लिए उपयोग किया जा सकता है । वर्ष 2020 तक बायोमास, कृषि और वानिकी अवशेषों से विद्युत् उत्पादन की क्षमता 10. 34 गीगा वाट थी । यहाँ ध्यान देने योग्य तथ्य यह है की, देश में बायोमास से उत्पादित कुल विद्युत् का लगभग 65% हिस्सा चीनी मिलों में सह–उत्पादन से आता है। चीनी मिलों की वर्तमान क्षमता के आधार पर 5 गीगा वाट अतिरिक्त विद्युत् का उत्पादन किया जा सकता है। सरकार बायोमास आधारित विद्युत् उत्पादन के लिए अनुकूल नीतियों और वित्तीय प्रोत्साहन जैसे प्रयास कर रही है। हलांकि, असंगठित बायोमास बाजार की वजह से आशातीत सफलता नहीं मिली है। असंगठित बायोमास बाजार कच्चे माल (बायोमास) आपूर्ति श्रृंखला स्थापित करना चुनौतीपूर्ण है। अतएव, भारत को ऊर्जा स्रोत के रूप में बायोमास के प्रति अपने दृष्टिकोण को निम्नलिखित बिंदुओं के साथ फिर से उन्मुख करना चाहिए–(अ) बायोमास को पारंपरिक ऊर्जा स्रोत के बजाय एक प्रतिस्पर्धी आधुनिक ऊर्जा संसाधन के रूप में मानना शुरू करें और (आ) मांग–आपूर्ति आधारित नीति–निर्धारित करें ।

3.5 लघु जलविद्युत

भारत में 25 मेगावाट क्षमता तक की जलविद्युत परियोजनाओं को लघु जलविद्युत परियोजनाओं के रूप में वर्गीकृत किया गया है। नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय ने लगभग 20 गीगा वाट की संचयी क्षमता वाली

लगभग 6500 जगहों को लघु जलविद्युत परियोजनाओं के लिए चिह्नित किया है, जिनमें से अधिकांश दूर–दराज के पहाड़ी क्षेत्रों स्थित हैं । छोटी जलविद्युत परियोजनाओं के लिए वनों की कटाई और पुनर्वास की चुनौती का सामना नहीं करना पड़ता है । अतएव, नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय विभिन्न योजनाओं के माध्यम से यांत्रिक ऊर्जा और विद्युत् उत्पादन के लिए लघु जलविद्युत संयंत्रों के नए और कुशल डिजाइनों को बढ़ावा दे रहा है । मंत्रालय दूर–दराज के गांवों के विद्युतीकरण के लिए 100 किलोवाट की क्षमता तक की सूक्ष्म जलविद्युत परियोजनाओं की स्थापना के लिए तकनीकी और वित्तीय मदद भी दे रहा है । नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय के माध्यम से भारत सरकार दुनिया के सबसे दुर्गम पहाड़ी इलाकों में से एक, लद्दाख में लघु और सूक्ष्म जलविद्युत परियोजनाओं की एक श्रृंखला को क्रियान्वित कर रही है । साथ ही, नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय ने लघु जलविद्युत परियोजनाओं को वित्तीय रूप से आकर्षक बनाने के लिए संस्थागत और वित्तीय साधनों को जुटाने के लिए कई कदम उठाये हैं । इनमें अनुसंधान एवं विकास के लिए नए केंद्र स्थापित करना, क्षमता निर्माण, प्रशिक्षण, अनुदान के लिए योजनाएं, सहायता और पूंजीगत सब्सिडी मुख्य हैं ।

3.6 अन्य ऊर्जा स्रोत

देश में भू–तापीय ऊर्जा की क्षमता लगभग 13.3 गीगा वाट है। भू–तापीय ऊर्जा के सार्थक उपयोग के लिए भारत सरकार ने भू–तापीय संसाधनों को राष्ट्रीय संसाधन घोषित किया है और इसकी खोज करने की एक कार्ययोजना तैयार की है । हाइड्रोजन उत्पादन और इसे ईंधन के रूप में इस्तेमाल करने के लिए के लिए भी वर्ष 2007 में राष्ट्रीय हाइड्रोजन रोडमैप तैयार की गयी थी । इसके तहत वर्ष 2020 तक 1 गीगा वाट विद्युत् उत्पादन क्षमता वाले संयंत्र निर्माण का लक्ष्य रखा गया था । विभिन्न राज्य और निजी स्वामित्व वाली कंपनियां ईंधन के रूप में हाइड्रोजन के अनुसंधान, विकास और प्रदर्शन में शामिल हैं। साथ–ही–साथ हाइड्रोजन को संपीडित प्राकृतिक गैस (सीएनजी) के साथ सम्मिश्रित कर परिवहन क्षेत्र में हाइड्रोजन–समृद्ध ईंधन का उपयोग करने लिए प्रौद्योगिकी विकास की रूपरेखा तैयार की गयी है ।

भारत में मुहानों और खाड़ी में उत्पन्न ज्वार–भाटे से बिजली उत्पादन के लिए भी रूपरेखा तैयार की गयी है । ज्वारीय ऊर्जा को विद्युत् ऊर्जा में परिवर्तित करने के लिए उच्च ज्वार की ऊंचाई कम ज्वार से कम से कम पांच मीटर अधिक होनी चाहिए । इस उच्च ज्वार के साथ पृथ्वी पर केवल 20 स्थान हैं और भारत उनमें से एक है । खंभात की खाड़ी और कच्छ की खाड़ी, अधिकतम ज्वार की सीमा 11 मीटर और 8 मीटर है, जिसमें औसत ज्वार की सीमा क्रमशः 6.77 मीटर और 5.23 मीटर है। सुंदरबन में गंगा डेल्टा की औसत ज्वारीय सीमा 2.97 मीटर है। तथैव भारत में ज्वार–भाटे से बिजली उत्पादन की अनुमानित क्षमता करीब 7 गीगा वाट हैय उनमें से 2.4 गीगा वाट क्षमता खंभात की खाड़ी और कच्छ की खाड़ी में और 100 मेगावाट क्षमता सुंदरबन में है। हलांकि, अभी भारत में ज्वारीय ऊर्जा नीति का अभाव है। बहरहाल, प्रदर्शन और अनुभव हासिल करने के लिए, गुजरात पावर कॉरपोरेशन लिमिटेड ने अंतरराष्ट्रीय सहयोग से गुजरात के तट पर 50 मेगावाट की ज्वारीय बिजली परियोजना शुरू करने की कार्ययोजना बनाई है ।

4. परिचर्चा

भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है और सबसे तेजी से अग्रशील अर्थव्यवस्थाओं में से एक है । साथ ही भारत सीमित पारंपरिक ऊर्जा संसाधनों वाला दूसरा सबसे अधिक आबादी वाला देश है । 100% ग्रामीण विद्युतीकरण के लक्ष्य को हासिल करने और ग्रामीण विद्युतीकरण अभियान के बाद अब भले ही 96.7% भारतीय घरों में ग्रिड से जुड़ी बिजली की व्यवस्था है । परन्तु, भारत में एक–तिहाई आबादी आज भी घरेलू ऊर्जा जरूरतों के लिए पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों पर ही निर्भर है । अतएव, आर्थिक विकास की गति को बनाए रखने के लिए भारत में ऊर्जा जरूरतों के लिए सतत और निर्बाध किफायती आधुनिक ऊर्जा की आपूर्ति आवश्यक है । साथ–ही–साथ भारत पेरिस समझौते के तहत कार्बन उत्सर्जन को कम करने के लिए प्रतिबद्ध भी है ।

भारत में ईंधन संबंधी नीति निर्धारण के प्रथम समिति का गठन वर्ष 1970 में किया गया था । समिति ने अगले 15 वर्षों के लिए ऊर्जा क्षेत्र में आपूर्ति और मांग विकल्पों का विश्लेषण करने के बाद ऊर्जा नियोजन के तकनीकी और संगठनात्मक पहलुओं पर सुधार और ऊर्जा उपयोग की दक्षता बढ़ाने की सिफारिश की थी । इसी तरह, वर्ष 1976 में भारत सरकार के तेल और पेट्रोलियम मंत्रालय ने तेल संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए पेट्रोलियम संरक्षण कार्य समूह का गठन किया था। बीतते समय के साथ, सामाजिक और राजनीतिक बदलाव में चुनी हुई सरकारों के प्राथमिकताओं में भी बदलाव आया। हलांकि सामाजिक–आर्थिक–वैश्विक स्तर पर भारत अब एक ऐसे मोड़ पर खड़ा है जहाँ अपने नागरिकों, समाज और समग्र विकास के लिए स्वच्छ और किफायती आधुनिक ऊर्जा की निर्बाध आपूर्ति सुनिश्चित करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है । फलतः पिछले दो दशकों से सभी क्रमिक सरकारों के लिए ऊर्जा संरक्षण और ऊर्जा नियोजन सबसे बड़ी प्राथमिकता रही है ।

4.1 अक्षय ऊर्जा नियमन

"विद्युत अधिनियम–2003" अक्षय ऊर्जा क्षेत्र में बड़े पैमाने पर विकास के लिए एक प्रेरणास्त्रोत के समान है । इस अधिनियम से राज्य विद्युत नियामक आयोगों को अपने अधिकार क्षेत्र में ऊर्जा के नवीकरणीय और गैर–पारंपरिक स्रोतों को बढ़ावा देने के लिए अनिवार्य कर दिया गया था । अधिनियम में राष्ट्रीय विद्युत नीति, राष्ट्रीय प्रशुल्क नीति के निर्माण और नवीकरणीय ऊर्जा सहित सभी उपलब्ध ऊर्जा संसाधनों का इष्टतम उपयोग सुनिश्चित करने के लिए विद्युत् प्रणालियों के विकास की योजना का भी उल्लेख किया गया था। भारत में अक्षय ऊर्जा क्षेत्र में कई संसथान शामिल हैं । इन संस्थानों में नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय सबसे प्रमुख है और यह देश में नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्रीय विकास के लिए जिम्मेदार है। मंत्रालय अक्षय ऊर्जा के विकास के उद्देश्य से बाकि सभी संस्थानों के साथ समन्वयन का कार्य भी करता है । एक ओर जहाँ भारत सरकार ने अक्षय ऊर्जा संसाधनों की स्वीकार्यता बढ़ाने के लिए निजी क्षेत्र के निवेश को प्रोत्साहित करने में सक्रिय भूमिका निभा रही है । वहीँ दूसरी ओर अक्षय संसाधनों के उपयोग को अनिवार्य कर दिया है । इसके अलावा अक्षय ऊर्जा के क्षेत्र में क्रमगत तकनीकी विकास होने की वजह से नवीकरणीय ऊर्जा जीवाश्म ईंधन आधारित उत्पादन की तुलना में तेजी से लागत–प्रतिस्पर्धी होती जा रही है। फलस्वरूप, वर्तमान समय में भारत में लगभग 143.28 गीगा वाट अक्षय ऊर्जा उत्पादन क्षमता है जो कि कुल विद्युत् उत्पादन क्षमता का लगभग 37.30% है ।

4.2 अक्षय ऊर्जा में निवेश

पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों से अक्षय ऊर्जा स्रोतों के तरफ स्थानांतरण एक सामाजिक और आर्थिक चुनौती है। चुनौती तब और अधिक बड़ी हो जाती जब अक्षय ऊर्जा स्रोतों के तरफ स्थानांतरण के लक्ष्यों को अगले कुछ दशकों में प्राप्त किया जाना है । तथैव, इन लक्ष्यों को पूरा करने के लिए तेजी से काम करने की आवश्यकता है । इन अमूलचूल बदलावों को समयानुसार पूरा करने के लिए बड़े पैमाने पर आयात और वित्तीय उपलब्धता की जरुरत पड़ेगी । साथ ही आर्थिक विकास पर जोर और निवेशकों के अल्पकालिक लाभ की वजह से सरकारी और गैर–सरकारी संस्थानों के जीवाश्म ईंधन पर ध्यान केंद्रित करने की प्रबल संभावना है । ऐसी परिस्थिति में सरकार की केंद्रीय भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है ।

भारत सरकार ने ऐसी किसी भी परिस्थिति से निपटने के लिए स्वच्छ ऊर्जा कोष, अक्षय ऊर्जा प्रमाणपत्र और नवीकरणीय ऊर्जा खरीद दायित्व जैसी कई योजनाओं की शुरुआत की है । हालांकि, निवेशकों और हितधारकों के हितों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए एक स्पष्ट नीति–निर्धारण की आवश्यकता है, ताकि निवेश के प्रकार और लागत और लाभ के बंटवारा को सुनियोजित तरीके से निर्धारित किया जा सके। अतएव, अक्षय ऊर्जा में निवेश के लिए एक सुनियोजित निवेश नीति की आवश्यकता है जो की नवीकरणीय ऊर्जा के प्रसार को बढ़ावा दे और अक्षय ऊर्जा लक्ष्यों को प्राप्त करने में मददगार हो ।

4.3 वितरण तंत्र और नीति कार्यान्वयन

नवीकरणीय ऊर्जा का उत्पादन और निर्बाध आपूर्ति के लिए वितरण तंत्र के पुनर्गठन की अभूतपूर्व आवश्यकता है । ऊर्जा मंत्रालय, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्रालय, कोयला मंत्रालय, नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय और परमाणु ऊर्जा विभाग संयुक्त रूप से भारत में ऊर्जा जरूरतों की निर्बाध और सतत आपूर्ति की निगरानी करते हैं। उपरोक्त पांचों स्वतंत्र मंत्रालयों के बीच परस्पर समन्वय के अभाव में ऊर्जा के महत्वपूर्ण मुद्दों पर समेकित दृष्टिकोण अपनाना चुनौतीपूर्ण है। इन संस्थानों की प्राथमिकताएं आपूर्ति, बिक्री, प्रौद्योगिकी प्रसार, क्षमता वृद्धि आदि पर रही हैं। ऊर्जा की उपलब्धता और दक्षता किसी भी मंत्रालय के लिए कभी भी प्राथमिकता नहीं थी। हालांकि, वर्ष 2008 में जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना (NAPCC) की सिफारिश के बाद राष्ट्रीय मिशनों और भूमिकाओं को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया और विभिन्न मंत्रालयों के कार्यान्वयन परस्पर समन्वय को भी लागू किया गया ।

वर्तमान समय में नीति निर्माताओं को अब ऐसे तंत्र विकसित करने चाहिए जहां एक क्षेत्र में काम कर रहे सारे संस्थानों के दृष्टिकोणों के बीच तालमेल हो और नीति–निर्धारण में सभी हितधारकों को शामिल करे । संस्थानों को विश्व स्तर पर अपनाये गये सर्वोत्तम मापदंडों की पहचान कर ऊर्जा लक्ष्यों को पूरा करने के लिए स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप उन्हें संशोधित कर लागू करना चाहिए ।

प्रधानमंत्री के नेतृत्व में गठित "नीति आयोग" भारत सरकार की एक ऐसी ही नीतिगत प्रबुद्ध मंडल है जो कि देश में महत्वपूर्ण मुद्दों की पहचान कर उनके समाधान के लिए सिफारिशें प्रस्तुत करता है । हालांकि, दीर्घकालिक विकास पर आधारित वास्तविक नीति कार्यान्वयन के लिए कोई संस्थान नहीं है । साथ–ही–साथ भारतीय ऊर्जा संस्थानों में आपसी समन्वय की कमी है । उदाहरण के लिए, राष्ट्रीय सौर मिशन के अंतर्गत संशोधित क्षमता को दो हिस्सों में विभाजित किया गया और 40 गीगा वाट रूफटॉप सौर बिजली उत्पादन और 60 गीगा वाट बड़े और मध्यम स्तर की ग्रिड से जुड़ी परियोजनाओं के लिए निर्धारित किया गया । हालांकि, वर्ष 2022 तक इस लक्ष्य को हासिल करने के बारे में किसी स्पष्ट रणनीति की विवेचना नहीं की गयी । जब से सौर मिशन के लिए नया लक्ष्य निर्धारित किया गया है, अन्य ऊर्जा पहलों जैसे कि पवन ऊर्जा, बायोमास उत्पादन और ईंधन सम्मिश्रण, बायोमास से चलने वाले चूल्हे के बेहतर डिजाइन, इत्यादि पर कोई विवेचना नहीं की गयी है । ऊर्जा विभाग से सम्बंधित संस्थान सौर ऊर्जा पर इस कदर केंद्रित हैं कि अन्य नवीकरणीय ऊर्जा विकल्प प्राथमिकता सूची से दूर हो गये हैं । वर्तमान परिस्थितियों में भारत एक बार में एक दृष्टिकोण रखने का जोखिम नहीं उठा सकता है । अतएव, ऊर्जा संकट को हल करने के लिए, भारत को अन्य ऊर्जा मुद्दों को समानांतर में संबोधित करने की आवश्यकता है ।

4.4 ऊर्जा दक्षता, संरक्षण और नियोजन

ऊर्जा दक्षता को अकसर कोयला, पेट्रोलियम, परमाणु और नवीकरणीयस्रोतों के बाद पांचवें ईंधन के रूप में परिभाषित किया जाता है । इसका भी अन्य ईंधनों के समान मापदंडों, यानी उपलब्धता, सामर्थ्य, सुरक्षा और पर्यावरणीय प्रभाव पर विश्लेषण किया जाता है । भारत में ऊर्जा दक्षता, संरक्षण और नियोजन के लिए ऊर्जा मंत्रालय के अंतर्गत ऊर्जा दक्षता ब्यूरो (BEE) की स्थापना की गयी थी। वर्ष 2010 में भारत सरकार ने ऊर्जा दक्षता और संरक्षण के लिए एक राष्ट्रीय मिशन भी शुरू किया था । ऊर्जा दक्षता ब्यूरो के आंकड़ों के अनुसार ऊर्जा दक्षता में सुधार की वजह से साल 2016–17 तक भारत में लगभग 23 मिलियन टन ईंधन के बराबर तेल की बचत हुई है । ब्यूरो के अनुसार भारत ऊर्जा संरक्षण, नियोजन और दक्षता में सुधार करके लगभग 25% ऊर्जा की बचत कर सकता है ।

भारत में ऊर्जा संरक्षण, नियोजन और दक्षता में सुधार के लिए वित्तीय प्रोत्साहन के साथ–साथ ऊर्जा कुशल सौर और हरित भवन योजनाएं, लेबलिंग और प्रमाणन कार्यक्रम, ऊर्जा अंकेक्षण और ऊर्जा प्रदर्शन अनुबंध जैसे नीतिगत व्यवस्था को लागू किया गया है । सम्प्रेषण और आपूर्ति में विद्युत् क्षति और वाणिज्यिक नुकसान को न्यून करने के लिए भारत सरकार ने स्मार्ट ग्रिड तकनीक को तरजीह दिया । उपरोक्त

कार्ययोजना के तहत ऊर्जा मंत्रालय द्वारा चौदह स्मार्ट–ग्रिड पायलट परियोजनाएं शुरू की गईं । इसके साथ ही ऊर्जा मंत्रालय ने भारत में स्मार्ट ग्रिड तकनीक के विकास और प्रविस्तारण में तेजी लाने के लिए इंडिया स्मार्ट ग्रिड फोरम की शुरुआत की थी । बाद में यह फोरम कई हितकारी संस्थाओं के एक संघ के रूप में कार्यरत हुआ है । ऊर्जा आपूर्ति और मांग असंतुलन को पाटने के लिए भारत में ऊर्जा भंडारण प्रणालियों को विकसित किया गया है। वर्तमान समय में भारत में सभी प्रकार के ऊर्जा भंडारण प्रणालियों की बाजार क्षमता करीब 15 गीगा वाट है (तालिका 2)।

तलिकाः 2 वर्ष 2020 तक ऊर्जा भंडारण प्रणालियों की क्षमताएं (स्रोतः ऊर्जा दक्षता सेवा प्रभाग, ऊर्जा मंत्रालय, भारत सरकार)

क्षेत्र	भारत में अनुमानित क्षमता (गीगा वाट)
ग्रामीण माइक्रोग्रिड	1.35
औद्योगिक आपातकालीन बैकअप	1.35
कृषि	1.2
सौर एकीकरण	1.05
परिवहन	1.05
ग्रामीण ग्रिडलाइनें	1.05
पवन एकीकरण	1.05
रक्षा	1.05
ग्रिड सेवाएं	1.05
अस्पताल	0.9
दूरसंचार	0.75
डेटा केंद्र	0.75
विशेश आर्थिक क्षेत्र	0.63
खुदरा बाजार	0.48
उपनगर	0.48
होटल और रेस्तरां	0.48
अन्य	0.33

इसके अलावा भारत सरकार ने विभिन्न स्तरों कर ऊर्जा बचत, संरक्षण और नियोजन की कार्ययोजना तैयार की है । उदहारण के तौर पर, ऊर्जा कुशल वस्तुओं और सेवाओं को अपनाकर ऊर्जा बचत को 10% तक बढ़ाने की योजना है, घरेलू क्षेत्र (घरों और छोटे व्यवसायों) से ऊर्जा संरक्षण अभियान के तहत बिजली की खपत को 22% तक कम करने तो योजना है । घरेलू कुशल प्रकाश कार्यक्रम के तहत भारत सरकार द्वारा 2019 तक सभी तापदीप्त बल्बों को एलईडी से बदलने की योजना को कार्यान्वित किया गया है। इस योजना के क्रियान्वयन से एलईडी रोशनी की लागत में लगभग 74% की कमी आई है ।

5. निष्कर्ष

सतत विकास आर्थिक, पर्यावरण और सामाजिक विकास का संगम है। इसलिए, स्थानीय और वैश्विक पारिस्थितिकी तंत्र को लाभान्वित करने वाले प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए हमें अपने जीवन शैली में सकारात्मक बदलाव लाने चाहिए। वर्तमान समय में, ऊर्जा सुरक्षा भारतीय नीति–निर्माताओं की सर्वोच्च प्राथमिकता है और इसके लिए नई पहल की जा रही है ।

भारत में कोयले के पर्याप्त भंडार उपलब्ध हैं । इसलिए ऊर्जा

सुरक्षा हासिल करने के लिए स्वच्छ कोयले की घरेलू आपूर्ति बढ़ाने के लिए एक दीर्घकालिक योजना बनाने की आवश्यकता है । वर्तमान परिदृश्य में, सीमित भंडारण क्षमता और आयातित प्राकृतिक गैस की उच्च लागत को कम करने के लिए भारत को प्राकृतिक गैस के नए घरेलू स्रोतों की तलाश करना चाहिए और ठप्प पड़े पाइपलाइन परियोजनाओं को जल्द–से–जल्द पूरा कने के लिए सभी हितधारकों से बातचीत करनी चाहिए । नाभिकीय ऊर्जा भारत की एक बहुत ही महत्वाकांक्षी योजना है और परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह से मिली छूट ऊर्जा मिश्रण में नाभिकीय ऊर्जा की हिस्सेदारी बढ़ाने के लिए अनुपयोगी साबित होगा। देश के पूर्वोत्तर भाग की जलविद्युत क्षमता का लगभग 90% अप्रयुक्त है । चूंकि जलविद्युत ऊर्जा का एक स्वच्छ और मुद्रास्फीति से मुक्त ऊर्जा स्रोत है, इसलिए भारत को इसके बुनियादी ढांचे का विकास करना चाहिए । आयातित ऊर्जा संसाधनों पर निर्भरता कम करने के लिए भारत को ऊर्जा आपूर्ति में विविधता लानी होगी और अपने घरेलू संसाधनों में क्षमताएं बढ़ानी होंगी । साथ–ही–साथ भारत की ऊर्जा सुरक्षा को सुदृढ़ करने के लिए नियामक और बुनियादी ढांचे में अमूलचूल परिवर्तन की जरुरत है ।

वर्ष 2022 तक 100 गीगा वाट सौर ऊर्जा लक्ष्य निर्धारित कर भारत ने दुनिया का ध्यान अपनी तरफ आकर्षित किया है । अतएव, सौर और पवन ऊर्जा परियोजनाओं से वैश्विक जलवायु परिवर्तन वार्ता में भारत की स्थिति मजबूत होने की उम्मीद है ।

अकुशल खपत के कारण 20% से अधिक ऊर्जा बर्बाद हो जाती है । ऊर्जा की बचत ऊर्जा का उत्पादन के समान होता है । इसलिए ऊर्जा संरक्षण के लिए बिजली उत्पादन, पारेषण, आपूर्ति और उपयोग तक हरेक चरण में ऊर्जा संसाधन प्रबंधन आवश्यक है ।

जहां तक नीति निर्धारण और निष्पादन का संबंध है, समय–समय पर विभिन्न ऊर्जा नियामकों का उचित मूल्यांकन करने के लिए एक विस्तृत कार्यरेखा और तंत्र विकसित करने की आवश्यकता है । आज के प्रौद्योगिकी युग में किसी भी पैमाने पर नीति क्रियान्वयन के प्रसार को मापना बहुत सुविधाजनक हो गया है। डेटा विश्लेषण और मूल्यांकन से पता चलता है कि भारत ऊर्जा संबंधी अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर है। हालांकि लक्ष्यों को समय–सीमा के भीतर पूरा करने के लिए क्रियान्वयन में तेजी लाने की आवश्यकता है।

संदर्भ

1. Agarwal, S., Mani, S., Jain, A., & Ganesan, K. (2020). State of Electricity Access in India: Insights from the India Residential Energy Survey (IRES) 2020. In CEEW (The Council on Energy, Environment and Water) (Issue October).
2. Central Electricity Authority. (2021). Power sector at a glance: All India. https://powermin.gov.in/en/content/power-sector-glance-all-india
3. Coal Controller's Organization. (2021). Coal Statistical Report. Ministry of Coal, Government of India. http://www.coal.nic.in/public-information/statistical-report
4. ESMAP. (2021). The Energy Progress Report 2021: Tracking SDG7. https://trackingsdg7.esmap.org/data/files/download-documents/tracking_sdg_7_2020-full_report_-_web_0.pdf
5. FICCI. (2017). Hydro Profile. https://ficci.in/sector/67/Project_docs/hydro-profile.pdf
6. Forest Survey of India. (2015). State of Forest Report. https://fsi.nic.in/forest-report-2015
7. IEA. (2011). World Energy Outlook 2011 - Energy for all - Fiancing access for the poor. http://www.provedor.nuca.ie.ufrj.br/eletrobras/estudos/iea5.pdf
8. IEA. (2015). World Energy Outlook 2015. https://www.iea.org/reports/world-energy-outlook-2015
9. IEA. (2019). World Energy Outlook 2019.
10. IEA. (2020). India 2020: Energy Policy Review.
11. Laha, P., Chakraborty, B., & Østergaard, P. A. (2020). Electricity system scenario development of

India with import independence in 2030. Renewable Energy, 151, 627639. https://doi.org/10.1016/j.renene.2019.11.059

12. Legros, G., Rijal, K., & Seyedi, B. (2011). Decentralized Energy Access and the Millennium Development Goals. http://www.undp.org/content/undp/en/home/librarypage/environment-energy/sustainable_ energy/decentralized_energyaccessandthemdgs.html

13. Ministry of Coal. (2011). Report of the Working Group on Coal and Lignite.

14. Ministry of Power (GoI). (2019). Rural Electrification. https://saubhagya.gov.in/

15. Ministry of Power (GoI). (2021). Power for All. https://powermin.gov.in/en/content/power-all

16. National Statistical Office. (2021). Energy Statistics 2021.

17. NITI Aayog. (2015). A Report on Energy Efficiency and Energy Mix in the Indian Energy System (2030) Using India Energy Security Scenarios, 2047. http://niti.gov.in/documents/reports

18. Sen, S., Ganguly, S., Das, A., Sen, J., & Dey, S. (2016). Renewable energy scenario in India: Opportunities and challenges. Journal of African Earth Sciences, 122, 2531. https://doi.org/10.1016/j. jafrearsci.2015.06.002

19. Singh, R. (2018). Energy sufficiency aspirations of India and the role of renewable resources: Scenarios for future. Renewable and Sustainable Energy Reviews, 81(June 2017), 27832795. https://doi.org/10.1016/j.rser.2017.06.083

20. Thambi, S., Bhatacharya, A., & Fricko, O. (2018). Indias Energy and Emissions Outlook: Results from India Energy Model. Working Paper, 27.Tripathi, L., Mishra, A. K., Dubey, A. K., Tripathi, C. B., & Baredar, P. (2016). Renewable energy: An overview on its contribution in current energy scenario of India. Renewable and Sustainable Energy Reviews, 60, 226233. https://doi.org/10.1016/j.rser.2016.01.047

21. UNDP. (2015). Sustainable Development Goals. United Nations. https://www.undp.org/content/undp/en/home/sustainable-development-goals.html

हमें हार नहीं माननी चाहिए और हमें समस्याओं को खुद को हराने नहीं देना चाहिए।

मुझे पूरा यकीन है कि जब तक किसी ने नाकामयाबी की कड़वी गोली न चखी हो, वो कायमाबी के लिए पर्याप्त महत्वाकांक्षा नहीं रख सकता।

– डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

अवायवीय सह–पाचन (Anaerobic digestion) के द्वारा मवेशियों के गोबर व तालाब के अपशिष्ट शैवाल से बायोगैस का उत्पादन

डॉ. पुष्पेन्द्र कुमार[1], डॉ. अर्घ्य भट्टाचार्य[1], डॉ. संजीव कुमार प्रजापति[2], प्रो. अनुश्री मलिक[1] प्रो. वीरेन्द्र कुमार विजय[1]

[1]ग्रामीण विकास एवं प्रौद्योगिकी केन्द्र, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली

[2]जल और नवीकरणीय ऊर्जा विभाग, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की

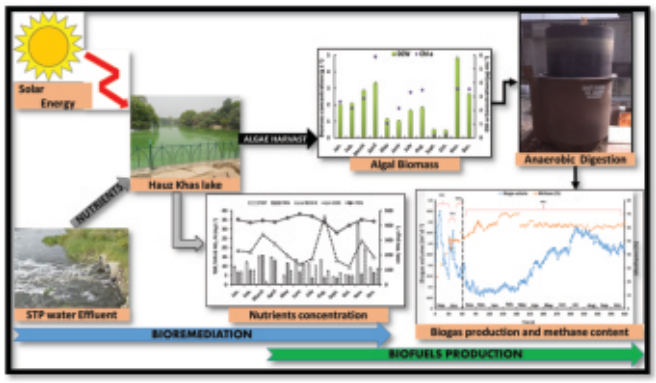
ई–मेलः pushk@ymail.com

सारांश

भारत में तालाबों का उपयोग सिंचाई एवं मछली पालन के लिये किया जाता है। तालाबों में प्रर्याप्त पानी की उपस्थिति के कारण इसका उपयोग शैवाल उत्पादन में भी किया जा सकता है। परन्तु पर्याप्त जानकारी एवं स्रोत न होने के कारण तालाबों के पानी का सही तरीके से उपयोग नहीं हो पा रहा है।

तालाबों में शैवाल के उत्पादन के लिये पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व होते हैं (TAN: 3.6–16; TDP: 4.88–20.38 and NO_3-N: 0.3–19.63 mg L^{-1}) जिसके कारण वर्ष भर शैवाल की उपस्थिति बनी रहती है। तालाब के पानी में उपयुक्त शैवाल के बायोमास का उपयोग करके वर्ष भर बायोगैस का उत्पादन किया जा सकता है जिससे गांव के विकास में योगदान मिलेगा। इसका प्रयोग प्रकाश के लिए, खाना बनाने के लिए एवं गाडियों के परिवहन हेतु किया जा सकता है। भा. प्रौ. सं. दिल्ली की अनुप्रयुक्त सूक्ष्मजैविकी प्रयोगशाला में शोध के द्वारा सूक्ष्म शैवाल व गोबर से अवायवीय सह–पाचन द्वारा 55-65 प्रतिशत मीथेन का उत्पादन किया गया है। इस अध्ययन द्वारा वर्ष भर तालाबो व झीलो के अपशिष्ट शैवाल का उपयोग करके बायोगैस का उत्पादन किया गया है।

की–वर्डः बायोगैस, सूक्ष्मशैवाल, अवायवीय सह–पाचन, पायलट–पैमाना।



चित्र 1: अपशिष्ट जल से प्राकृतिक रूप से उगाए गए (झील/तालाब) के शैवाल बायोमास का बायोगैस उत्पादन में उपयोग

प्रस्तावना

तालाबों व झीलो में जल निकाय आमतौर पर स्थानीय समुदायों से अपशिष्ट जल प्राप्त करता है जिसमें अकार्बनिक पदार्थों की उच्च सांद्रता के कारण अपशिष्ट जल धाराओं में पोषक तत्व बढ जाते है और तालाबों का प्रदूषण स्तर बढा रहा है। नतीजतन, दुनियांभर में तालाबों और झीलों में शैवाल और साइनोबैक्टीरिया पनप रहे हैं जो जल की गुणवत्ता में गिरावट के अलावा जीवों के लिए हानिकारक भी हैं।

भारत में कई झीलें, जैसे डल झील (कश्मीर), शाहपुरा झील (भोपाल), नक्की झील (राजस्थान), लोनार झील (महाराष्ट्र) और हौज खास झील (नई दिल्ली) बड़े पैमाने पर सूक्ष्म शैवाल से पूरी तरह आच्छदित हैं। अधिकांश भारतीय गांवों में तालाब की स्थिति भी सूक्ष्म शैवालों के

कारण दयनीय है। शैवालों की अत्यधिक वृद्धि के कारण जल की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है जिसके कारण मछलियां मरने लगती हैं। घरों के अपशिष्ट जल नालियों के द्वारा तालाबों एवं झीलों में जाकर जल प्रदूषण का कारण बन रहे है जिसकी वजह से आज ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गयी है कि तालाबों के जल में पर्याप्त मात्रा में शैवाल व साइनोबैक्टीरिया पैदा हो रहे है।

तालाबों में प्राकृतिक रूप से उगने वाले शैवाल के बायोमास को संभावित फीडस्टाक (Feedstock) के रूप में प्रयोग करके बायोऊर्जा उत्पादन में सहयोग कर सकते हैं विभिन्न अध्ययन के माध्यम से बायोगैस उत्पादन पर पिछले एक दशक से कार्य किया गया है जिसमें अपशिष्ट जल से उत्पन्न शैवाल बायोमास का अवायवीय पाचन (Anaerobic Digestion) किया गया और मीथेन की प्रतिशतता में वृद्धि प्राप्त की गयी जो 170 से 279 mL CH_4/gVS प्राप्त हुई। यदि शैवालीय बायोमास को कूटबद्ध किया जाए तो मीथेन (CH_4) उत्पादन में और सुधार किया जा सकता है।

वर्तमान अध्ययन से यह स्पष्ट है कि शैवाल से बायोगैस उत्पादन की अपार संभावनाएं हैं। इसी तरह तालाबों और झीलों में उपस्थित शैवाल बायोमास, बायोगैस उत्पादन के लिए एक उत्कृष्ट फीडस्टॉक बन सकता है। दूसरी ओर, सूक्ष्म शैवाल बायोमास के सह–पाचन के साथ गाय के गोबर का उपयोग करके ऊर्जा उत्पादन में और सुधार हो सकता है। भारत सहित कई विकासशील देशों में, गोबर आधारित बायोगैस एक सुलभ तकनीक हैं। ग्रामीण क्षेत्र में लोगों को अपनी दिन प्रतिदिन ऊर्जा की जरूरतों को पूरा करने के लिए परिवार के आकार के बायोगैस संयत्र के माध्यम से पूरा कर सकते हैं। ग्रामीण समुदायों के आस–पास तालाबों और झीलों से पर्याप्त शैवाल बायोमास से बायोगैस उत्पादन के लिये उपयुक्त हो सकता है। इसलिए बायोगैस उत्पादन के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में पर्याप्त संसाधन उपलबध हैं।

2. प्रयोगात्मक कार्यः–

2.1 **सूक्ष्म शैवाल बायोमास संग्रहः**–शैवाल बायोमास हौज खास, झील से एकत्र किया गया और इसे खुले तालाब रेसवे (open pond raceway) में आई.आई.टी. दिल्ली के घरेलू अपशिष्ट जल में उगाया गया था। जिसमें देखा गया कि सूक्ष्म शैवाल में अपशिष्ट जल को शुद्ध करने की क्षमता के साथ बायोमास की वृद्धि भी तीव्रता से होती है। झील/तालाब के अपशिष्ट जल में पनपे सूक्ष्म शैवाल को एक अपारदर्शी कंटेनर में रात भर रख दिया जाता है और फिर बायोमास को पृथक करके बायोगैस बनाने में प्रयोग किया गया।

2.2 झील के अपशिष्ट जल के पोषक तत्व और प्रदूषक रूपरेखा

झील के जल में उपस्थित ठोस पदार्थों को पृथक करने के बाद प्राप्त अपशिष्ट जल के नूमने लेकर निम्नलिखित विश्लेषण किये गये हैं:–

(i) घुलनशील रासायनिक ऑक्सीजन मांग (sCOD)
(ii) कुल निलंबिम ठोस (TSS)
(iii) कुल विलय फासफोरस (TDP)
(iv) नाइट्रेट नाइट्रोजन (NO_3N)
(v) कुल अमोनियाकल नाइट्रोजन (TAN)

साथ ही, अन्य भौतिक–रासायनिक (DO, EC, pH & Temperature) विशलेषणों द्वारा झील के जल में उपस्थित पोषक तत्वों का अध्ययन किया गया।

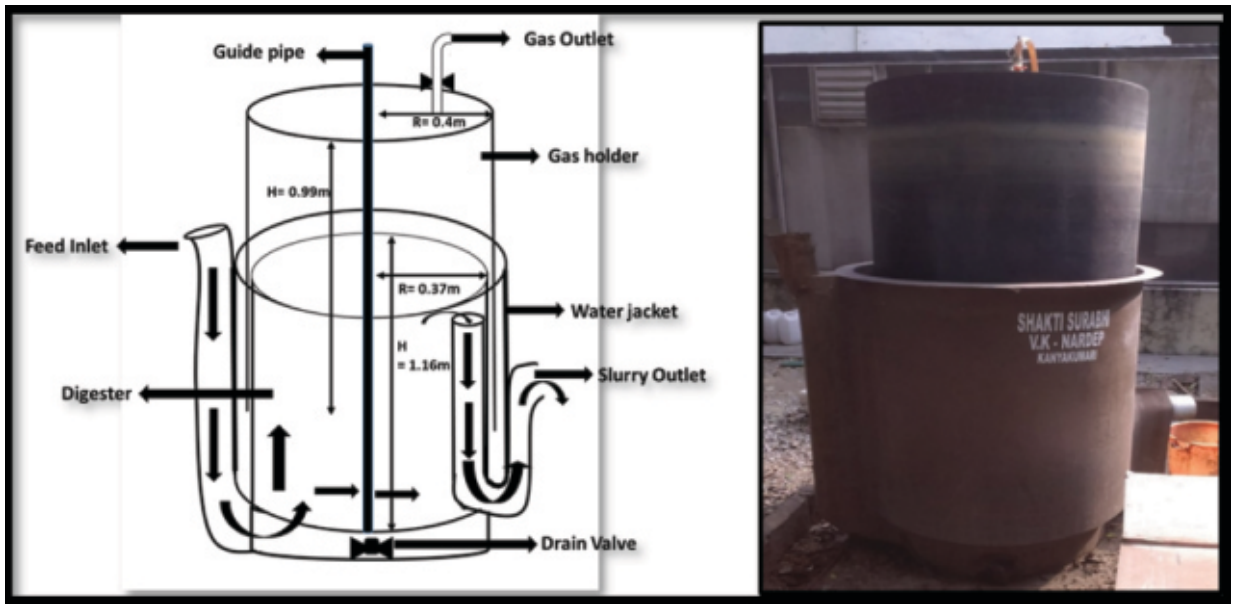
2.3 पायलट–पैमाने पर अवायवीय पाचनः–

0.5m^3 गैस धारक बायोगैस संयंत्र पर शैवाल के अवायवीय पाचन का अध्ययन किया गया । सर्वप्रथम बायोगैस सयंत्र से प्राप्त इनोकुलम (Inoculum) के साथ मवेशियों के ताजा गोबर को प्राइमरी सब्सट्रेट (Substrate) के रूप में इस्तेमाल किया गया था। प्रारम्भ में 1:1 के अनुपात में गोबर के साथ नल के पानी को मिलाकर इस घोल को 30 दिनों तक बायोगैस सयंत्र में इस्तेमाल किया गया। बायोगैस संयत्र को स्थिरीकरण के पश्चात डाइजेस्टर को व्यवस्थित रूप से मिश्रित फीड़ (शैवालःगोबर) में परिवर्तित किया गया। देनिक सूक्ष्म शैवाल के इनपुट में वृद्धि करके सूक्ष्म शैवाल व गोबर को 1:1 तक बनाया गया जिसे तालिका 1 में दर्शाया गया है।

तालिका 1: पायलट पैमाने पर बायोगैस संयंत्र को मिश्रित फीड में बदलने के दौरान पशु के गोबर (CD) और शैवाल (A) अनुपात (VS के आधार पर) में भिन्नता।

दिन	शैवाल एंव पशु के गोबर (CD) (g. VS)	अनुपात (A:CD)
1	56.8 : 568.2	1 : 10
2	62.5 : 562.5	1 : 9
3	69.5 : 555.5	1 : 8
4	78 : 547	1 : 7
5	89.3 : 535.7	1 : 6
6	104 : 521	1 : 5
7	104 : 521	1 : 5
8	125 : 500	1 : 4
9	125 : 500	1 : 4
10	165.3 : 468.7	1 : 3
11	165.3 : 468.7	1 : 3
12	208.3 : 416.7	1 : 2
13	208.3 : 416.7	1 : 2
14	208.3 : 416.7	1 : 2
15	32.5 : 312.5	1 : 1

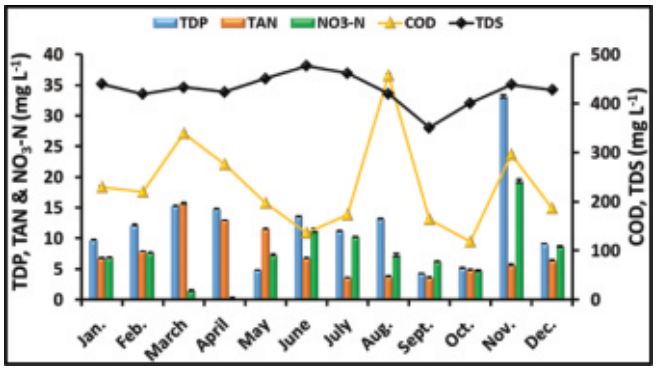
शैवाल व गोबर (1:1) अनुपात में बायोगैस संयत्र को 1 वर्ष तक चलाया गया और बायोगैस उत्पादन का प्रतिदिन अध्ययन किया गया था इसके अलावा बायोगैस संयत्र से निकले डाइजेस्टेट घोल का भी अध्ययन किया।



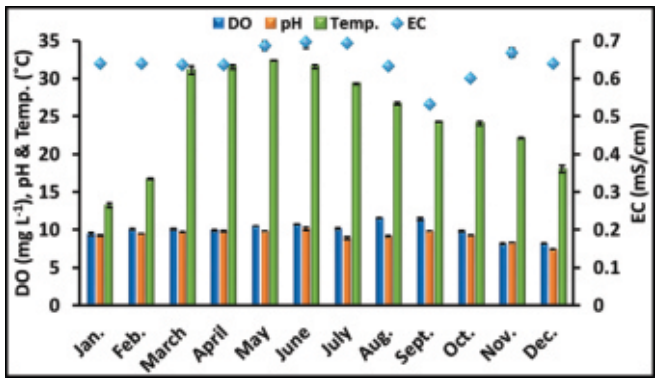
चित्र 2: शैवाल और मवेशियों के गोबर के सह–पाचन के लिए घर के बाहर पायलट–स्केल बायोगैस संयंत्र (≈ 0.5 m^3) (a) एक योजनाबद्ध डिजाइन। (b) एकत्रित बायोगैस के साथ वास्तविक संयंत्र

3. परिणाम एवं चर्चा

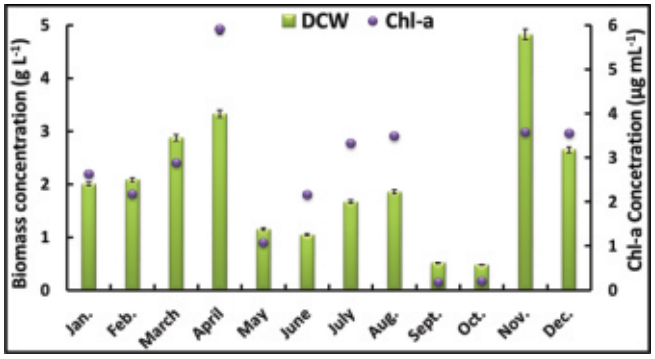
झील के पानी के लक्ष्ण के आधार पर निश्चित किया गया कि झील के पानी में शैवाल के उत्पादन के लिए उपयुक्त मात्रा में पोषक तत्व उपलबध हैं। जिसकी वजह से वर्षभर शैवाल बायोमास प्राप्त किया जा सकता है। चित्र 3, 4 व 5 में दर्शाया गया है कि वर्ष–भर झील के पानी में पोषक तत्वों की सान्द्रता (TDP, TAN, NO_3-N, COD, TDS, DO, pH, Temp. &EC) बनी रहती है जिसका मौसम के बदलाव से पोषक तत्वों पर सूक्ष्म प्रभाव पडता है और वर्ष भर शैवाल बायोमास की उत्पादकता बनी रहती हैं। सूक्ष्म शैवाल की जैव रासायनिक विश्लेषण से देखा गया है कि इसके बायोमास में 45% लिपिड़, 10% कार्बोहाइड्रेट और 28% प्रोटीन होता है। इसके अलावा वाष्पशील ठोस (TS) 87.53% और C,H,N क्रमश 46.16, 7.01 व 4.50 (TS) था।



चित्र 3: एक वर्ष की निगरानी अवधि के लिए झील के पानी में पोषक तत्वों की सान्द्रता (TDP, TAN, NO_3-N, COD &TDS) की मौसमी भिन्नता



चित्र 4: एक वर्ष की निगरानी अवधि के लिए झील में अपशिष्ट जल मापदंडों (DO, pH, Temp. & EC) की मौसमी भिन्नता

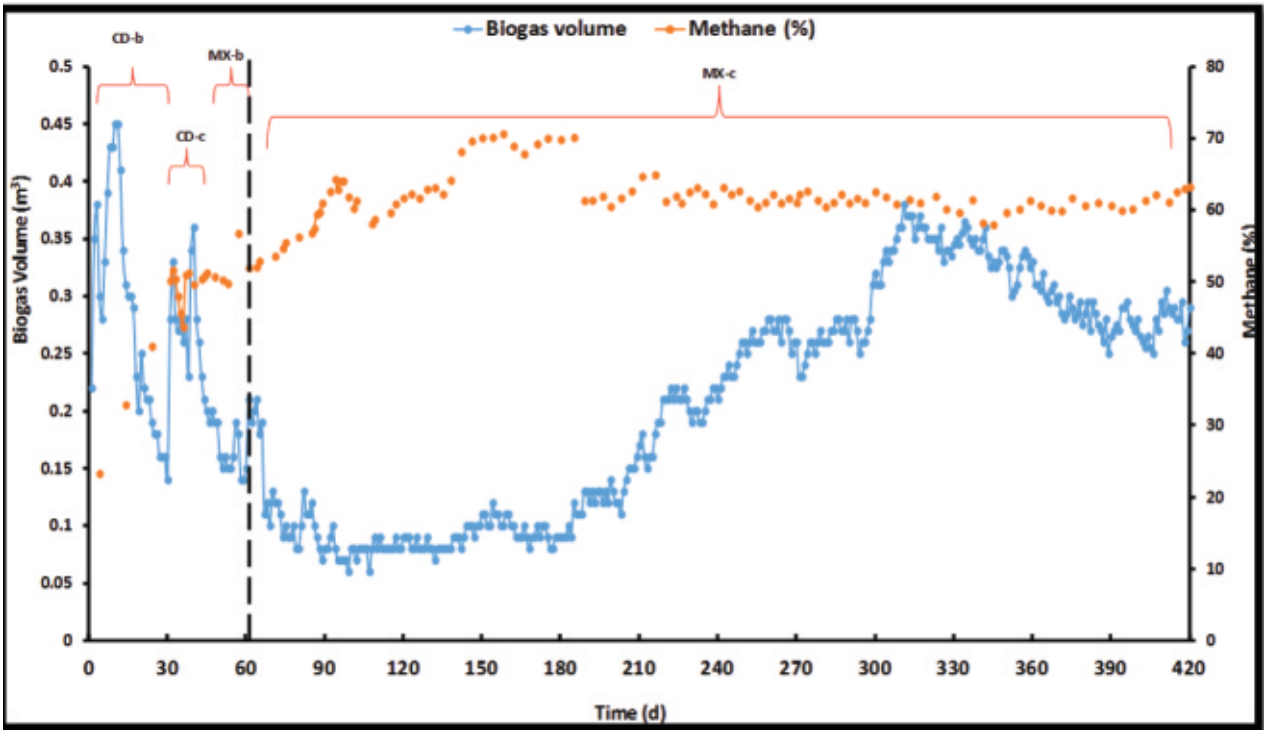


चित्र 5: झील के पानी में शैवाल बायोमास उत्पादन (DCW & Chl-a) और क्लोरोफिल सांद्रता की मासिक भिन्नता

3.1 बायोगैस उत्पादन का बड़े–पैमाने पर अध्ययन

बड़े पैमाने (0.5 m3) बायोगैस संयत्र को अर्धनिरंतर फीड के साथ 390 दिनों तक चलाया गया। स्थिरीकरण अवधि के दौरान बायोगैस उत्पादन 0.2-0.45 m^3 प्रतिदिन प्राप्त किया गया तथा मीथेन 22% से बढ़कर 41% तक प्राप्त की गयी। बायोगैस संयत्र को मिश्रित फीड पर बदलने के उपरांत प्रारंभिक चरण में बायोगैस उत्पादन पर कोई प्रभाव नहीं हुआ परन्तु 10 दिनों के पश्चात मीथेन में 41% से 56% तक की वृद्धि देखी गयी पूरे 1 वर्ष के बायोगैस संयंत्र के अध्ययन के साथ बायोगैस उत्पादन पर मौसमी बदलाव का प्रभाव भी देखा गया। इस दौरान गर्मी के मौसम में बायोगैस उत्पादन (0.65 m^3/day) और मीथेन 60-65% (V/V) प्राप्त की गयी।

गर्मी के मौसम के बाद परिवेश का तापमान 4-8^{0}C (नवंबर से फरवरी) में देखा गया कि बायोगैस उत्पादन में गिरावट आयी है। सर्दी के मौसम (नवंबर से फरवरी) में मीसोफिलिक स्थितियों के कारण गैस उत्पादकता पर ताप का प्रभाव पड़ता है। नवंबर से फरवरी में बायोगैस (वॉल्यूमेटिक) 0.06 से 0.21 m^3/day और विशिष्ट बायोगैस उपज 0.096- 0.336m^3/kgVS_{feed} day और मीथेन 58% से 60% की सीमा में प्राप्त की गयी थी। कुल मिलाकर, परिणाम से ये संकेत मिलता है कि अवायवीय सह–पाचन द्वारा बायोगैस के पर्याप्त उत्पादन के लिये पायलट–स्केल संभव है। सूक्ष्म शैवाल के साथ अभी तक बड़े पैमाने पर अवायवीय



चित्र 6: दैनिक बायोगैस उत्पादन में मौसमी बदलाव और बाहरी परिस्थितियों में पायलट पैमाने पर अध्ययन के दौरान बायोगैस में मीथेन अवयव (%) ***(Aberrations: CD-b: Cattle Dung operated under batch mode. CD-c: Semi-continuous mode with cattle dung, MX-b: mixed feed algal CD in batch mode, MX-c: mixed feed algal CD (1:1 ratio) in continuous mode on VS basis)***

सह–पाचन पर कोई अध्ययन नहीं है लेकिन प्रयोगशाला स्तर पर शैवाल का उपयोग करके बायोगैस उत्पादन के बहुत से अध्ययन किये गये हैं यद्यपि बड़े पैमाने पर शैवाल के उत्पादन में बहुत कार्य नहीं किया गया है।

वर्तमान परिणामों ने यह निश्चित हो गया है कि सूक्ष्म शैवाल व पशुओं के गोबर से सह–पाचन संभव है इसके परिणामस्वरूप 57-60% मीथेन के साथ बायोगैस उत्पादन वर्ष भर किया जा सकता है।

3.2 ग्रामीण तालाबों में अपशिष्ट जलः वर्तमान स्थिति

ग्रामीण क्षेत्र के तालाबों की वास्तविक स्थिति बहुत दयनीय हैं। हमने कई गांवों का दौरा किया है और तालाबों की वास्तविक स्थिति देखी है। तालाब पूरी तरह से शैवाल से ढके हुए हैं लेकिन तालाबों में प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले शैवालीय बायोमास का कोई उपयोग नहीं हो रहा है। इस क्षमता का उपयोग करना बहुत आवश्यक है जिससे कि हम शैवाल को उगाने की लागत को कम कर सकते हैं तथा तालाब के जल को स्वच्छ किया जा सकता हैं। चित्र 7 में कुछ ग्रामीण क्षेत्र के तालाबों की वास्तविक स्थिति दर्शायी गयी हैं।

4. निष्कर्ष

वर्तमान कार्य से प्रदर्शित होता है कि झील/तालाब के पानी में वर्षभर समृद्ध शैवाल विकास के लिए पर्याप्त पोषक तत्व विधमान रहते हैं ये शैवालवीय प्रस्फुटन (Algal bloom) हमारे लिए पर्यावरण एवं आर्थिक लाभ के लिये उपयुक्त हो सकते हैं। बड़े पैमाने के बायोगैस संयंत्र के परिणाम से सिद्ध हो गया है कि वर्षभर मीथेन युक्त बायोगैस उत्पादन किया जा रहा है, इसके अलावा विभिन्न विश्लेषणों (pH, Total alkalinity, TVFA और TAN) के अध्ययन से पता चला है कि यह प्रक्रिया स्थिर है। भविष्य में इस प्रक्रिया द्वारा डेयरी



चित्र 7: ग्रामीण क्षेत्र के तालाबों की वास्तविक स्थिति

फार्म या मलजल उपचार संयंत्र (STP) जैसे स्थलो को प्रयोग में लाकर आगे बढा जा सकता है।

भविष्य में इस सूक्ष्म शैवाल को ग्रामीण तालाब/झील आदि से प्रतिदिन प्राप्त करके बायोगैस उत्पादन के लिये उपयुक्त यंत्र विकसित करने की आवश्यकता होगी।

आभार

लेखकगण इस कार्य को पूरा करने के लिए आई.आई.टी. दिल्ली से मिली वित्तीय सहायता के लिए आभार प्रकट करते हैं।

संदर्भ

1. Waajen GWAM, Van Bruggen NCB, Pires LMD et al (2016) Biomanipulation with quagga mussels (Dreissena rostriformis bugensis) to control harmful algal blooms in eutrophic urban ponds. Ecol Eng 90:141–150. https://doi.org/10.1016/ j.ecoleng.2016.01.036

2. Smith VH, Schindler DW(2009) Eutrophication science: where do we go from here? Trends Ecol Evol 24:201–207. https://doi.org/10.1016/j.tree.2008.11.009

3. Choudhary P, Prajapati SK, Malik A (2016) Screening native microalgal consortia for biomass production and nutrient removal from rural wastewaters for bioenergy applications. Ecol Eng 91: 221–230. https://doi.org/10.1016/j.ecoleng.2015.11.056

4. Salama E-S, Kurade MB, Abou-Shanab RAI et al (2017) Recent progress in microalgal biomass production coupled with wastewater treatment for biofuel generation. Renew Sust Energ Rev 79: 1189–1211. https://doi.org/10.1016/j.rser.2017.05.091

5. Bohutskyi P, Bouwer E (2012) Biogas production from algae and cyanobacteria through anaerobic digestion: a review,

analysis, and sresearch needs. In: Lee JW (ed) Advanced biofuels and bioproducts. Springer New York, New York, NY, pp 873–975

6. Ward AJ, Lewis DM, Green FB (2014) Anaerobic digestion of algae biomass: a review. Algal Res 5:204–214. https://doi.org/10. 1016/j.algal.2014.02.001

7. Kumar P, Prajapati SK, Malik A, Vijay VK (2018) Evaluation of biomethane potential of waste algal biomass collected from eutrophied lake: effect of source of inocula, co-substrate, and VS loading. J Appl Phycol 31:1–13. https://doi.org/10.1007/s10811-018-1585-0

8. Yuan X, Shi X, Zhang D et al (2011) Biogas production and microcystin biodegradation in anaerobic digestion of blue algae. Energy Environ Sci 4:1511. https://doi.org/10.1039/c0ee00452a

9. Miao H, Lu M, Zhao M et al (2013) Enhancement of Taihu blue algae anaerobic digestion efficiency by natural storage. Bioresour Technol 149:359–366. https://doi.org/10.1016/j.biortech.2013.09. 071

10. Miao H, Wang S, Zhao M et al (2014) Codigestion of Taihu blue algae with swine manure for biogas production. Energy Convers Manag 77:643–649. https://doi.org/10.1016/j.enconman.2013.10.025

11. Zhong W, Zhang Z, Luo Y et al (2012) Biogas productivity by codigesting Taihu blue algae with corn straw as an external carbon source. Bioresour Technol 114:281–286. https://doi.org/10.1016/j.biortech.2012.02.111

12. Zhang Y, Caldwell GS, Sallis PJ (2019) Semi-continuous anaerobic co-digestion of marine microalgae with potato processing waste for methane production. J Environ Chem Eng 7:102917. https://doi.org/10.1016/j.jece.2019.102917

उस व्यक्ति ने अमरत्व प्राप्त कर लिया है, जो किसी सांसारिक वस्तु से व्याकुल नहीं होता।

– स्वामी विवेकानंद

जब भी आपका सामना किसी विरोधी से हो, उसे प्रेम से जीतें।

–महात्मा गांधी

रसोई के अपशिष्ट पदार्थों से पायलट स्केल पर बायोगैस उत्पादन की विधियों का विकास

आद्या ईशा, सुबोध कुमार, डॉ. भास्कर झा, प्रो. पी.एम.वी. सुब्बाराव, प्रो. राम चंद्र एवं प्रो. वीरेंद्र कुमार विजय

ग्रामीण विकास एवं प्रौद्योगिकी केंद्र,
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली, हौज़ ख़ास, नई दिल्ली–110016
ई–मेलः rchandra@rdat.iitd.ac.in

सारांश

शहरी क्षेत्रों में विभिन्न स्रोतों से उत्पन्न रसोई का कचरा (फल और सब्जियों के अवशेष) जिसे आमतौर पर अपशिष्ट पदार्थ के रूप में फेंक दिया जाता है, बायोगैस उत्पादन के लिए एक समृद्ध जैविक स्रोत है। भविष्य की जैव ऊर्जा के संभावित स्रोत के रूप में रसोई के अपशिष्ट पदार्थों की व्यवहार्यता को मान्यता प्रदान करने के लिए, इस स्रोत की वर्ष की सभी मौसमीं परिस्थितियों में पायलट पैमाने पर बायोगैस उत्पादन क्षमता के मूल्यांकन की आवश्यकता है। इसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए, इस अध्ययन में विभिन्न प्रकार के रसोई कचरे की बायोगैस उत्पादन क्षमता का आंकलन 25 घन मीटर प्रति दिन की क्षमता वाले एनारोबिक डाइजेस्टर में किया गया था। सर्वप्रथम रसोई के अवशेष में मौसमी भिन्नताओं का अध्ययन एक वर्ष के दौरान छह मौसमों अर्थात् वसंत, गर्मी, मानसून, शरद ऋतु, प्रारंभिक सर्दी और पूर्व सर्दी (प्रत्येक मौसम में 60 दिन) में विभाजित करके किया गया था। बायोगैस प्लांट की फीडिंग 0.60–0.72 किलोग्राम वाष्पशील ठोस/घन मीटर प्रति दिन की जैविक लोडिंग दर (ओएलआर) रेंज में की गयी। जांच के परिणामों में पाया गया कि सभी मौसमों में विशिष्ट बायोगैस उत्पादन की दर 0.56–0.68 किलोग्राम वाष्पशील ठोस/घन मीटर प्रति दिन थी, ज़िसमे मीथेन की प्रतिशतता 54.3 से 62.8% के मध्य पायी गयी। अध्ययन से पता चला है कि फलों और सब्जियों के मिश्रण में डी–ऑयल पोंगामिया केक को जोड़ने से डाइजेस्टर के पीएच कम होने की समस्या को दूर किया जा सकता है, जो कि अन्यथा किसी क्षारीय केमिकल्स से किया जाता । इसके अलावा, बायोगैस संयंत्र से प्राप्त स्लरी में 2.3–2.6% नाइट्रोजन, 0.6.0.9% फॉस्फोरस, और 0.7–1.1% पोटेशियम होता है, जो जैविक खाद के रूप में मिट्टी की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए समृद्ध स्रोत के रूप में उपयोग में लाया जा सकता है।

की–वर्ड्सः फल और सब्जी अपशिष्ट; एनारोबिक डाइजेशन; पीएच; पोंगामिया डी–आयल्ड केक; स्वच्छ ऊर्जा के लिए अपशिष्ट

1. प्रस्तावना

रसोई के कचरे (फलों और सब्जियों के अवशेष) में उच्च मात्रा में नमी (74–90%) और उच्च कार्बनिक अंश (80–90%) होता है जो इसे बायोगैस उत्पादन (Gallipoli et al-, 2020) के लिए उपयुक्त स्रोत बनाता है। बायोगैस मुख्य रूप से मीथेन (50–70%) और कार्बन डाइऑक्साइड (30–50%) गैसों का मिश्रण है, जो एनारोबिक परिस्थितियों में कार्बनिक पदार्थों की सूक्ष्मजीवों के साथ जैव रासायनिक अभिक्रिया से उत्पन्न होता है (Srinuanpan et al., 2017)। एकल सब्सट्रेट के रूप में रसोई के अपशिष्ट पदार्थों के एनारोबिक डाइजेशन करने पर डाइजेस्टर का तेजी से अम्लीकरण होता है जो परिणामस्वरूप मिथेनोजन्स जीवाणुओं की गतिविधि को रोकता है (मोस्तफा एट अल।, 2020)। इसके अलावा, अत्यधिक अवक्रमणीय होने के कारण, इसे सह–सब्सट्रेट को शामिल किए बिना एकमात्र स्रोत के रूप में बायोगैस उत्पादन के लिए उपयोग करना एक सही प्रक्रिया नहीं है (Demirel and Scherer, 2008

Zhang et al., 2013)। रसोई अपशिष्ट से बायोगैस उत्पादन पर किए गए अधिकांश अध्ययन बैच पैमाने और छोटे पैमाने तक ही सीमित हैं। इसके अलावा, भारत में, ज्यादातर बायोगैस प्लांट रसोई अपशिष्ट–आधारित छोटे पैमाने पर प्रति दिन 10–20 किलोग्राम कचरे का उपचार करते हैं, जिसमें रसोई के कचरे को मवेशियों के गोबर के साथ मिलाया जाता है (Voegeli et al., 2009; Curry and Pillay, 2012; Agrahari and Tiwari, 2013)। साहित्य में वर्णित पेपर के अध्ययन से पता चलता है कि फलों और सब्जियों के अवशेष का एकल सब्सट्रेट के रूप में एनारोबिक डाइजेशन एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। फलों और सब्जियों के कचरे के एनारोबिक डाइजेशन के दौरान डाइजेस्टर के अंदर अम्लीयकरण की चुनौती को गाय के गोबर, लिग्नोसेल्यूलोसिक बायोमास, सीवेज कीचड़, आदि पदार्थों का उपयोग करके दूर किया जा सकता है (Xu et al., 2018)। अतः प्रस्तुत अध्ययन में रसोई के अपशिष्ट पदार्थों के साथ पोंगामिया डी–आयल्ड केक को मिश्रित करने का उद्देश्य एनारोबिक डाइजेस्टर की प्रक्रिया पर प्रोटीन युक्त सामग्री के सहक्रियात्मक प्रभावों का विश्लेषण करना था।

2. सामग्री और विधि

2.1 रसोई के अपशिष्ट पदार्थ और पोंगामिया डी–आयल्ड केक की विशेषता

शोध को शुरू करने के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली के स्टाफ कैंटीन और छात्रावासों से प्राप्त मिश्रित रसोई अपशिष्ट (सड़े/क्षतिग्रस्त फल और सब्जियों से युक्त) को नियमित रूप से (प्रयोगात्मक कार्य के दौरान जब भी आवश्यक हो) एकत्र किया गया। रसोई के अपशिष्ट में मुख्य रूप से सब्जियों और फलों के छिलके, सड़ी हुई सब्जियां और फल पाए गए। रसोई के अपशिष्ट और पोंगामिया डी–आयल्ड केक के निकटतम गुणों का निर्धारण एपीएचए (W.E.F., 1999) में निर्देशित किए गए मानक प्रोटोकॉल का उपयोग करके किया गया।

2.2 बायोगैस प्लांट

एक फ्लोटिंग ड्रम टाइप बायोगैस प्लांट जिसका आयतन 50 घन मीटर है, का उपयोग बायोगैस उत्पादन अध्ययन में किया गया। उत्पादित बायोगैस को 0.01 बार के निरंतर दबाव पर डाइजेस्टर के अंदर तैरते हुए धातु के ड्रम में संग्रहित किया जाता है। अध्ययन में प्रयुक्त बायोगैस प्लांट का चित्रात्मक दृश्य चित्र–1 में दिखाया गया है।



चित्र–1: रसोई के अपशिष्ट पदार्थों पर चलने वाले बायोगैस प्लांट का सचित्र दृश्य।

2.3 बायोगैस प्लांट को चार्ज करना

डाइजेस्टर को शुरू में 10.0 टन गोबर (20% कुल ठोस, 80% पानी और कुल ठोस का 80% वाष्पशील ठोस के रूप में) के साथ 40.0 टन पानी के साथ डाइजेस्टर की सीडिंग (अपघटन के लिए आवश्यक जीवाणुओं का उत्पादन) के लिए किया गया था। इस प्रकार, प्रयोग के प्रारम्भ में सब्सट्रेट में कुल ठोस और वाष्पशील ठोस की सांद्रता क्रमशः 50% और 40% थी। इसके बाद, पहले 40 दिनों के लिए रसोई के अपशिष्ट सब्सट्रेट की कोई फीडिंग नहीं की गयी । इस दौरान बायोगैस उत्पादन मानकों का प्रतिदिन आंकलन किया गया। जब बायोगैस का उत्पादन लगभग बंद हो गया (वाष्पशील ठोस पदार्थ सब्सट्रेट में 1.2% के रूप में बने रहे), वांछित रसोई सब्सट्रेट की फीडिंग नियमित आधार पर शुरू कर दी गयी ।

2.4 रसोई के अपशिष्ट का पाउडर रूप तैयार करना

फलों और सब्जियों के अपशिष्ट के आकार में कमी तथा

इसको और समरूप बनाने के लिए, जिससे कि इसका अपघटन आसानी से हो सके, इसके पाउडर रूप का कार्य 3.75 किलोवाट की क्षमता वाली मोटर से चलने वाले चूर्णीकरण संयंत्र से किया गया। फलों और सब्जियों के कचरे के लिए चूर्ण बनाने की दर 250 किग्रा/घंटा थी तथा इस कार्य में बिजली की खपत 1.12 किलोवाट घंटा दर्ज की गयी ।

2.5 बायोगैस प्लांट में फीडिंग का विवरण

डाइजेस्टर में 2.32–2.84% की सीमा में कुल ठोस पदार्थ बनाए रखने के लिए 250 किलोग्राम रसोई के अपशिष्ट के पाउडर को पानी के साथ मिलाया जाता था। वसंत, ग्रीष्म, मानसून, पतझड़, शुरुआती सर्दियों, सर्दियों के मौसम के दौरान डाइजेस्टर में फीड की गयी जैविक लोडिंग दर (OLR) क्रमशः 0.71, 0.66, 0.72, 0.64, 0.61, 0.60 $kgVS/m^3$ थी। रसोई के कचरे से बायोगैस उत्पादन के दौरान जब देखा गया कि डाइजेस्टर में पीएच लगातार गिर रहा है तो पीएच को संतुलित करने के लिए रसोई के कचरे के साथ 2.0 kg पोंगामिया डी–आयल्ड केक को मिलाना शुरू कर दिया गया। सर्दियों के मौसम में, 1000 लीटर क्षमता के सौर वॉटर हीटर से उत्पादित गर्म पानी को रसोई के पाउडर के साथ मिश्रित किया गया ताकि सर्दियों के मौसम में डाइजेस्टर का तापमान मेसोफिलिक तापमान की सीमा में रखा जा सके। रसोई के कचरे के साथ गर्म पानी का उपयोग करने से बायोगैस उत्पादन दर और बढ़ी हुयी दर्ज की गयी।

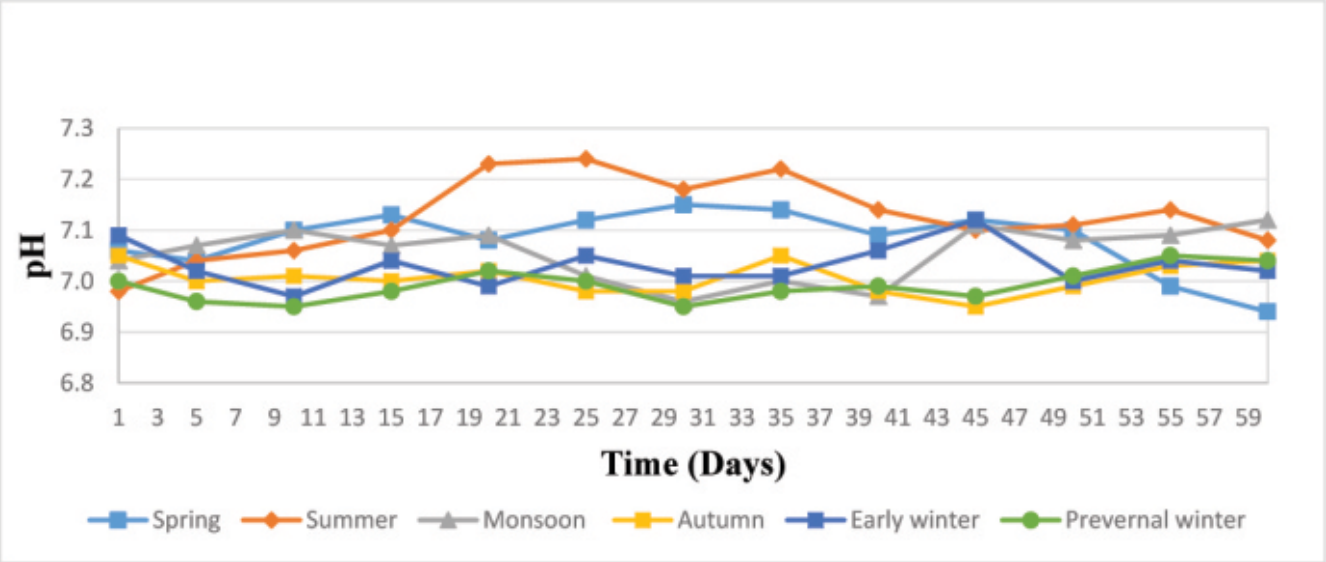
3. परिणाम और चर्चा

3.1 डाइजेस्टर का पीएच मान

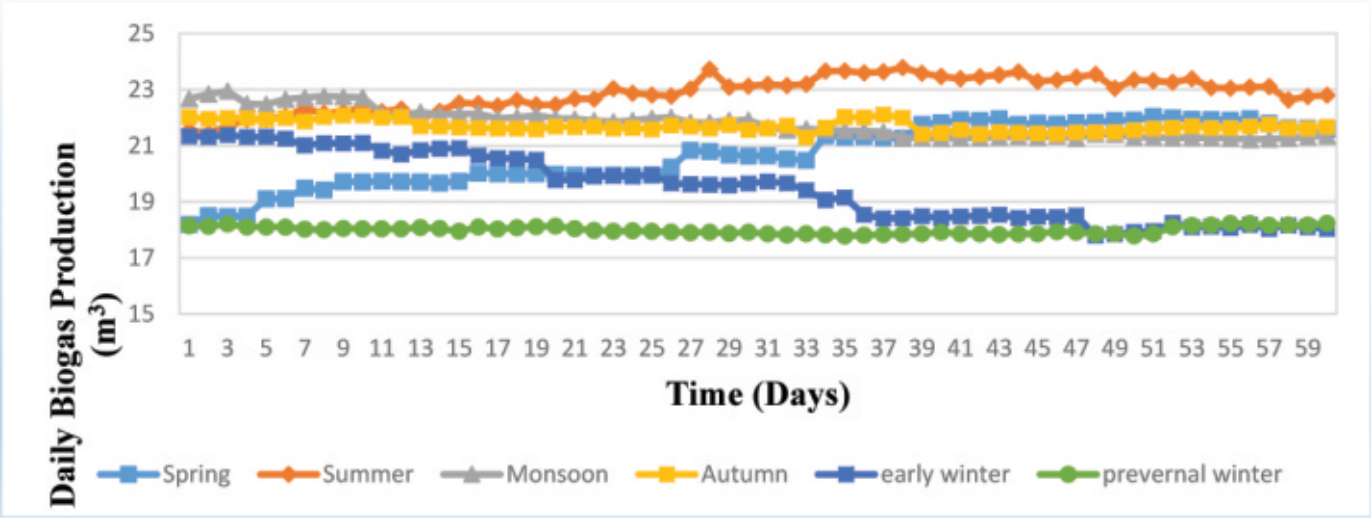
प्रारंभ में, डाइजेस्टर का पीएच मान 7.31 था। हालांकि, जैसे–जैसे समय बीतता गया, डाइजेस्टर का पीएच कम होने लगा। इसका कारण रसोई के अपशिष्ट की अत्यधिक शीघ्र अपघटन प्रकृति का होना है। इसके तेजी से हाइड्रोलिसिस (Bong et al., 2018) के कारण अधिक कार्बनिक अम्ल उत्पन्न होते हैं, जो डाइजेस्टर का पीएच कम कर देते हैं। 20 वें दिन जब डाइजेस्टर का पीएच 5.98 दर्ज किया गया, पीएच को संतुलित करने के लिए, 21 वें दिन से रसोई के अपशिष्ट सब्सट्रेट के साथ दैनिक रूप से डी–आयल्ड पोंगामिया केक मिश्रित करना शुरू कर दिया गया। वसंत ऋतु के दौरान जब डाइजेस्टर में तेल रहित पोंगामिया केक नहीं मिलाया गया था, तब डाइजेस्टर में पीएच की गिरावट को आसानी से देखा जा सकती है। यह भी पाया गया कि डाइजेस्टर में पोंगामिया डी–ऑयल्ड केक को डालने से पीएच मान बढ़ने लगा। पोंगामिया डी–ऑयल्ड प्रोटीन समृद्ध पदार्थ होने के कारण अमोनिया और अमोनियम को मुक्त करता है जो बफर एजेंट का कार्य करता है और डाइजेस्टर की अम्लीय पीएच को पुनः संतुलित करता है (Garcia-Peña et al., 2011; Bong et al., 2018; Mirmohamadsadeghi et al., 2019)। डाइजेस्टर में पोंगामिया डी–ऑयल्ड केक मिलाने के बाद पीएच 6.94–7.15 की सीमा में पाया गया, जिससे बायोगैस और मीथेन उत्पादन में काफी सुधार हुआ। सभी मौसमों के औसत पीएच मान (चित्र 2) से पता चलता है कि रसायनों का उपयोग किए बिना डाइजेस्टर के पीएच को अनुकूल स्थिति में समायोजित किया जा सकता है ।

3.2 दैनिक बायोगैस उत्पादन और सब्सट्रेट तापमान

सभी मौसमों में रसोई के अपशिष्ट के एनारोबिक डाइजेशन से होने वाले दैनिक बायोगैस उत्पादन को चित्र 3 में प्रस्तुत किया गया है। वसंत, ग्रीष्म, मानसून, शरद ऋतु, शुरुआती सर्दी, पूर्व सर्दियों के मौसम में बायोगैस का उत्पादन क्रमशः 20.67, 22.88, 21.79, 21.70, 19.49, 17.99 घन मीटर दर्ज किया गया। पूरे वर्ष में औसत परिवेश का तापमान 25–45 डिग्री सेल्सियस की सीमा में देखा गया, सर्दियों के मौसम में यह सीमा 6–12 डिग्री सेल्सियस के मध्य थी। इसी कारणवश, सर्दियों के दौरान, डाइजेस्टर के अंदर मेसोफिलिक तापमान को बनाए रखने के लिए सौर तापीय हीटर से उत्पन्न गर्म पानी को रसोई के अपशिष्ट पाउडर के साथ मिलाया गया था।



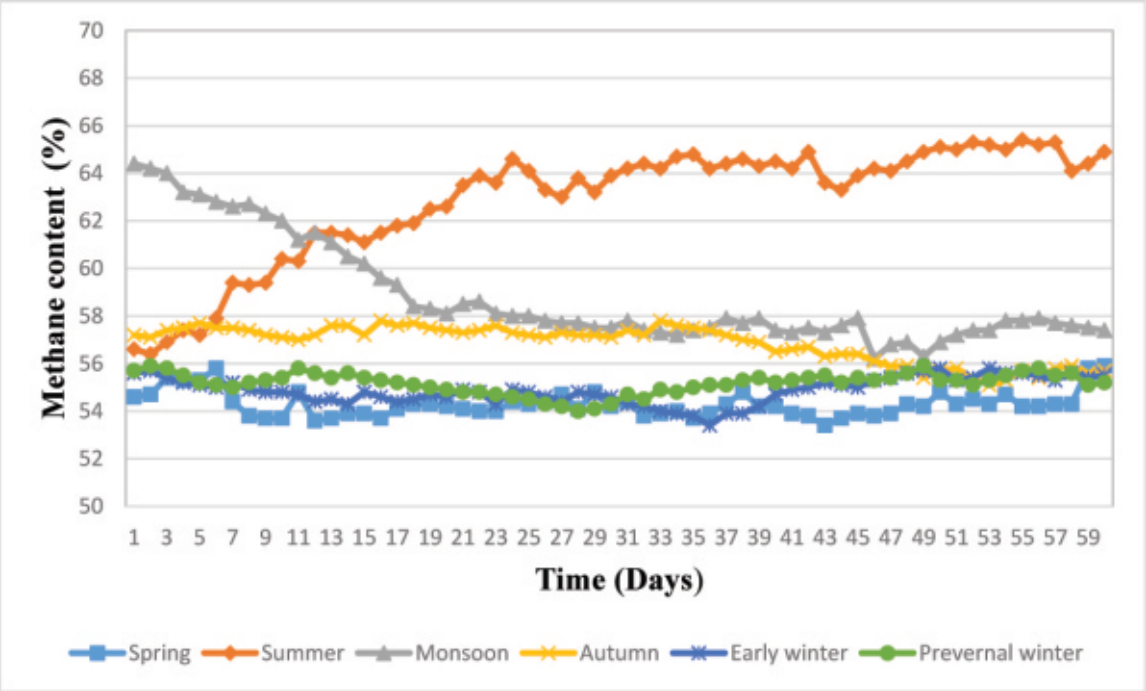
चित्र–2. सभी मौसमों के दौरान रसोई के अपशिष्ट के सब्सट्रेट में पोंगामिया के साथ डाइजेस्टर के पीएच में बदलाव



चित्र–3: सभी मौसमों में दैनिक बायोगैस उत्पादन

3.3 उत्पन्न बायोगैस में मीथेन और कार्बन डाइऑक्साइड की प्रतिशतता

सभी छह मौसमों के दौरान रसोई के अपशिष्ट से उत्पन्न बायोगैस में मीथेन और कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा को चित्र–4 में दर्शाया गया है। वसंत, ग्रीष्म, मानसून, शरद ऋतु, प्रारंभिक सर्दियों, पूर्व सर्दियों के मौसम के दौरान उत्पन्न बायोगैस में औसत मीथेन की प्रतिशतता क्रमशः 54.29%, 62.85%, 58.85%, 56.84% 54.87%, 55.17% दर्ज की गयी। इसके अतिरिक्त वसंत, ग्रीष्म, मानसून, शरद ऋतु, प्रारंभिक सर्दियों, पूर्व सर्दियों के मौसम के दौरान उत्पन्न बायोगैस में औसत कार्बन डाइऑक्साइड की प्रतिशतता क्रमशः 42.93%, 33.94%, 35.04%, 40.11%, 41.05%, 40.93% पाई गई। गर्मी के मौसम के दौरान, मीथेन की प्रतिशतता 56.4% से 65.4% तक दर्ज की गयी ।



चित्र–4: सभी मौसमों में बायोगैस में मीथेन की मात्रा में बदलाव

4. बायोगैस संयंत्र से प्राप्त स्लरी का जैविक खाद के रूप में अनुप्रयोग

बायोगैस प्लांट ऊर्जा के स्रोत के रूप में बायोगैस प्रदान करने के साथ–साथ अच्छी गुणवत्ता वाली जैविक खाद भी प्रदान करता है। इसमें नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम और मैंगनीज के साथ–साथ अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व भी होते हैं, जो खेत की फसल के बेहतर उत्पादन के लिए मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाता है। Wagaw, 2016 के द्वारा दिए गए शोध पत्र में बायोगैस प्लांट से प्राप्त स्लरी में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम की उपलब्धता का विश्लेषण किया गया है। वसंत, ग्रीष्म, मानसून, पतझड़, शुरुआती सर्दियों और पूर्व सर्दियों के दौरान प्राप्त स्लरी में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम की प्रतिशतता क्रमशः 2.30–2.64%, 0.67–0.91% और 0. 70–1.12% की सीमा में पाई गई।

5. निष्कर्ष

इस शोध पत्र में फलों और सब्जियों के अपशिष्ट पदार्थों (रसोई के अपशिष्ट) के एनारोबिक डाइजेशन पर किए गए वार्षिक अध्ययन से पता चला है कि पोंगामिया डी–ऑयल्ड केक को मिलाने से डाइजेस्टर (केवल रसोई के अपशिष्ट से अकेले चलने वाले डाइजेस्टर) के अम्लीय पीएच को स्वाभाविक रूप से संतुलित किया जा सकता है। पोंगामिया डी–ऑयल्ड केक को मिलाने से डाइजेस्टर के पीएच को वर्ष के सभी मौसमों के लिए 6.94–7.15 की सीमा में बनाए रखने में सफलता पायी गयी है। सभी मौसमों के लिए दैनिक बायोगैस का उत्पादन 17.11–20.67 घन मीटर की सीमा में दर्ज किया गया जिसमें मीथेन की मात्रा 54.87–62.85% के मध्य थी। बायोगैस प्लांट से प्राप्त स्लरी जैविक खाद के रूप में एक अतिरिक्त लाभ प्रदान करती है, जिसे जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए और मिट्टी के पुनर्नवीनीकरण हेतु प्रयोग किया जा सकता है।

आभार

लेखकगण इस रिसर्च कार्य के संचालन के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली से मिले विभिन्न प्रकार के सहयोग के लिए कृतज्ञतापूर्वक आभार व्यक्त करते हैं।

संदर्भ

1. Agrahari, R., Tiwari, G.N., 2013. The Production of Biogas Using Kitchen Waste. Int. J. Energy Sci. 3, 408. https://doi.org/10.14355/ijes.2013.0306.05

2. Bong, C.P.C., Lim, L.Y., Lee, C.T., Klemeš, J.J., Ho, C.S., Ho, W.S., 2018. The characterisation and treatment of food waste for improvement of biogas production during anaerobic digestion A review. J. Clean. Prod. 172, 1545-1558. https://doi.org/10.1016/j.jclepro.2017.10.199

3. Curry, N., Pillay, P., 2012. Biogas prediction and design of a food waste to energy system for the urban environment. Renew. Energy 41, 200-209. https://doi.org/10.1016/j.renene.2011.10.019

4. Demirel, B., Scherer, P., 2008. Production of methane from sugar beet silage without manure addition by a single-stage anaerobic digestion process. Biomass and Bioenergy 32, 203-209. https://doi.org/10.1016/j.biombioe.2007.09.011

5. Gallipoli, A., Braguglia, C.M., Gianico, A., Montecchio, D., Pagliaccia, P., 2020. Kitchen waste valorization through a mild-temperature pretreatment to enhance biogas production and fermentability: Kinetics study in mesophilic and thermophilic regimen. J. Environ. Sci. (China) 89, 167-179. https://doi.org/10.1016/j.jes.2019.10.016

6. Garcia-Peña, E.I., Parameswaran, P., Kang, D.W., Canul-Chan, M., Krajmalnik-Brown, R., 2011. Anaerobic digestion and co-digestion processes of vegetable and fruit residues: Process and microbial ecology. Bioresour. Technol. 102, 9447-9455. https://doi.org/10.1016/j.biortech.2011.07.068

7. Mirmohamadsadeghi, S., Karimi, K., Tabatabaei, M., Aghbashlo, M., 2019. Biogas production from food wastes: A review on recent developments and future perspectives, Bioresource Technology Reports. Elsevier Ltd. https://doi.org/10.1016/j.biteb.2019.100202

8. Srinuanpan, S., Cheirsilp, B., Kitcha, W., Prasertsan, P., 2017. Strategies to improve methane content in biogas by cultivation of oleaginous microalgae and the evaluation of fuel properties of the microalgal lipids. Renew. Energy 113, 1229-1241. https://doi.org/10.1016/ j.renene. 2017.06.108

9. Standard Methods for the Examination of Water and Wastewater. W.E.F., https//www.wef.org/resources/publications/books/StandardMethods/. (accessed July, 2020)

10. Voegeli, Y., Lohri, C., Kassenga°, G., Baier, U., Zurbrügg, C., 2009. Technical and Biological Performance of the Arti Compact Biogas Plant for Kitchen Waste - Case Study From Tanzania. Proc. Sardinia Margherita di Pula 5.

11. Wagaw, K., 2016. Characterization and Utilization of Bioslury from Anaerobic Digester for Fertilizer in Crop Production. J. Fertil. Pestic. 7. https://doi.org/10.4172/2471-2728.1000169

12. Xu, F., Li, Yangyang, Ge, X., Yang, L., Li, Yebo, 2018. Anaerobic digestion of food waste Challenges and opportunities. Bioresour. Technol. 247, 1047-1058. https://doi.org/10.1016/j.biortech.2017.09.020

13. Zhang, C., Xiao, G., Peng, L., Su, H., Tan, T., 2013. The anaerobic co-digestion of food waste and cattle manure. Bioresour. Technol. 129, 170-176. https://doi.org/10.1016/j.biortech.2012.10.138

ग्राम ऊर्जा स्वराज : स्थानीय ऊर्जा संसाधनों के माध्यम से गाँवों की ऊर्जा आवश्यकता की निर्बाध आपूर्ति का मॉडल

डॉ. वन्दित विजय[1], प्रो. रामचंद्र[2] एवं प्रो. पी.एम.वी. सुब्बाराव[3]

[1]आउटस्टेशन पोस्ट डॉक्टरल रिसर्च साइंटिस्ट, टीयू डेलफ्ट, नीदरलैण्ड
[2]ग्रामीण विकास एवं प्रौद्योगिकी केंद्र,
[3]यांत्रिक इंजीनियरी विभाग,
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली

प्रस्तावना

ग्रामीण क्षेत्रों पर हमारे देश की निर्भरता को इस तथ्य से समझा जा सकता है कि लगभग 70% जनसंख्या अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है और 50% से अधिक आबादी अपनी आजीविका के लिए कृषि गतिविधियों पर निर्भर है (''Census of India'', 2011) । देश के सही विकास के लिए यह जरूरी है कि ग्रामीण क्षेत्रों का विकास शहरी क्षेत्रों की तरह ही हो। हालाँकि, ऊर्जा की उपलब्धता जो एक राष्ट्र के विकास का प्रमुख चालक है, अक्सर ग्रामीण क्षेत्रों में इसका अभाव पाया जाता है। गांधीजी ने देश की आजादी के समय देश के समुचित विकास के लिए ग्राम स्वराज की कल्पना की थी कि आजादी के बाद हमारे गाँव वहां उपलब्ध संसाधनों से ही आत्मनिर्भर बन सके और वहां वह सभी चीज उपलब्ध हो जो शहरों में मिलती है (Gandhi, 1962)। परन्तु समय के साथ गावों मे मूलभूत सुविधाओं का अभाव बढ़ता गया और वहां की आर्थिक स्थिति खराब होती चली गई जिस कारण लोगों को गाँव से शहर की ओर पलायन करने के लिए मजबूर होना पड़ा।

भारत देश गांवों का देश है जहाँ पर नवीकरणीय ऊर्जा के ज्यादातर संसाधन मिलते है जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जैव ऊर्जा आदि। कृषि पर भारत की निर्भरता के कारण यहाँ लगभग हर साल 50 करोड़ टन जैविक अवशेष का उत्पादन होता है जिसमें से लगभग 15 करोड़ टन अधिशेष रह जाता है (MNRE, 2021)। इन जैविक संसाधनों का सीधा जुड़ाव गाँव में रह रही जनसंख्या से होता है। हमारा यह अध्ययन गाँवों में उपलब्ध होने वाले इन विभिन्न जैव संसाधनों पर आधारित है कि कैसे इनके उपयोग से हम गांवों की ऊर्जा आवश्यकता की पूर्ति कर सकते हैं। अपने अध्ययन के लिए हमने आई. आई. टी. दिल्ली एवं उत्तर प्रदेश के बुलंदशहर जिले के भुवन बहादुर ब्लॉक को चुना। आई.आई.टी. दिल्ली का परिसर लगभग 320 एकड़ का है जिसमे हजारों पेड़ लगे है और लगभग 10,000 लोग इसमें रहते है। परिसर में पेड़ों के पत्ते, घरों से तथा हॉस्टलों व कैंटीन से साग–सब्जियों के छिलके एवं अन्य जैविक पदार्थ उपलब्ध होते है। इसी परिसर में ग्रामीण प्रौद्योगिकी एवं विकास केंद्र के पास लगभग 7 एकड़ का एक ग्रामोदय परिसर भी है जिसमें ग्रामीण प्रौधोगिकी सम्बंधित अनुसन्धान एवं विकास किया जाता है जहाँ हमने अपने प्रयोग किये।

वर्तमान शोध कार्य में, बायोमास संसाधनों का उपयोग करके अपनी बिजली की जरूरतों के लिए ग्रामीण क्षेत्रों को आत्मनिर्भर बनाने की व्यवहार्यता का पता लगाया गया है क्योंकि हमारे देश की कृषि प्रकृति इन संसाधनों की विशाल उपलब्धता प्रदान करती है, जिसका अधिशेष ऊर्जा उत्पादन के लिए उपयोग में लिया जा सकता है। यह विचार महात्मा गाँधी द्वारा दी गई "ग्राम स्वराज" की अवधारणा से प्रेरित है और हमने इसके ऊर्जा भाग यानि "ग्राम ऊर्जा स्वराज" पर ध्यान केंद्रित किया है ।

इस अध्ययन मे पेड़ के बीजों के रूप में कुछ विशेष बायोमास संसाधनों की पहचान चयनित केस स्टडी में की गई, जिनका उपयोग ऊर्जा उत्पादन के लिए किया जा सकता है। पेड़ों की चार प्रजातियों की पहचान की गई थी, एकासिया निलोटिका (बबूल), एल्बिजिया लेबेक (सिरिस), ल्यूकेना ल्यूकोसेफला (सुबबूल) और प्रोसोपिस जूलीफ्लोरा (विलायती कीकर), और यह देखा गया कि वे व्यापक रूप से



चित्र–1: आई.आई.टी. दिल्ली में उपलब्ध स्थानीय संसाधनों के उपयोग से जैव ईंधन का उत्पादन और प्रयोगशाला को ऊर्जा आत्मनिर्भर बनाने के लिए उनका प्रयोग

बड़ी संख्या में देश भर में मौजूद हैं। साहित्यिक सर्वेक्षण में पाया गया कि उनके बीजों का कोई अन्य महत्वपूर्ण उपयोग नहीं है और पहले उन्हें कभी बायोगैस उत्पादन के लिए प्रयोग में नहीं लिया गया है। सभी प्रजातियों के बीज की 90 दिनों की प्रयोग अवधि में बायोगैस में औसतन मीथेन मात्रा 52% से ऊपर पाई गई। औसतन विशिष्ट बायोगैस उत्पादन, ए निलोटिका के लिए 0.409 घन मी./किग्रा. वी.एस., पी जूलीफ्लोरा के लिए 0.437 घन मी./किग्रा. वी.एस., एल लेबेक के लिए 0.429 घन मी./किग्रा. वी.एस. और एल ल्यूकोसेफला के लिए क्रमशः 0.408 घन मी./किग्रा. वी.एस. इस प्रकार, हैं (Vijay et al., 2020)। यह पाया गया कि उनकी बायोगैस उत्पादन क्षमता गोबर (0.288 घन मी./किग्रा. वी.एस.) की तुलना में बेहतर है और ये सभी बीज अच्छे वैकल्पिक फीडस्टॉक्स हो सकते हैं ।

इस अध्ययन में गैर–खाद्य पोंगामिया तेल का उपयोग करके बायोडीजल बनाया गया (Meher et al., 2004)। अध्ययन के चयनित क्षेत्र में पोंगामिया के पेड़ बड़ी संख्या में उपलब्ध हैं। सिंगल स्टेज बेस उत्प्रेरित ट्रांसएस्टेरीफिकेशन प्रक्रिया को अपनाया गया क्योंकि तेल का एसिड मूल्य कम था। यह विधि ग्रामीण क्षेत्रों के लिए सुरक्षित और उपयुक्त पाई गई क्योंकि इसमें खतरनाक अम्लीय पदार्थों का उपयोग नहीं होता है और उत्पादन की लागत कम होती है। शुद्ध बायोडीजल के घनत्व, चिपचिपापन, एसिड मूल्य और ऊष्मीय मान जैसे कुछ महत्वपूर्ण बुनियादी विशेषताओं का मूल्यांकन किया गया और मानक सीमा में पाया गया। बायोडीजल उत्पादन प्रयोगों का मुख्य उद्देश्य बायोगैस के साथ दोहरी ईंधन इंजन को चलाने के लिए बड़ी मात्रा में बायोडीजल बनाना था ।

डीजल इंजन ग्रामीण ऊर्जा प्रणाली का एक अभिन्न अंग है (Somashekhar et al., 2000)। जैव ईंधन यानी बायोगैस और बायोडीजल के उत्पादन के बाद उनकी परिवर्तित डीजल इंजन के माध्यम से स्टैंडअलोन वितरित इकाई के रूप में बिजली उत्पादन के लिए जांच की गई। इस प्रयोजन के लिए दो डीजल इंजनों को क्रमशः 100% बायोगैस इंजन और दोहरे ईंधन इंजन में परिवर्तित किया गया। इस अध्ययन में जिन इंजन प्रदर्शन मापदंडों का परीक्षण किया गया है वे इंजन की गति, ब्रेक पावर, ब्रेक विशिष्ट ईंधन खपत और ब्रेक थर्मल दक्षता हैं। डीजल + रॉ/एनरिच्ड बायोगैस, बायोडीजल +रॉ/एनरिच्ड बायोगैस के चार ईंधन संयोजनों पर दोहरे ईंधन इंजन को चलाया गया। 100% बायोगैस इंजन से 4.14 की अधिकतम पावर को विकसित किया जा सका और पाया कि मौलिक इंजन के बनस्पत परिवर्तित इंजन की पावर मे 45% की गिरावट है। ग्रामीण क्षेत्रों में एक वितरित इकाई के रूप में इंजन के संचालन को प्रदर्शित करने के लिए हमारी प्रयोगशाला का बिजली पैनल इंजन से जोड़ा गया और प्रयोगशाला के उपकरणों के अलग–अलग लोड का उपयोग इंजन के प्रदर्शन का परीक्षण करने के लिए किया गया। अपने अध्ययन में हमने पाया कि 100% बायोगैस इंजन ने 22.5% की कार्यक्षमता से बिजली का उत्पादन किया और दोहरे ईंधन इंजन ने विभिन्न ईंधन संयोजनों के साथ 20.25% की कार्यक्षमता से बिजली का उत्पादन किया। कुल मिलाकर आई. आई. टी. दिल्ली के कैंपस में उपलब्ध चुने हुए पेड़ों के बीजों से बायोगैस और बायोडीजल उत्पादन करके और इनका प्रयोग विभिन्न परिवर्तित इंजन में करके हमने अपनी प्रयोगशाला को ऊर्जा के लिए आत्मनिर्भर बनाया। इस प्रकार, हमारी प्रयोगशाला में सिम्युलेटेड ग्रामीण क्षेत्र की स्थितियों में इंजन रूपांतरण, प्रयोगात्मक रूप से बिजली उत्पादन के लिए एक उपयुक्त विकल्प के रूप में पाया गया जो अत्यधिक आंतरायिक और अविश्वसनीय ग्रिड आधारित बिजली पर निर्भरता को कम करने में मदद करेगा ।

निष्कर्ष

आई.आई.टी. दिल्ली में एक 7 एकड का ग्रामोदय परिसर है जिसमे ग्रामीण प्रौद्योगिकियों पर अनुसन्धान होता है। इनमें एक ग्रामीण ऊर्जा प्रयोगशाला भी है जिसमे विभिन्न जैविक पदार्थो से बायोगैस बनाना, बायोगैस से बिजली, बायोगैस को शोधित कर वाहन चलाना, परिसर में उपलब्ध अखाद्य तेलीय बीजों से बायोडीजल बनाकर उस से इंजन जनरेटर चलाना, बीजों से तेल निकलने के बाद जो खली होती है उससे बायोगैस आदि पर अनुसन्धान होता है। इस लैब में उपलब्ध बायोगैस और बायोडीजल से लैब की बिजली आवश्यकता पूरी होती है। बायोगैस को शोधित कर बायो सीएनजी बनाकर उससे एक कार चलाई जाती है। ग्रामोदय परिसर एक गाँव का प्रारूप है और आई.आई.टी. परिसर में पेड़ो के पत्तों, तेलीय बीजों, घरो के रसोई के कचरे से बायोगैस एवं बायोडीजल बनाकर लैब को बाहर की ऊर्जा से मुक्त किया गया और इसी तरह हम गाँव में वहां पर उपलब्ध गोबर, कृषि अवशेष, पशु संसाधनों से ऊर्जा स्वावलंबन प्राप्त कर सकते है। महात्मा गाँधी ने जो ग्राम स्वराज की कल्पना की थी और यह भी उसी दिशा में ग्राम ऊर्जा स्वराज का एक मॉडल है।

एक अध्ययन में यह पाया गया है कि देश के अधिकतर गाँवो में वहां पर उपलब्ध स्थानीय संसाधनों से गाँव में आवश्यक ऊर्जा जैसे खाना बनाने, बिजली, ट्रेक्टर चलाने आदि के काम में ली जा सकती है जो ऊर्जा स्वराज एवं पर्यावरण संरक्षण की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान होगा।

संदर्भ

1. Census of India [WWW Document], 2011. . Off. Regist. Gen. Census Comm. India. URL https://censusindia.gov.in/2011-common/censusdata2011.html (accessed 8.5.21).

2. Gandhi, M., 1962. Village Swaraj. Navjivan Publishing House.

3. Meher, L.C., Naik, S.N., Das, L.M., 2004. Methanolysis of Pongamia pinnata (karanja) oil for production of biodiesel. J. Sci. Ind. Res. (India). 63, 913918.

4. MNRE, 2021. Bioenergy Overview, Ministry of New and Renewable Energy, Government of India [WWW Document]. URL https://mnre.gov.in/bio-energy/current-status (accessed 5.4.21).

5. Somashekhar, H.I., Dasappa, S., Ravindranath, N.H., 2000. Rural bioenergy centres based on biomass gasifiers for decentralized power generation: case study of two villages in southern India. Energy Sustain. Dev. 4, 55-63. https://doi.org/10.1016/S0973-0826(08)60253-7

6. Vijay, V., Subbarao, P.M. V., Chandra, R., 2020. Identification of potential waste seeds of wildly growing tree species for the production of biogas. Environ. Sci. Pollut. Res. 27, 14515-14528. https://doi.org/10.1007/s11356-020-08012-y

क्यों इन तारों को उलझाते?
अनजाने ही प्राणों में क्यों
आ आ कर फिर जाते?

पल में रागों को झंकृत कर,
फिर विराग का अस्फुट स्वर भर,
मेरी लघु जीवन–वीणा पर
क्या यह अस्फुट गाते?

लय में मेरा चिरकरुणा–धन,
कम्पन में सपनों का स्पन्दन,
गीतों में भर चिर सुख चिर दुःख
कण कण में बिखराते!

मेरे शैशव के मधु में घुल,
मेरे यौवन के मद में ढुल,
मेरे आँसू स्मित में हिलमिल
मेरे क्यों न कहाते?

–सुश्री महादेवी वर्मा

कार्बोफुरान दूषित मिट्टी के उपचार के लिए संभावित उपकरण के रूप में राइजोस्फेरिक सूक्ष्मजीव– एक अवलोकन

मोहम्मद आमिर खान[1], डॉ. अभिषेक शर्मा[2], प्रो. सत्यवती शर्मा[1]

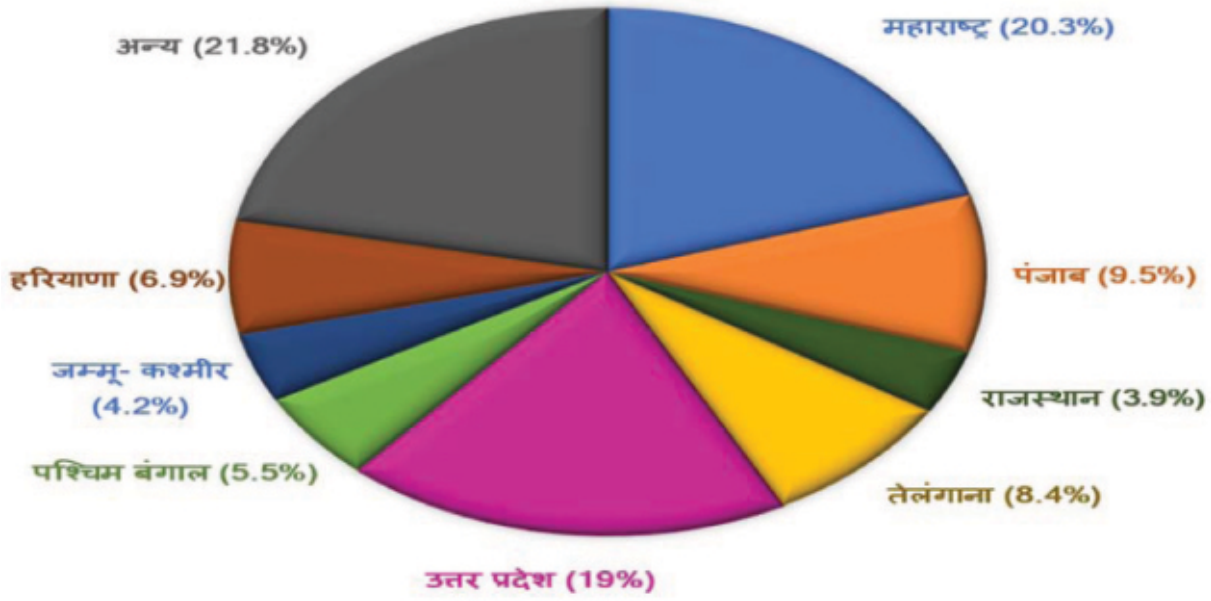
[1]ग्रामीण विकास और प्रौद्योगिकी केंद्र,
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली, हौज खास, दिल्ली–110016
[2] एमिटी फूड एंड एग्रीकल्चर फाउंडेशन, एमिटी यूनिवर्सिटी, नोएडा, यूपी–201313

सारांश

हमारे देश की विशाल आबादी की खाद्यपूर्ति के लिए कृषि में रासायनिक कीटनाशकों, उर्वरकों, संकर बीजों और आधुनिक सिंचाई पद्धतियों का उपयोग हो रहा है । भारतीय फसल प्रणाली में आधी से अधिक कृषि योग्य भूमि रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भर करती है, जिससे इन कीटनाशकों की मांग और खपत में वृद्धि होती है। कार्बोफुरान (2,3–डाईहाईड्रो –2,2–डाइमिथाइलबेनज़ोफुरान –7–यल मिथाइलकार्बामेट) कीटनाशक मिथाइल कार्बामेट समूह से संबंधित है जो बड़े पैमाने पर नेमाटीसाइड और कीटनाशक के रूप में उपयोग किया जाता है और भारत में सबसे अधिक खपत वाले कीटनाशकों में से एक है। यह मिट्टी में लम्बे समय तक रहता है, जिससे भूजल और सतही जल में इसका रिसाव होता है, जिससे मनुष्यों और अन्य जीवों में विभिन्न स्वास्थ्य सम्बन्धी खतरे पैदा होते हैं। इस कारण, मिट्टी और पानी से कार्बोफुरान को हटाना बहुत अनिवार्य है। कीटनाशकों को हटाने के लिए जैव उपचार तकनीकों का उपयोग उनके पर्यावरण के अनुकूल होने के कारण दुनिया भर में व्यापक रूप से स्वीकार किया जा रहा है। प्रस्तुत अध्ययन में जीवाणुओ (बैक्टीरिया) तथा कवकों (फंजाई) द्वारा कार्बोफुरान के जैव उपचार पर हुई प्रगति की समीक्षा की गयी है।

1. प्रस्तावना

लगातार बढ़ती आबादी ने आधुनिक विज्ञान–आधारित कृषि के उपयोग को गति दी है। देश की विशाल आबादी की खाद्यपूर्ति में सक्षम होने के लिए कृषि में रासायनिक कीटनाशकों, उर्वरकों, संकर बीजों और उन्नत सिंचाई पद्धतियों का उपयोग किया जा रहा है। जैसे–जैसे भूमि की उपलब्धता दिन–ब–दिन घटती जा रही है, खाद्यान्न की मांग को पूरा करने के लिए उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग आवश्यक हो गया है। कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय के पौध संरक्षण, संगरोध और भंडारण निदेशालय (DPPQ&S) की हालिया रिपोर्टों से पता चला है कि वर्ष 2018–19 में कुल रासायनिक कीटनाशकों की खपत लगभग 59670 मीट्रिक टन थी (1) । वर्ष 2018–19 के दौरान भारत भर में खेती के तहत कुल क्षेत्रफल ~ 167 मिलियन हेक्टेयर था। खेती वाले कुल क्षेत्र में से ~52 ~ 8 और ~ 19 प्रतिशत क्षेत्र में क्रमशः रासायनिक कीटनाशकों, जैव कीटनाशकों और रासायनिक एवं जैव कीटनाशकों का उपयोग और ~ 21 प्रतिशत क्षेत्र में किसी भी प्रकार के कीटनाशक का उपयोग नहीं हुआ था (2)। अतः भारतीय फसल प्रणालियों में, खेती योग्य भूमि का महत्वपूर्ण हिस्सा रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग के अधीन है, जिससे स्वदेशी और साथ ही आयातित रासायनिक कीटनाशकों की मांग और खपत में वृद्धि होती है। सभी भारतीय राज्यों में, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश प्रमुख कीटनाशक खपत वाले राज्य हैं, जहां वर्ष 2018–19 के दौरान क्रमशः 11746 मीट्रिक टन और 11049 मीट्रिक टन कीटनाशक का वार्षिक उपयोग हुआ। दोनों राज्य पूरे वर्ष में खपत किए गए कुल कीटनाशकों का 38 प्रतिशत से अधिक साझा करते हैं (चित्र 1)। अन्य प्रमुख कीटनाशक खपत वाले राज्य पंजाब, हरियाणा और तेलंगाना हैं, जो 2018–19 के दौरान खपत



चित्र–1: 2018–19 के दौरान भारत में कीटनाशकों की राज्य–वार खपत (1)

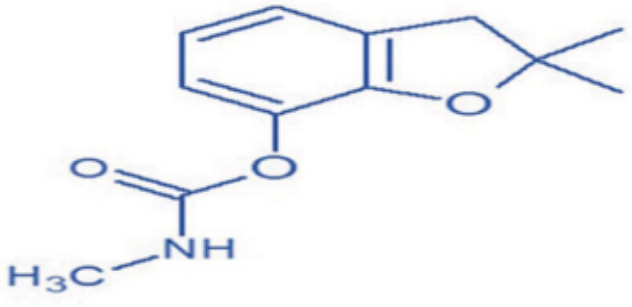
किए गए कुल कीटनाशकों का 24 प्रतिशत से अधिक हिस्सा साझा करते हैं (1)।

वर्ष 2018–2019 में, भारत में 33.51 मीट्रिक टन आयातित कार्बोफुरान की खपत हुई थी, जो कि प्रोफेन्सोस (38.04 मीट्रिक टन), कार्टैप हाइड्रोक्लोराइड (37.72 मीट्रिक टन) और इमिडाक्लोप्रिड (35.72 मीट्रिक टन) के बाद सबसे अधिक खपत वाले आयातित कीटनाशकों की सूची में है (3)। स्वदेशी कीटनाशकों के उपयोग में, वर्ष 2018–2019 के दौरान 198.83 मीट्रिक टन कार्बोफुरान की खपत हुई, जिसे भारत में शीर्ष दस अत्याधिक खपत वाले स्वदेशी रासायनिक कीटनाशकों के तहत वर्गीकृत किया गया है (4)। सीडीपीआर (California Department of Pesticide Regulation) की कीटनाशक उपयोग रिपोर्ट के अनुसार, 1999–2000 के दौरान कैलिफोर्निया में अकेले 130,000 पाउंड कार्बोफुरान का उपयोग किया गया था। अधिक और विविध उपयोग के परिणाम स्वरूप कार्बोफुरान को अक्सर आसपास के जल निकायों में पाया जाता है, जो संभावित स्वास्थ्य खतरों को उत्पन्न करता है (5)।

2. कार्बोफुरान–कुछ महत्वपूर्ण जानकारी

कार्बोफुरान ($C_{12}H_{15}N_{O3}$) एक क्रिस्टलीय सफेद ठोस है, जो pH 7 या उससे कम पर अत्याधिक स्थिर (stable) होता है, जिसमें pH बढ़ने के साथ स्थिरता कम होती है। यह कीटनाशकों के एन–मिथाइल कार्बामेट्स वर्ग से संबंधित है, जो एन–मिथाइल कार्बामिक एसिड (चित्र 2; तालिका 1) से प्राप्त एस्टर हैं। डब्ल्यू.एच.ओ. ने कार्बोफुरान को सक्रिय कीटनाशक सामग्री सूचकांक (Active Pesticide Ingredients Index) के 1B वर्ग के तहत अत्यधिक खतरनाक यौगिक के रूप में वर्गीकृत किया है (6) । कार्बोफुरान (2,3–डाईहाईड्रो –2,2–डाइमिथाइलबेनजोफुरान –7–यल मिथाइलकार्बामेट), पहली बार वर्ष 1969 में संयुक्त राज्य अमेरिका में पंजीकृत किया गया था। यह एक एन–मिथाइल कार्बामेट कीटनाशक है जिसका व्यापक रूप से उपयोग कृषि, वानिकी और बागवानी में नेमाटोड नियंत्रण के लिए किया जाता है (7) । यह मुख्य रूप से आलू, मक्का, कैनोला, स्ट्रॉबेरी, और अल्फाल्फा जैसी फसलों पर उपयोग किया

जाता है। कार्बोफुरान लक्षित प्रजातियों (target species) में मकई रूटवॉर्म, चिंच बग, बीटल, ग्रीन बग, एफिड्स, टिड्डे, लिगस बग, लीफहोपर, वीविल, नेमाटोड, वायरवर्म इत्यादि शामिल है।



चित्र–2: कार्बोफुरान की रासायनिक संरचना (स्रोतः USEPA, 2007)

कार्बोफुरान, हमारे शरीर में एसिटाइलकोलाइन एस्टरेज (AChE) एंजाइम के उत्पादन को रोकता है। यह इस प्रकार तंत्रिका कोशिका जंक्शनों और रिसेप्टर्स पर एसिटाइलकोलाइन के निर्माण को उत्तेजित करता है, जिससे तंत्रिकाओं में काफी मात्रा में आवेश बढ़ जाता है, जिसके परिणामस्वरूप आक्षेप (convulsions), कंपकंपी और अंततः मृत्यु हो जाती है (8,9) । कार्बोफुरान के लगातार एक्सपोजर पर पसीना, कमजोरी, धुंधली दृष्टि, पेट में दर्द, मतली (nausea) और उल्टी, मांसपेशियों में मरोड़, और श्वास के रुकने जैसी कई समस्यायें उत्पन्न हो सकती हैं। WHO द्वारा किये गए ''पीने के पानी में कार्बोफुरान'' नामक अध्ययन में, यह बताया गया था कि हवाई अनुप्रयोगों के बाद कार्बोफुरान के संपर्क में आने वाले मनुष्यों में कार्बोफुरान की मात्रा 0.7–2 मि. ग्रा./दिन पायी गयी (10)। तीव्र विषाक्तता परीक्षणों (acute toxicity tests) के संबंध में, चूहों में कार्बोफुरान के लिए मौखिक विषाक्तता (oral toxicity) में एलडी$_{50}$ (LD_{50}) मान 6–7.8 मि. ग्रा./कि. ग्रा. है। इसकी तुलना में, खरगोशों में कार्बोफुरान की तीव्र त्वचीय विषाक्तता (acute dermal toxicity) का LD_{50} मान 4403 मि. ग्रा./कि. ग्रा. त्वचा है (7) । एफ.एम.सी. द्वारा किये एक अध्ययन में मानव परीक्षण आयोजित किए गए थे जहां पुरुषों को कार्बोफुरान की तीन अलग–अलग खुराकें (0.05, 0.1, और 0.25 मि. ग्रा./कि. ग्रा.) दी गयी, जिसके लक्षण अलग–अलग समय अंतराल पर देखे गए थे । कार्बोफुरान से संबंधित लक्षण, 0.25 मि. ग्रा./कि. ग्रा. खुराक वाले पुरुषों में एक्सपोजर के 3 घंटे बाद पाए गए। लक्षणों में लार आना, मुंह सूखना, पेट में दर्द, मतली, उल्टी और उनींदापन शामिल थे । इसी तरह के लक्षण कार्बोफुरान के त्वचीय एक्सपोजर (4 मि. ग्रा./कि. ग्रा) पर 2–3.5 घंटे के बाद देखे गए थे (11)।

तालिका–1: कार्बोफुरान के भौतिक–रासायनिक गुण (स्रोतः रुबिन और एवर्ट, 2006)

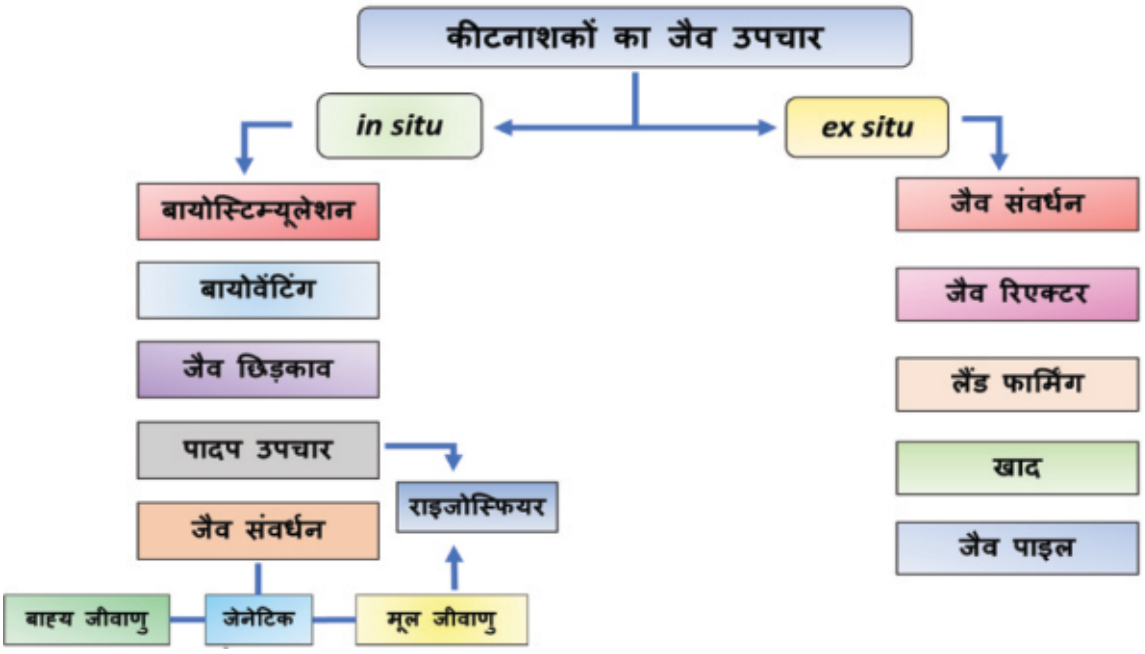
IUPAC नाम, आणविक सूत्र	2, 3–हाईहाईड्रो–2, 2–हाइमिथाइल बेनजोफुरान–7–यल मिथाइलकार्बोमेट, $C_{12}H_{15}NO_3$
आणविक वजन	221.26
आणविक गलनांक	150–152 °C
घुलनशीलता	पानी–351ppm एसीटोन–150ppm, एसिटोनाइट्राइल–140ppm, बेंजीन 40ppm
वाष्प दबाव	6 x 10^{-7}mm Hg (25°C)
हाइड्रोलिसिस हाफ लाइफ (दिन)	27.7 (pH 7, 25°C)
मृदा फोटोलिसिस हाफ लाइन (दिन)	138 (27°C, pH 5.7)

3. कार्बोफुरान उपचार तकनीकी विधियाँ

दुनिया भर में किसान कीटनाशकों की एक विस्तृत श्रृंखला का उपयोग करते हैं, जिससे इन रसायनों को हटाने के लिए सार्वभौमिक रूप से लागू किए जा सकने वाले एकल प्रोटोकॉल को विकसित करना बेहद मुश्किल हो जाता है। कीटनाशकों से दूषित मृदा तथा जलाशयों का उपचार उसी प्रदूषित स्थल (on site या in situ) और स्थल से दूर (off site या ex situ) प्रयोगशालाओं में, दोनों जगहों पर किया जाता है । विषाक्त हटाने के लिए नियोजित आयन एक्सचेंज रेजिन और बायोसॉर्बेंट्स पर्यावरणीय परिस्थितियों के लिए अतिसंवेदनशील होते हैं । कीटनाशकों के परिशोधन (decontamination) के लिए अकसर उपयोग की जाने वाली अन्य तकनीकों में फोटोडिग्रेडेशन, ओजोन के साथ रासायनिक ऑक्सीकरण, संयुक्त ओजोन और यूवी विकिरण (UV irradiation), फेंटन ऑक्सीकरण, जैविक उपचार, जमावट और अधिशोषण (coagulation, and adsorption) शामिल हैं (12) । चित्र 3 में कीटनाशकों के जैव उपचार की विभिन्न तकनीकों को दर्शाया गया है।

3.1 कार्बोफुरान क्षरण के लिए राइजोस्फेरिक सूक्ष्मजीव
(Rhizospheric microbes for removal of Carbofuran)

राइजोस्फीयर, पौधों की जड़ों के पास मिट्टी का क्षेत्र है जहां कई सूक्ष्मजीवों की जैव रासायनिक प्रक्रियाएं होती हैं, जिसमें दूषित पदार्थों का क्षरण (contaminant degradation) भी शामिल है। राइजोस्फेरिक क्षेत्र में रूट एक्सयूडेट्स एड म्यूसिलेज (root exudates and mucilage) के माध्यम से सूक्ष्मजीवों को कार्बनिक यौगिकों जैसे कि शर्करा, अल्कोहल और एसिड की एक विस्तृत श्रृंखला के रूप में पोषक तत्व प्राप्त होते हैं जिससे माइक्रोबियल गतिविधि और विविधता में वृद्धि होती है (13)। जैविक पदार्थों के सभी रूपों को बदलने की उनकी क्षमता के कारण सूक्ष्मजीवों ने जैव उपचार के क्षेत्र में अपना वर्चस्व कायम किया है। राइजोस्फेरिक क्षेत्र में गैर–स्पोरुलेटिंग (non-sporulating) ग्राम–नकारात्मक बेसिली, ग्राम–पॉजिटिव बेसिली और एरोबिक गैर–बीजाणु (non-spore forming) बनाने वाले जीवाणु मुख्य रूप से पाए जाते हैं।

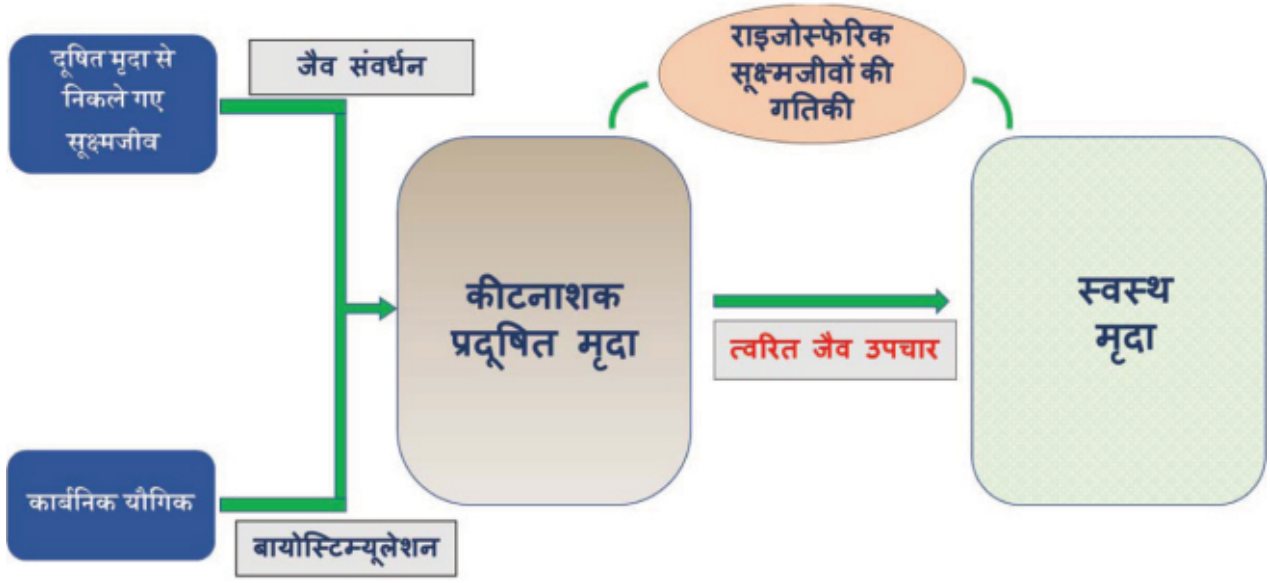


चित्र 3: कीटनाशकों के जैव उपचार के लिए प्रयोग होने वाली विभिन्न तकनीकें

राइजोस्फीयर, एरोबिक और, एनारोबिक सूक्ष्मजीवों के लिए, सूक्ष्म आवास प्रदान करता है। बढ़ते औद्योगीकरण की वजह से पौधे विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक और मानवजनित विशाक्त पदार्थों के संपर्क में आते हैं, जिनमें हैलोजेनेटेड एलीफैटिक्स, नाइट्रोएरोमैटिक्स, क्लोरोएरोमैटिक्स, कीटनाशक, पॉलीक्लोराइनेटेड बाइफिनाइल (पीसीबी), पॉलीसाइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन (पीएएच), फेथलेट एस्टर और नाइट्रोसामाइन शामिल हैं । राइजोस्फेरिक सूक्ष्मजीवों का उपयोग करके इन यौगिकों के क्षारण का व्यापक अध्ययन किया गया है। राइजोस्फीयर में मौजूद इन यौगिकों का क्षरण राइजोस्फीयर के तीन घटकों, यानी सूक्ष्मजीवों, पौधों और मिट्टी के बीच परस्पर क्रिया पर निर्भर करता है। चित्र 4 में जीवाणुओं द्वारा जैव उपचार का एक प्रवाह आरेख दर्शाया गया है। सशक्त प्रदूशक अपक्षयी सूक्ष्मजीवों (potential pollutant degrading microbes) के साथ–साथ, पौधे भी राइजोस्फेरिक क्षेत्र से प्रदूशक हटाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पादप कारकों में रूट एक्सयूडेट्स के रूप में विभिन्न कार्बनिक और अकार्बनिक रसायन, जड़ों की भौतिक आकृति विज्ञान (जो जीवाणुओं के लिए यौगिकों की जैव उपलब्धता को प्रभावित करता है), तथा पौधे की कोशिका और ग्रहण शक्ति (uptake mechanism) आदि शामिल हैं। विभिन्न सूक्ष्मजीवी प्रजातियों द्वारा कार्बोफुरान क्षरण की चर्चा नीचे की गई है।

3.2 कार्बोफुरान का जीवाणिवक क्षरण (Microbial degradation of Carbofuran)

राइजोस्फेरिक सूक्ष्मजीवों द्वारा कार्बोफुरान का उपचार कई रिपोर्टों में प्रकाशित किया गया है। एक ग्राम–नकारात्मक छड़ (gram negative rod shaped) के आकार का बर्कहोल्डरिया PCL3 (Burkholderia sp. PCL3) चावल की कार्बोफुरान– फाइटो रेमेडिएटेड राइजोस्फीयर मिट्टी से पृथक किया गया जिसने 200 मि. ग्रा./लीटर कार्बोफुरान का क्षरण न्यूनतम नमक मीडिया (minimal salt media) से 30 दिनों के भीतर किया (15)। पेंग, एट.अल. (2008) ने कार्बोफुरान दूशित कीचड़ से Paracoccus sp. YM3 नामक जीवाणु पृथक किया जिसने तीन दिनों के बाद कार्बोफुरान की मात्रा में 78% गिरावट दिखाई, जोकि सुक्रोस की उपस्थिति में 88% तक बढ़ गयी थी (16) । स्फिंगोमोनास पॉसीमोबिलिस (Sphingomonas paucimobilis) और



चित्र–4 : सूक्ष्मजीवों द्वारा जैव उपचार का एक प्रवाह आरेख

स्यूडोमोनास एरुगिनोसा (Pseudomonas aerugino) को विभिन्न कीटनाशकों से दूषित आलू की खेती वाली मिट्टी से पृथक किया गया (17)। एक नवीन कार्बोफुरान डिग्रेडिंग बैक्टीरिया, नोवोस्फिंगोबियम स्ट्रेन FND-3 (Novosphingobium sp. strain FND–3) ने 4 घंटे के भीतर 100 मि.ग्रा./लीटर कार्बोफुरान क्षरण किया था। इस जीवाणु ने कार्बोफुरान को कार्बोफुरान–7–फिनोल (carbofuran–7–phenol) में बदला, जोकि 2–हाइड्रॉक्सी–3– (3–मिथाइलप्रोपेन–2–ओल) बेंजीन–एन–मिथाइलकार्बोनेट (2–hydroxy–3–(3–methylpropan–2–ol) benzene-N-methylcarbamate) के उत्पाद में एक अंतिम उत्पाद में हाइड्रोलाइज्ड हो गया (18)। बानो और मुसर्रत (2004) ने एक स्यूडोमोनास (Pseudomonas sp.) जीवाणु को कृषि मिट्टी से पृथक किया, जिसने 100 मि.ग्रा./कि.ग्रा. कार्बोफुरान को 40 दिनों के भीतर 0.035 मि.ग्रा./दिन की गिरावट दर के साथ पूरी तरह से नष्ट कर दिया । इस जीवाणु की पौधे के विकास को बढ़ावा देने की क्षमता और जैव नियंत्रण गतिविधि की जाँच पीजीपीआर (PGPR–पौधे की वृद्धि को बढ़ावा देने वाले राइजोबैक्टीरिया) जैव रासायनिक परीक्षणों द्वारा की गई जिसमें आई.ए.ए. उत्पादन (Indole acetic acid), फॉस्फेट घुलनशीलता (Phosphate

तालिका–2: कार्बोफुरान के क्षरण के लिए उपयोग किए जाने वाले सूक्ष्मजीवो की सूची

क्र.सं.	सूक्ष्मजीव	कार्बोफुरान (मात्रा)	विवरण	संदर्भ
1.	स्यूडोमोनास sp. NJ-101	200 मि.ग्रा./लीटर	न्यूनतम नमक मीडिया	19
2.	स्यूडोमोनास पुटीडा	50 मि.ग्रा./लीटर	न्यूनतम नमक मीडिया	21
		50 मि.ग्रा./कि.ग्रा.	और मिट्टी	
3.	पेराकॉकस sp. Ym3	50 मि.ग्रा./लीटर	न्यूनतम नमक मीडिया	16
4.	स्यूडोमोनास एरुजीनोसा	200 मि.ग्रा./लीटर	न्यूनतम नमक मीडिया	17
5.	स्फिन्गोमोनास पौसिमोबिलिस	200 मि.ग्रा./लीटर	न्यूनतम नमक मीडिया	
6.	नोवोस्फिन्गोबियम sp.FND-3	100 मि.ग्रा./लीटर	न्यूनतम नमक मीडिया	18
7.	नोवोस्फिन्गोबियम sp. KN65.2	200 और 500 मि.ग्रा./लीटर	फॉस्फेट बफर सेलाइन	22
8.	क्लेबसिएल्ला निमोनिया ATCC13883T	20 और 30 मि. मोलर	न्यूनतम नमक मीडिया	23
9.	पिचिया अनोमला HQ-C-01 (yeast)	200 मि.ग्रा./लीटर	न्यूनतम नमक मीडिया	24
		50 मि.ग्रा./कि.ग्रा.	कृषि मिट्टी	
10.	बुर्खोल्डेरिआ सेपैसा PCL3	20 मि.ग्रा./कि.ग्रा.	जैव घोल बैच रिएक्टर	15
		5 मि.ग्रा./कि.ग्रा.	कृषि मिट्टी	
11.	ट्रैमेट्स वर्सिकलर	10 मि.ग्रा./कि.ग्रा.	धान की भूसी	25
12.	म्यूकोर रामन्नानियस	1 मि. मोलर	आलू डेक्सट्रोज मीडिया (PDB)	5
13.	क्रिसोबैक्टेरियम जुस्टी	200 मि.ग्रा./कि.ग्रा.	बयोरिएक्टर में डूबी मिट्टी	20

solubilization), साइडरोफोर उत्पादन (siderophore), आदि परीक्षणाों के लिए, सकारात्मक परिणम पाए (19)। कृश्णा और फिलिप (2011) ने विभिन्न प्रकार की मिट्टी के साथ मिट्टी के बायोरिएक्टर (soil bioreactor) में क्राइसोबैक्टीरियम जोस्टी, एमटीसीसी 9237 (Chryseobacterium joostei MTCC 9237) का उपयोग करके कार्बोफुरान क्षरण का अध्ययन एरोबिक और वैकल्पिक अवायवीय (facultative anaerobic) परिस्तिथियों के तहत रेतीले, चिकनी, लाल मिट्टी और खाद में किया। रेतीली, चिकनी, लाल और खाद मिट्टी में कार्बोफुरान अवक्रमण (degradation) क्षमता क्रमशः 86, 61, 59, और 47 प्रतिशत एरोबिक में और 92, 77, 75, और 63 प्रतिशत वैकल्पिक अवायवीय (anaerobic) परिस्थितियों में देखी गई। एरोबिक स्थितियों के तहत, कार्बोफुरान के दो अलग–अलग मेटाबोलाइट्स, जैसे कि 3–केटोकार्बोफुरान और 3–हाइड्रॉक्सी कार्बोफुरान पाए जबकि अवायवीय परिस्तिथियों में, मिट्टी के अंशों में केवल एक 3–केटोकार्बोफुरान पाया गया (20) । हाल के वर्षों में पृथक किए गए अन्य कार्बोफुरान अपक्षयी जीवाणुओं (carbofuran degrading microbes) को तालिका 2 में सूचीबद्ध) किया गया है ।

3.3 कार्बोफुरान का कवकीय क्षरण (Fungal degradation of Carbofuran)

मिट्टी में पाए जाने वाले सूक्ष्मजीवों में दूसरा सबसे प्रचुर समूह कवक (fungus) है। राइजोस्फेरिक कवक पोषक तत्व और पानी के ग्रहण (uptake) को बढ़ाकर, रोगजनक प्रतिरोध (pathogen resistance) में वृद्धि से और पर्यावरणीय तनावों के प्रति सहनशीलता से पौधे को लाभ पहुंचाती है। कई कवक प्रजातियाँ जैसे म्यूकोर रमैनियनस, पिचिया एनोमला, ट्रैमेट्स वर्सिकलर, फ्लेबिया sp. लेनजाइट्स बेटुलिनस को कार्बोफुरान क्षरण के लिए उपयोगी बताया गया है (5, 24, 25, 26)। दो अलग–अलग सफेद–सड़ांध कवक (white rot fungus) फ्लेबिया sp. और लेन्जाइट्स बेटुलिनस ने 20 दिनों की अवधि के बाद ~50% कार्बोफुरान (80 मि. ग्रा. /कि. ग्रा. मिट्टी) का क्षरण किया (26)। Co at. al (2007) द्वारा एक अध्ययन में म्यूकोर रमैनियनस नामक कवक का कार्बोफुरान के क्षरण के लिए परीक्षण किया गया था (5)। पिचिया एनोमला स्ट्रेन HQ-C-01 ने न्यूनतम मीडिया में कार्बोफुरान का कार्बन के एकमात्र स्रोत के रूप में उपयोग करके 48 घंटे के भीतर 95.2 प्रतिशत कार्बोफुरान (50 मि. ग्रा. /लीटर) का क्षरण किया, तथा GC/MS विश्लेषण के माध्यम से बेंजोफुरानॉल (benzofuranol) क्षरण मध्यवर्ती (degradation intermediate) के रूप में प्राप्त हुआ (24)।

4. निष्कर्ष

कार्बोफुरान का राइजोस्फेरिक माइक्रोबियल उपचार एक तेज, कम लागत वाली, पर्यावरण के अनुकूल तकनीक है, जिसे अन्य भौतिक–रासायनिक तकनीकों पर प्राथमिकता दी जाती है । क्षरण के तंत्र तथा पथों को समझने से दूषित वातावरण की प्रभावी सफाई के बारे में अधिक जानकारी मिलेगी। दूषित स्थलों पर अतिरिक्त कार्बन स्रोतों से माइक्रोबियल गतिविधि बढ़ जाती है, जिससे कार्बोफुरान क्षरण दर बढ़ जाती है। दूषित मिट्टी और जल प्रणालियों से कार्बोफुरान हटाने के लिए विभिन्न कार्बन स्रोतों का पता लगाया जा सकता है। इसके अलावा, माइक्रोबियल फॉर्मूलेशन जीवाणुओं को आश्रय तथा पोषण के लिए एक निष्क्रिय सतह प्रदान करती हैं तथा अधिक विस्तारित भंडारण अवधि में उनकी जीवन क्षमता (viability) सुनिश्चित करती हैं। माइक्रोबियल फॉर्मूलेशन के विकास के लिए अवयवों का चुनाव बहुत महत्वपूर्ण है। हालाँकि, इन जीवाणुओं की व्यावसायिक रूप से उपलब्ध और प्रभावी माइक्रोबियल फॉर्मूलेशन बनाना एक चुनौती है, जो पर्यावरण में दूषित पदार्थों के लिए एक प्रभावी बायोरेमेडिएशन प्रक्रिया को प्रगति की ओर ले जाएगा।

संदर्भ

1. Government of India (2019a) Directorate of plant protection quarantine and storage Statistical database: Consumption of chemical pesticides in various states/UTs during 2014-15 to 2018-19 http://ppqs.gov.in/sites/default/files/statewise_consumption_chempesticides.xls

2. Government of India (2019b) Directorate of plant protection quarantine and storage Statistical database: Area under cultivation and under use of chemical & bio- pesticides during 2014-15 to 2018-19 http://ppqs.gov.in/sites/default/files/area_under_cultivationpesticides_0.xls

3. Government of India (2019c) Directorate of plant protection quarantine and storage Statistical database: Pesticide wise consumption of imported pesticides during 2014-15 to 2018-19 http://ppqs.gov.in/sites/default/files/pesticidewise_consumptionimported_0.xls

4. Government of India (2019d) Directorate of plant protection quarantine and storage Statistical database: Pesticide wise consumption of indigenous pesticides during 2014-15 to 2018-19 http://ppqs.gov.in/sites/default/files/pesticidewise_consumptionindig_0.xls

5. Seo J, Jeon J, Kim S D, Kang S, Han J, and Hur H G (2007) Fungal biodegradation of carbofuran and carbofuran phenol by the fungus *Mucorramannianus*: identification of metabolites. Water Sci Technol, 55(1-2):163

6. WHO (2010) The WHO recommended classification of pesticides by hazard and guidelines to classification. ISBN: 978.92.4.154796.3 https://apps.who.int/iris/bitstream/handle/10665/44271/9789241547963_eng.pdf?sequence=1&isAllowed=y

7. USEPA (2007) Reregistration Eligibility Decision for Carbofuran http://www epagov/opp00001/methods/atmpmethods/QC-23-01 pdf

8. Ecobischon D J (1993) Toxic effects of pesticides In: Amdur MO, Doull J, Klaasen CD (eds) Casarett and Doull's toxicology: the basic sciences of poisons. Macmillan Press New York, 4:565–589

9. Hayes W (2001) Principles and methods of toxicology Taylor and Francis, London 4:587–591

10. WHO (2004) Carbofuran in drinking water: Background document for development of WHO Guidelines for Drinking-water Quality (No. WHO/SDE/WSH/03.04/81) https://www.who.int/water_sanitation_health/dwq/chemicals/carbofuran.pdf

11. Rubin A L and S Evert (2006) Risk characterization document- Carbofuran Medical Toxicology Branch Department of Pesticide Regulation California Environmental Protection Agency:13

12. Gupta V K, Ali I, and Saini V K (2006) Adsorption of 2, 4-D and carbofuran pesticides using fertilizer and steel industry wastes. J. Colloid Interface Sci, 299(2):556-563

13. Hrynkiewicz K and Baum C (2012) The potential of rhizosphere microorganisms to promote the plant growth in disturbed soils. In Environmental protection strategies for sustainable development, Springer Dordrecht: 35-64

14. Plangklang P and Reungsang A (2012) Isolation and characterisation of a carbofuran degrading *Burkholderia* sp. PCL3 from carbofuran-phytoremediated rhizosphere soil. Chem Ecol, 28(3):253-266

15. Peng X, Zhang J S, Li Y Y, Li W, Xu G M, and Yan Y C (2008) Biodegradation of insecticide carbofuran by *Paracoccus* sp. YM3. J Env Sci Heal B, 43(7):588-594

16. Castellanos Rozo J, Sánchez Nieves J, Uribe Vélez D, Moreno Chacón L, and Melgarejo Muñoz L M (2013) Characterization of Carbofuran degrading bacteria obtained from potato cultivated soils with different pesticide application records. Rev Fac Nac Agron Medellin , 66(1):6899-6908

17. Yan Q X, Hong Q, Han P, Dong X J, Shen Y J, and Li S P (2007) Isolation and characterization of a

Carbofuran-degrading strain *Novosphingobium* sp. FND-3. FEMS Microbiol Lett, 271(2):207-213

18. Bano N and Musarrat J (2004) Characterization of a novel carbofuran degrading *Pseudomonas* sp. with collateral biocontrol and plant growth promoting potential. FEMS Microbiol Lett, 231(1):13-17

19. Krishna K R and Philip L (2011) Bioremediation of single and mixture of pesticide-contaminated soils by mixed pesticide-enriched cultures. Appl Biochem Biotechnol, 164(8):1257-1277

20. Gong T, Xu X, Dang Y, Kong A, Wu Y, Liang P, and Yang C (2018) An engineered *Pseudomonas putida* can simultaneously degrade organophosphates, pyrethroids and carbamates. Sci Total Environ, 628:1258-1265

21. Nguyen T P O, Helbling D E, Bers K, Fida T T, Wattiez R, Kohler H P E, and De Mot R (2014) Genetic and metabolic analysis of the carbofuran catabolic pathway in *Novosphingobium* sp. KN65.2. Appl Microbiol Biot 98(19): 8235-8252

22. Kadakol J C, Kamanavalli C M, and Shouche Y (2011) Biodegradation of Carbofuran phenol by free and immobilized cells of *Klebsiellapneumoniae* ATCC13883T. World J Microb Biot, 27(1):25-29

23. Yang L, Chen S, Hu M, Hao W, Geng P, and Zhang Y (2011) Biodegradation of Carbofuran by *Pichia anomala* strain HQ-C-01 and its application for bioremediation of contaminated soils. Biol Fert Soils, 47(8):917

24. Ruiz-Hidalgo K, Chin-Pampillo J S, Masís-Mora M, Carazo E, and Rodríguez-Rodríguez C E (2014) Degradation of carbofuran by Trametes versicolor in rice husk as a potential lignocellulosic substrate for biomixtures: from mineralization to toxicity reduction. Process biochem, 9(12):2266-2271

25. Wang X, Li Z, Yao M, Bao J, and Zhang H (2019) Degradation of carbofuran in contaminated soil by plant-microorganism combined technology. J Serb Chem Soc, (00):52-52

हमारे देश और समाज के माथे पर एक कलंक है—अस्पृश्यता। हिन्दू समाज के धर्म राष्ट्र के करोड़ों हिन्दू बन्धु इससे अभिशप्त हैं जब तक हम ऐसे बनाए हुए हैं, तब तक हमारे शत्रु हमें परस्पर लड़वाकर, विभाजित करके सफल होते रहेंगे। इस घातक बुराई को हमें त्यागना ही होगा।

— वीर सावरकर

औषधीय पौधों (*Centella asiatica*) के उन्नत उत्पादन और खेत की मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार के लिए जीवामृता का अनुप्रयोग : (एक क्षेत्रीय अध्ययन)

दुराइवाडीवेल, पी, भानी कोंगखम, प्रो. हरिप्रसाद. पी. एवं प्रो. संतोष सत्या
ग्रामीण विकास एवं प्रौद्योगिकी केंद्र
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली
ई–मेल: phari@iitd.ac.in

सारांश

वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य क्षेत्रीय परिस्थितियों में एक औषधीय पौधा सेंटेला एशियाटिक (Centella asiatica) की उत्पादकता और उत्पादन में सुधार करने के लिए एक माइक्रोबियल बायोडायनामिक पारंपरिक तरल फारमुलेशन, जीवामृता (JA) का उपयोग करना है। इस फॉर्मूलेशन के प्रयोग को कर्नाटक के मंड्या जिले के बिमनहल्ली गांव में एक किसान द्वारा सेंटेला एशियाटिक (Centella asiatica) के जैविक उत्पादन के साथ एकीकृत किया गया था। जैविक प्रेक्टिस में फार्मयार्ड खाद (2 टन/एकड़) के साथ–साथ, 8वें दिन प्राप्त जीवामृता का पतला तरल (1:100 dilution) का हर 15 दिन के अन्तराल पर ड्रिप सिंचाई *(root drench)* और पर्ण स्प्रे का अनुप्रयोग शामिल हैं। JA उपयोग द्वारा उपज में काफी वृद्धि हुई। JA उपचारित प्लाट में 120kg (सूखा वजन) प्रति एकड़ प्राप्त हुआ जबकि कन्ट्रोल प्लाट में यह मात्रा केवल 102 kg (सूखा वजन) प्रति एकड़ थी। उपज में वृद्धि पौधों के बढ़े हुए पत्ती क्षेत्र द्वारा भी स्पष्ट था। Control भूखंड में उगाए गए पौधों का औसत पत्ती क्षेत्र 12.024 सेमी^{2} था, जबकि JA उपचारित भूखंड में उगाए गए पौधों के लिए यह 16.796 सेमी^{2} था। इसके अलावा, चूंकि औषधीय पौधों का सीधा बाजार नहीं है, इसलिए हमने किसान को एक स्टार्ट–अप ''कवन बायोसॉल्यूशंस'' की मदद से बाजार (ऑनलाइन और ऑफलाइन) से जोड़ने की कोशिश की। पत्तियों को नियमित उपयोग के लिए पाउडर और बिट्स में संसाधित किया गया था। उत्पाद को 100 ग्राम पैक में डिजाइन किया गया था और 100 रुपये प्रति पैकेट की दर से बेचा गया था। भविष्य में, हम किसानों के साथ औषधीय पौधों की जैविक खेती के लिए JA के उपयोग का विस्तार करने की योजना बना रहे हैं और उन्हें स्थानीय और वैश्विक स्तर पर बेहतर बाजार उपलब्ध कराने की सम्भावना पर विचार कर रहे हैं।

1. प्रस्तावना

जीवामृता एक माइक्रोबियल बायोडायनामिक तरल फॉर्मुलेशन है जो स्थानीय रूप से उपलब्ध उत्पादों जैसे देशी गाय के गोबर, गाय के मूत्र, गुड़, बेसन, पानी और स्थानीय मिट्टी का उपयोग करके तैयार किया जाता है। तैयार किए गए तरल फॉर्मूलेशन को नियमित stirring पैटर्न के साथ ऊष्मायन किया जाता है। इसका उपयोग कई दशकों से मुख्य रूप से दक्षिणी भारत के किसानों जैसे कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु द्वारा अपने लाभकारी गुणों के लिए या अन्य जैविक प्रथाओं के संयोजन में किया जाता है। JA शब्द को पहली बार पदमश्री सुभाष पालेकर ने अपनी कार्यशाला ''फिलॉस्फी एंड टेक्नोलॉजी ऑफ जीरो बजट नेचुरल फार्मिंग'' में प्रस्तुत किया था। JA पर किये गये पहले के अध्ययनों ने (Gore and Sreenivasa, 2011) JA में लाभकारी बैक्टीरिया, कवक और एक्टिनोमाइसेट्स की उपस्थिति की सूचना दी। इसके अलावा, क्षेत्र में JA के उपयोग से मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करने के लिए (Manjunatha et al- 2009-Vaish et al- 2020), पौधों की वृद्धि (Kumbar and Devakumar-2016) और फसल की उपज बढ़ाने के लिये (Amareswari and Sujathamma- 2014) रिपोर्ट किया गया था।

हमारे पहले के अध्ययनों में हमने JA और इसके optimised ऊष्मायन अवधि को वैज्ञानिक रूप से सिद्ध किया है। हमने

पौधों के विकास मापदंडों (अप्रकाशित) पर JA प्रयोग के प्रभाव को निर्धारित करने के लिए प्रयोग (लैब स्केल) भी किए हैं। प्रयोगों के परिणाम किसानों के साथ साझा किए गए और उनके कृषि प्रेक्टिस में JA को शामिल करने के लिए प्रोत्साहित किया गया। इस अध्ययन का उद्देश्य उन सकारात्मक परिणामों (प्रयोगशाला स्तर) की प्रतिकृति का आंकलन करना है जो हमें बड़े पैमाने पर क्षेत्रीय प्रयोग में लागू करने पर मिले थे। इसके लिए हमने चयनित किसान के साथ बातचीत की और उसे हमारी JA तैयार करने की प्रक्रिया, इसे लेने का इष्टतम दिवस, खेत में प्रयोग/उपयोग के तरीकों का पालन करने के लिए राजी किया और उसे एक कंट्रोल प्लाट भी बनाए रखने के लिए कहा। सेंटेला एशियाटिक औषधीय पौधे (Centella asiatica) को चुना गया क्योंकि किसान पहले से ही रासायनिक विधि का उपयोग करके अपने क्षेत्र में इस एक अकेले पौधे की खेती कर रहा था और उपज को 120 रुपये / kg (सूखे वजन) पर विभिन्न हर्बल कंपनियों को बेच रहा था।

सेंटेला एशियाटिका (Centella asiatica), (गोटू कोला, कोडावन, पेनीवॉर्ट), एक प्रीनेरियल हर्बेसस पौधा है जो अपियासी (Apiaceae) परिवार का है। यह आमतौर पर आयुर्वेदिक औषधियों में उपयोग किया जाता है। इसके अलावा, यूरोपीय देशों में इसकी मांग इसके चिकित्सीय गुणों के कारण बढ़ रही है। यह इसके एंटीऑक्सिडेंट, घाव भरने, न्यूरोप्रोटेक्टिव, anti-inflammatory, anti-cancer, anti-ulcer गुणों के लिए रिपोर्ट किया गया है (Roy et al-2013)। इस प्रयोग के माध्यम से हमने सफलतापूर्वक दिखाया है कि JA उपयोग का औषधीय पौधों की वृद्धि और उपज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। साथ ही, इस मामले में किसान को बाजार से जोड़ना सफल रहा। इसके अलावा, जैसा कि हमारे प्रयोग किसी भी रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के बिना किए गए थे, JA उपयोग इष्टतम उत्पादन के साथ स्थायी कृषि को बढ़ावा देता है।

2.0 सामग्री और विधि

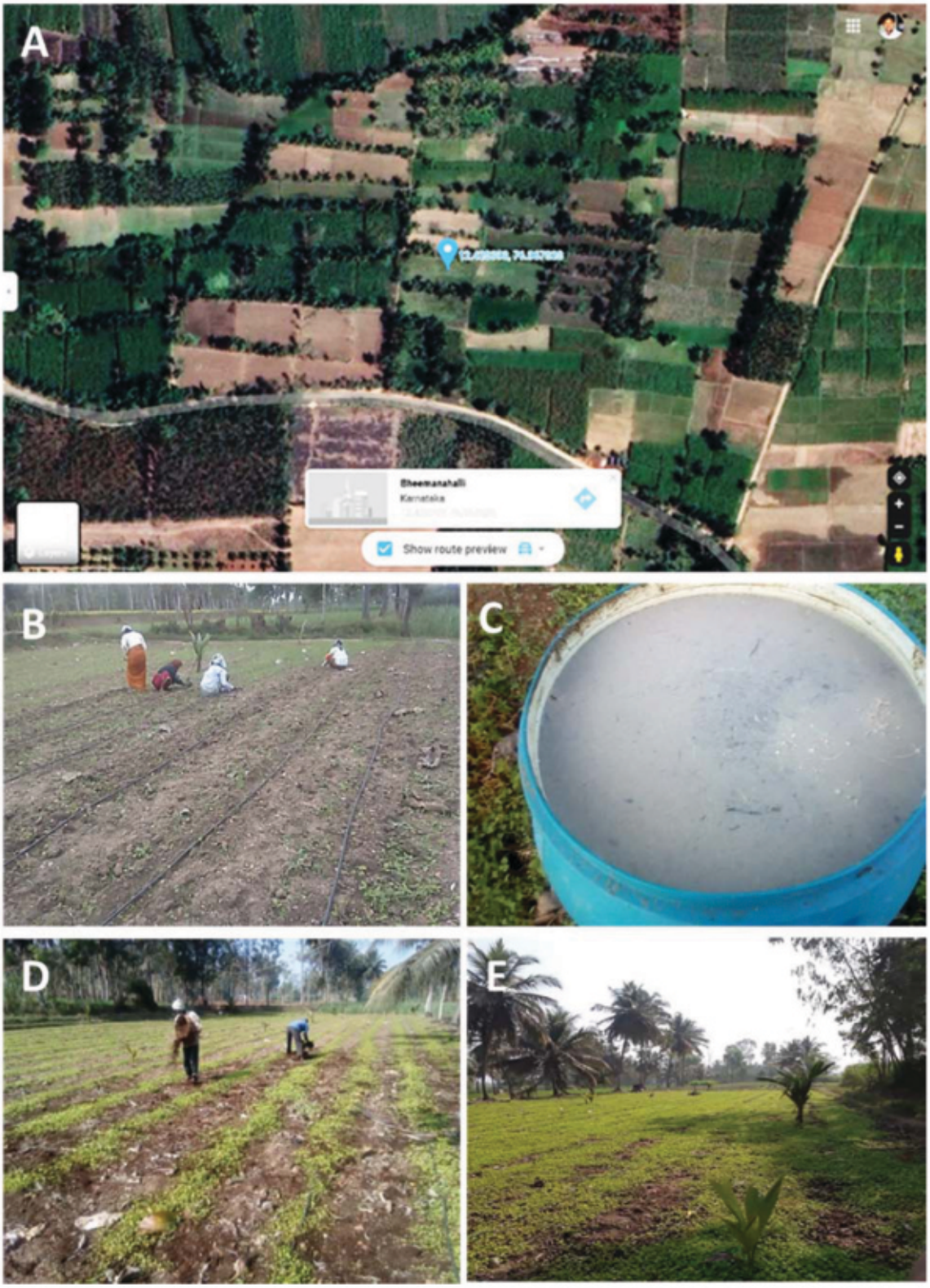
इन सबका विवरण चित्र–1 तथा चित्र–2 में दर्शाया गया है।

2.1 क्षेत्र का चयन

JA से सम्बन्धित प्रयोग भिमनहल्ली, मंड्या जिले, कर्नाटक में स्थित किसान के खेत में किए गए थे। क्षेत्र का जीपीएस निर्देशांक 12.428393,76.967828 है। इस खेत का मालिक श्री बी.एस. रामचंद्रिया किसान पहले से ही रासायनिक विधि का उपयोग करके सेंटेला एशियाटिक (Centella asiatic) की खेती कर रहा था। हमने उसके साथ संवाद किया और उसे रसायनों के बिना एक ही फसल की खेती करने के लिए राजी किया लेकिन केवल JA और फार्मयार्ड खाद (FYM) के प्रयोग के साथ। इसके अलावा, खेत की मिट्टी के अवयव/गुणों को समझने के लिए, हमने स्थानीय मिट्टी परीक्षण केंद्र (मांड्या, कर्नाटक) को खेत की मिट्टी का नमूना भी दिया है। प्रयोगात्मक प्लाट का आकार कंट्रोल प्रयोग लिए 0.5 एकड़ और JA उपचारित प्रयोगों के लिए 2 एकड़ था।

2.2 जीवामृता तैयार करना

जीवामृता को तैयार करने के लिए एक बड़े कंटेनर (drum) में गाय के गोबर (5 किलो, गीला वजन), गाय के मूत्र (5 किलो), पाउडर गुड़ (1 किलो), बेसन (1 किलो) और मुट्ठी भर मिट्टी (500 ग्राम) डाल कर, फिर इसमें 100 लीटर पानी मिलाकर तैयार किया गया था। ये सभी सामग्री लकड़ी की छड़ी का उपयोग करके अच्छी तरह से मिलायी गयी। कंटेनर का मुंह जूट बैग के कपड़े की दो परतों के साथ कवर किया गया था। JA के इस प्रकार तैयार मिश्रण को स्थानीय वातावरण में (दिन का तापमान अधिकतम 32°C और रात का तापमान कम से कम 26°C) 8 दिनों के लिए ऊष्मायन करने के लिये रखा गया था। ऊष्मायन अवधि के दौरान, इस मिश्रण को 30 बार दक्षिणावर्त और 30 बार एंटीक्लॉकवाइज, दिन में दो बार 12 घंटे के अंतराल पर लकड़ी की छड़ी द्वारा हिलाकर ठीक से मिलाया गया था। प्रयोगात्मक अवधि के दौरान प्रत्येक प्रयोग के लिए JA को नए सिरे से तैयार किया गया था।



चित्र–1: A. फील्ड जीपीएस निर्देशांकः 12.428393, 76.967828 B. फील्ड तैयारी, C. जीवामृता नमूना, D. फार्मयार्ड खाद का प्रयोग, E. खेत में परिपक्व सेंटेला एशियाटिका



चित्र–2: **A.** खेत से सेंटेला एशियाटिक की कटाई **B.** खेत से कटाई पर सेंटेला एशियाटिक का प्रसंस्करण **C.** छाया में सूखना **D.** हर्बल चाय का उपयोग करने के लिए पत्ती के टुकड़े **E-oral** रूप में और टोपोलॉजिकल अनुप्रयोगों के लिए पत्तियों का बारीक पाउडर **F.** ऑफलाइन/ऑनलाइन बिक्री के उद्देश्य के लिए पैक्ड सेंटेला एशियाटिका **G.** स्थानीय स्टोर के बाहर प्रदर्शित बैनर जहां सेंटेला एशियाटिका बेचा जाता है, कवन बायोसोल्यूशन का एक आउटलेट, **H.** इन उत्पादों को ऑनलाइन बेचने के लिए उत्पाद डिजाइन

2.3 खेत की तैयारी और पौध रोपण

प्रायोगिक भूखंड को ट्रैक्टर का उपयोग करके गहरी जुताई की गई थी और लेवलर का उपयोग करके समतल किया गया था। प्रयोगात्मक अवधि के दौरान FYM को 2 टन/एकड़ की दर से खेत की मिट्टी में मिलाया गया था। औषधीय पौधे पड़ोसी भूखंडों से एकत्र किए गए थे। पौध रोपण में, पौधों के बीच 15 से.मी. की दूरी और दो पंक्तियों के बीच 75 सें.मी. की दूरी रखी गयी। इस प्रकार लगभग 30000 पौधे/एकड़ की दर से लगाए गए थे। दो दिन के बाद ड्रिप सिंचाई विधि से एक बार पौधों को पानी दिया गया। निराई भी 20 दिनों के अंतराल पर मैन्युअल तरीके से की गई थी।

2.4 जीवामृता को प्रयोग करना

JA में पानी (1:100 अनुपात) मिलाकर प्रयोगात्मक खेत में प्रयोग किया गया। यह छिड़काव प्रत्येक 15 दिन के अन्तराल पर किया गया। JA का प्रयोग दो तरीके –(i) foliar spray तथा (ii) drip irrigation से किया गया। JA के प्रयोग के साथ FYM (2 टन/एकड़) भी खेत में डाला गया। कंट्रोल प्लाट (0.5 एकड़) में केवल FYM का प्रयोग किया गया। इसके अलावा प्रयोगात्मक प्लाट में कोई भी रासायनिक उर्वरक/कीटनाशक नहीं डाला गया, केवल FYM के साथ JA का निर्धारित विधि से स्प्रे किया गया।

2.5 फसल कटाई और पौधा बायोमास प्रसंस्करण

रोपण के 3 महीने बाद पहली फसल कटाई की गई और उपज विश्लेषण के लिए केवल पहली फसल पर विचार किया गया था। पेटीओल के साथ पत्तियों को मैन्युअल रूप से काटा गया और नल के पानी के नीचे धोया गया। पत्ते एक कपड़े पर फैले हुए थे और 7–8 दिनों के लिए छाया में सुखाया गया। पूरी तरह से सूखे पत्तों को एयरटाइट पॉलीथीन बैग में पैक किया गया था और आगे की प्रक्रिया के लिए संग्रहीत किया गया था।

2.6 उपज विश्लेषण

उपज विश्लेषण के लिए दो मापदंडों पर विचार किया गया था–पत्ती क्षेत्र और कुल उपज (सूखा वजन किलो/एकड़)। पत्ती क्षेत्र की गणना के लिए, पौधे से पत्ती के नमूने यादृच्छिक (random) तरीके से एकत्र किए गए थे और सफेद पृष्ठभूमि पर रख कर छवि (image) को लिया गया था। पत्ती क्षेत्र को तब Image के आधार पर सॉफ्टवेयर (https://imagej-nih-gov/ij/download-html) का उपयोग करके मापा गया था। सूखे पौधों का वजन तराजू द्वारा लिया गया था। कुल उपज को सूखे वजन किलो प्रति एकड़ के रूप में दर्शाया गया था।

2.7 प्रयोगात्मक फार्म को बाजार से जोड़ना

औषधीय पौधों की बिक्री के लिए सीधा बाजार उपलब्ध नहीं है, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, एग्रोपोड्स की बिक्री को आसान बनाने के लिए, हमने एक स्टार्टअप ''कवन बायोसॉल्यूशंस'', (पंजीकरण संख्या, RJR&F1077& 2018&19% GST No- 29AAUFK5061F12X) बनाकर निम्नलिखित दो संभावित समाधानों को प्रस्तुत किया:

(अ) ऑनलाइन बिक्री : किसानों को बुनियादी जानकारी प्रदान करके, उत्पाद को पत्ती पाउडर के रूप में संसाधित करके, शहद के साथ सेवन करने के लिए, फेस पैक, हेयर पैक और लीफ बिट्स के रूप में, ग्रीन टी के रूप में उत्पाद डिजाइन करना और उनके उत्पाद को ऑनलाइन बेचना ।

(ब) ऑफलाइन बिक्री : किसानों को कवन बायोसॉल्यूशंस, (पता–नं 481 डी सुब्याह रोड, मैसूर, पिन कोड 570004 कर्नाटक) के आयुर्वेदिक और हर्बल स्टोर से जोड़कर ऑफलाइन बिक्री।

3.0 परिणाम और विवेचन

FYM के साथ जीवामृता प्रयोग करने से सेंटेला एशियाटिक (*Centella asiatica*) की कुल उपज में काफी वृद्धि पाई गई।

कंट्रोल प्लाट (जहां केवल FYM प्रयोग की गई थी), में उगने वाले पौधों का पत्ता क्षेत्र 12.024 cm^2 था, जबकि JA और FYM के संयोजन अनुप्रयोग के साथ उगाए गए पौधों का पत्ती क्षेत्र 16.796 सेमी^{2} था। JA उपचारित खेत में पौधों के पत्ती क्षेत्र में उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई। सेंटेला एशियाटिक (*Centella asiatica*) की कुल उपज की भी गणना की गई थी। कंट्रोल प्लाट के लिए कुल उपज 102 किलोग्राम सूखा वजन/एकड़ थी, जबकि उपचारित भूखंड के लिए कुल उपज 120 किलोग्राम सूखा वजन/एकड़ थी। इस पूरी प्रक्रिया (पौध रोपण, फसल वृद्धि, कटाई, प्रसंस्करण और पैकेजिंग आदि) को चित्र–2 में दिखाया गया है। प्रयोग भूखंड की मिट्टी लाल रेतीली दोमट पाई गई, जिसमें रेत (38–8%), गाद (12.6%) और मिट्टी (48–6%) की संरचना थी। प्रायोगिक अवधि से पहले और बाद में सभी भूखंडों में मिट्टी के भौतिक रासायनिक मापदंडों को भी मापा गया था।. प्रयोग से पहले मिट्टी की क्षारीय पीएच 7.4, विद्युत चालकता (0.21 एस/एम) और कुल कार्बनिक कार्बन (टीओसी) 13.75 ग्राम/किग्रा था। तीन महीने के बाद, JA उपचारित भूखंड में पीएच घटकर 7.2 हो गयी और टीओसी बढ़कर 13.89 ग्राम/किग्रा मिट्टी पाया गया। मिट्टी की विद्युत चालकता (electrical conductivity) में कोई परिवर्तन नहीं मिला।

4. उपसंहार

हमारे प्रयोगों के परिणाम पहले किये गये अध्ययनों (अमरसवारी और सुजाथम्मा, 2014, कुंभ देवकुमार, 2016) के अनुरूप हैं।. JA जो एक समृद्ध माइक्रोबियल कंसोर्टियम है, का अनुप्रयोग पत्ती क्षेत्रफल और कुल उपज के रूप में पौधे की वृद्धि को बढ़ाता है। इसके अलावा, चूंकि कोई रासायनिक कीटनाशक और उर्वरक खेत में नही डाले थे, इसलिए केवल JA के प्रयोग को फसल की उपज में वृद्धि के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। इसके अलावा, इस खेती को किसान मित्र के रूप में माना जा सकता है। हालांकि वर्तमान अध्ययन में विश्लेषण किए गए परिणाम केवल मात्रात्मक हैं, भविष्य में एक विस्तृत गुणात्मक पैरामीटर जैसे कि जैविक रूप से महत्वपूर्ण माध्यमिक मेटाबोलाइट्स (मेडेकोसाइड, एशियाटिकोसाइड, मेडकैसिक एसिड, एशियाई एसिड, आदि) का अध्ययन किया जायेगा। इसके अलावा JA प्रयोग का फसल और मिट्टी के स्वास्थ्य पर दीर्घकालिक प्रभाव का अध्ययन करने की आवश्यकता है।

उपज में वृद्धि आशाजनक है लेकिन औषधीय पौधो की बिक्री के लिए बाजार की उपलब्धता भी किसान के लिए एक बड़ी चुनौती है। उसके लिये किसानों को एक स्टार्टअप ''कवन बायोसॉल्यूशंस'' के साथ जोड़ा जा सकता हे। यह स्टार्टअप ऑनलाइन और ऑफलाइन दोनों में फसल की बिक्री की सुविधा प्रदान करता है। किसान उपरोक्त संशोधित उत्पाद को पास के क्षेत्र में स्थित एक स्थानीय हर्बल स्टोर पर बिक्री कर सकता है, जो कवन बायोसॉल्यूशंस का एक आउटलेट है। हमारे रिसर्च प्रयास के द्वारा वर्तमान में, फसल को 1000 रुपये प्रति कि.ग्रा. में बेचा जा रहा है जो उसकी पिछली आय से लगभग दस गुना अधिक है। इसके अलावा, उसी स्टार्टअप के साथ किसान *Amazon-in* प्लेटफॉर्म पर ऑनलाइन फसल बेच रहा है। इस तरह की व्यवस्था किसान को सशक्त बना कर बिचौलियों के बिना किसान के लाभ को बढ़ाने में मदद कर सकती है। वाणिज्यिक फसलों के अलावा औषधीय पौधों की फसल किसान को एक वैकल्पिक आय प्रदान कर सकती है।. इसके अलावा हमारी नयी एग्रो प्रेक्टिस, औषधीय पौधों की वृद्धि, प्रसंस्करण और पैकेजिंग माध्यम से कई चरणों में महिलाओं को रोजगार देने का अवसर प्रदान करती है। अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि, पारंपरिक ज्ञान जीवामृता (JA) का उपयोग करके सेंटेला एशियाटिक (*Centella asiatica*) जैसे औषधीय पौधों की फसल को बढ़ावा देना एक आशाजनक रणनीति है।

संदर्भ

1. Amareswari, P.U., Sujathamma, P., 2014. Jeevamrutha as an alternative of chemical fertilizers in rice production. Agric. Sci. Dig. - A Res. J. 34, 242. https://doi.org/10.5958/0976-0547.2014.01012.X

2. Gore, N.S., Sreenivasa, M.N., 2011. Influence of liquid organic manures on growth, nutrient content and yield of tomato (Lycopersicon esculentum Mill.) in the sterilized soil. Karnataka J. Agric. Sci. 24, 153-157.

3. Kumbar, B., Devakumar, N., 2016. Effect of Jeevamrutha and Panchagavya on Growth, Yield and Microbial Population of French bean (Phaseolus vulgaris L.). Adv. Life Sci. 5, 3619-3623.

4. Manjunatha, G.S., Upperi, S.N., Pujari, B.T., Yeledahalli, N.A., Kuligod, V.B., 2009. Effect of farm yard manure treated with jeevamrutha on yield attributes, yield and economics of sunflower (Helianthus annuus L.). Karnataka J. Agric. Sci. 22, 198-199.

5. Roy, D.C., Barman, S.K., Shaik, M.M., 2013. Current Updates on Centella asiatica : Phytochemistry, Pharmacology and Traditional Uses. Med. Plant Res. 3, 20-36.

6. Vaish, S., Garg, N., Ahmad, I., 2020. Microbial basis of organic farming systems with special reference to biodynamic preparations. Indian J. Agric. Sci. 90, 1219-25.

एक देश की महानता और नैतिक प्रगति को इस बात से आँका जा सकता है कि वहां जानवरों से कैसे व्यवहार किया जाता है।

—महात्मा गांधी

दुनिया में ऐसे लोग हैं जो इतने भूखे हैं कि भगवान उन्हें किसी और रूप में नहीं दिख सकता। सिवाय रोटी के रूप में।

—महात्मा गांधी





संस्थान में हिन्दी पखवाड़े के दौरान हिन्दी समारोह का आयोजन (वर्ष 2020)
(फोटो संयोजनः सुश्री राजेश कुमारी एवं सुश्री सुनीता देवी)



श्रीमती इन्द्रमणि द्वारा कार्यक्रम का संचालन



सुश्री रत्ना दास द्वारा सरस्वती वंदना



हिन्दी पखवाड़ा, 2020 के दौरान चर्चा करते हुए



हिन्दी पखवाड़ा, 2020 के दौरान चर्चा करते हुए



हिन्दी पखवाड़े के दौरान आयोजित ऑनलाइन कार्यशाला का एक दृश्य
(वक्ताः श्री के.पी. शर्मा, उप निदेशक (राजभाषा विभाग), गृह मंत्रालय)





हिन्दी पखवाड़े के दौरान आयोजित प्रतियोगिताओं के परिणामों की घोषणा



हिन्दी समारोह के अवसर पर निदेशक प्रो. वी. रामगोपाल राव का संबोधन



हिन्दी समारोह के अवसर पर प्रो. अशोक कुमार गांगुली
उप निदेशक (नीति एवं योजना) का संबोधन



श्री महेश कुमार गुलाटी, कार्यकारी कुलसचिव का संबोधन



डॉ. नीरज चौरसिया, अध्यक्ष हिन्दी कक्ष का संबोधन



'जिज्ञासा' हिन्दी विज्ञान जर्नल के 34वें अंक का विमोचन



हिन्दी समारोह 2020 के दौरान चर्चा करते हुए



हिन्दी समारोह–2020 के अवसर पर उपस्थित संकाय/अधिकारीगण



हिन्दी कक्ष परिवार



मुद्रकः कंसप्ट अनलिमिटिड
नई दिल्ली